साहित्य अमृत

मासिक

कार्तिक, संवत्-२०७७ ❖ अक्तूबर २०२०

वर्ष-२६ ❖ अंक-३ ❖ पृष्ठ ८४ | यू.जी.सी.-केयर लिस्ट में उल्लिखित | ISSN 2455-1171

संस्थापक संपादक

पं. विद्यानिवास मिश्र

निवर्तमान संपादक

डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

श्री त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

संस्थापक संपादक (प्रबंध)

श्री श्यामसुंदर

प्रबंध संपादक

पीयूष कुमार

संपादक

लक्ष्मी शंकर वाजपेयी

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

उप संपादक

उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-०२

फोन : ०११-२३२८९७७७

०८४४८६१२२६९

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क

एक अंक—₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

विदेश में

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी पीयूष कुमार द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं न्यू प्रिंट इंडिया प्रा.लि., ८/४-बी, साहिबाबाद इंडस्ट्रियल एरिया, साइट-IV, गाजियाबाद-२०१०१० द्वारा मुद्रित।

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

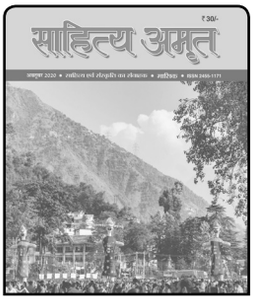

इस अंक में

✍ **संपादकीय**

फेसबुक लाइव···वेबिनार ४

✍ **प्रतिस्मृति**

दुर्गा का मंदिर/ *मुंशी प्रेमचंद* ६

✍ **कहानी**

मुलायम चारा/ *दीपक शर्मा* १९

लॉकडाउन यादव का बाप/ मनीष कुमार मिश्रा ६६

✍ **आलेख**

कश्मीर के इतिहास में रिंचन भोट की भूमिका/ *कुलदीप चंद अग्निहोत्री* २२

कोरोना से दीर्घकालिक सुरक्षा/ *श्रीधर द्विवेदी* ३२

कोरोना काल ने सबको तकनीक सिखा दी/ *बालेंदु शर्मा दाधीच* ३७

निजी अस्पतालों ने नहीं निभाई जिम्मेदारी/ *दीपक सेन* ४२

कोरोना का कालखंड तथा प्रकृति का निखार/ *अंचल गुप्ता* ४६

कोरोना से डरो ना/ *पुष्पा सिन्हा* ५२

उत्तर-कोरोना और नूतन अवसरों का उभार/ *विशेष गुप्ता* ५७

साहित्य में 'स्व' और 'पर'/ *स्मिता मिश्र* ६३

टीकों पर टिका कोरोना/ *शुभ्रता मिश्र* ७०

✍ **लघुकथा**

कोरोना पर पाँच लघुकथाएँ/ *उमेश कुमार चौरसिया* ४०

भाग्य/ *पुष्पेश कुमार पुष्प* ४९

डर/ *संगीता शर्मा* ६५

✍ **कविता**

जाग उठे हैं हम फिर से/ *नरेश टांक* १८

बावला हो गया सूरज/ *धर्मपाल महेंद्र जैन* २१

संकेत सृष्टि-कोविड पर···/ *श्रीधर द्विवेदी* ३३

मित्र/ *शरद नारायण खरे* ४१

दो गलजें/ *अश्वघोष* ५३

चिंता करो मत/ *आर.सी. शुक्ला* ७३

माहिया छंद/ *नरेश शांडिल्य* ७८

✍ **राम झरोखे बैठ के**

कोरोना के आयाम/ *गोपाल चतुर्वेदी* ३४

✍ **व्यंग्य**

लेखक का लॉकडाउन, लॉकडाउन में लेखन/ *प्रेम जनमेजय* १६

कोरोना बनाम सोना/ *सतपाल* ३०

गांधीजी का चश्मा/ *विजय कुमार* ७९

✍ **साहित्य का भारतीय परिपार्श्व**

शुद्ध श्वेत पन्ने में/ *डी.एन. श्रीनाथ* ४४

✍ **रिपोर्ताज**

आफत भरे दिन/ *राजेंद्र राव* ११

✍ **साहित्य का विश्व परिपार्श्व**

कोरोना-चिल्ला/ *दिव्या माथुर* ६०

✍ **यात्रा-संस्मरण**

देशभक्तों का तीर्थ : अंडमान-निकोबार/ *नंदिनी कौशिक* ७४

✍ पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ८०

✍ वर्ग-पहेली ८१

✍ साहित्यिक गतिविधियाँ ८२

फेसबुक लाइव···वेबिनार

जिन्होंने साहित्यिक आयोजन किए हैं, उन्हें आयोजन में होनेवाली विविध प्रकार की चुनौतियों, समस्याओं का खूब पता होगा। सभागार की तलाश—पच्चीस हजार से एक लाख तक का किराया (यदि दिल्ली की बात करें), फिर बैनर, निमंत्रण-पत्र, पुलिस से, अग्निशमन विभाग से, मनोरंजन कर कार्यालय से अनापत्ति; अध्यक्ष, मुख्य अतिथि, वक्ताओं का सम्मान, कुछ के लिए वाहन का प्रबंध, शॉल, मालाएँ, गुलदस्ते, स्मृति-चिन्ह—एक आयोजन में ढेर सारा खर्च भी, कई दिनों की भागदौड़···तरह-तरह के तनाव और फिर सबसे बड़ी समस्या दर्शकों का जुटाना। यदि संध्या भोजन की व्यवस्था न हो तो प्राय: शुरुआत में भले ही १००-१५० लोग हों, कार्यक्रम समाप्त होने तक थोड़े से ही लोग रह जाते हैं। प्राय: अध्यक्ष या मुख्य अतिथि की बारी आते-आते न लोग बचते हैं, न समय। कविता के आयोजनों में अकसर कवियों को एक-दो मिनट की कविता सुनाने का निवेदन भी मिलता है। अब कोरोना के कारण लॉकडाउन के दौरान होनेवाले फेसबुक लाइव अथवा वेबिनार पर गौर करिए।

आप फेसबुक खोलते हैं और मात्र एक उँगली के कोमल स्पर्श से पूरे विश्व से जुड़ जाते हैं या पूरे विश्व के विद्वान्, साहित्यकार, कलाकार आपसे जुड़ जाते हैं। फेसबुक के अतिरिक्त विज्ञान के वरदान-स्वरूप तरह-तरह के 'ऐप' हैं, जहाँ एक 'लिंक' का स्पर्श करते ही आप एक साथ विश्व भर के विद्वानों से सीधा संवाद कर सकते हैं। कितने ही प्रकाशक हैं, साहित्यिक संस्थाएँ हैं, जो इन तीन-चार महीनों में ही विविध विषयों पर सैकड़ों आयोजन कर चुकी हैं। फेसबुक के निजी पेज पर भी एक दिन में ६-६ फेसबुक लाइव हो रहे हैं। जिस कवि को बस १-२ मिनट में ही कविता सुनाने को कहा जाता था, वही अब पूरे एक घंटे मनचाही कविताएँ सुना रहा है, सुननेवाले सैकड़ों या हजारों में हैं और भारत ही नहीं भारत के बाहर भी। साहित्य का शायद ही कोई विषय हो, जिसपर चर्चा न हुई हो! लॉकडाउन में घर पर होने की विवशता के चलते ख्यातिलब्ध कवियों ने युवा कवियों या जिनके रचनाकर्म से अधिक परिचित नहीं थे, ठीक से सुना-जाना। युवा रचनाकारों ने ख्यातिलब्ध साहित्यकारों को सुनकर प्रेरणा प्राप्त की तथा बहुत कुछ सीखा। पिछले दिनों प्रख्यात बुजुर्ग कथालेखिका मालती जोशीजी ने बड़े बेटे की सहायता से फेसबुक के माध्यम से कहानी पाठ किया जो २०-२५ हजार लोगों ने देश-विदेश से देखा, क्या ऐसा गोष्ठियों में संभव था? यह अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि इस कोरोना काल में जितने छोटे-बड़े साहित्यिक आयोजन ४-५ माह में हुए हैं, वे पिछले ७० वर्षों में हुए आयोजनों से कई गुना निकलेंगे। हम सभी रचनाकारों को विज्ञान एवं तकनीक तथा उसके आविष्कारों के प्रति नमन करना चाहिए। यह कल्पना करना कठिन है कि यदि फेसबुक लाइव तथा वेबिनार के साधन नहीं होते तो यह घर में बंद होना क्या परिणाम देता!

भगवान् श्रीराम का देश

भगवान् श्रीराम भारत की पहचान हैं। तुलसी ने रामचरितमानस के जरिए उन्हें गाँव-गाँव तक पहुँचा दिया। लाखों घरों में रामचरितमानस का अखंड पाठ होता है, ऐसा गौरव विश्व भर में शायद ही किसी काव्यरचना को उपलब्ध हो। पिछले दिनों दूरदर्शन पर रामायण का पुनर्प्रसारण हुआ तो चैनलों की लोकप्रियता के सारे कीर्तिमान ध्वस्त हो गए। राम के नाम का जादू ही ऐसा है। बचपन से दशहरे के मेलों में उमड़े जनसमूह को देखा है। जब कस्बों में रामलीला होती थी, आसपास के गाँवों से लोग बैलगाड़ियों में आया करते थे, तब

भी और महानगरों में ८०० से अधिक टी.वी. चैनलों के बावजूद रावणवध देखने अपार जनसमूह उमड़ता है, तब भी!

इसे भीड़ माननेवाले लोग सही नहीं सोच पाते। यह अपार जनसमुद्र असत्य, अन्याय, अत्याचार और बुराई का सांकेतिक ही सही, 'अंत' देखने को उमड़ता है। अच्छाई और सच्चाई को अपना समर्थन देने की बुराई कितनी ही शक्तिशाली हो तथा अच्छाई कितनी ही साधनहीन—जीत अच्छाई की ही होगी। राम का यही जादू है कि विश्व की हर बड़ी भाषा में रामकथा का अनुवाद हुआ है।

दुनिया के सबसे बड़े मुसलिम देश इंडोनेशिया में राम पूरे देश के वंदनीय महापुरुष हैं। बौद्ध देश थाईलैंड में राजा 'राम' की उपाधि धारण करता है। उनका विश्वास है कि अयोध्या थाईलैंड में है। थाई एयरवेज में उड़ान भरते हुए मैंने हर सीट पर चित्रकथा के रूप में रामकथा देखी थी। मुसलिम देश मलेशिया में नौसेना प्रमुख को 'लक्ष्मण' कहा जाता है। दुनिया के १००० से अधिक शहरों-कस्बों के नाम राम के नाम पर हैं, चाहे वे ईसाई देश हों या इसलामी या बौद्ध!

कुल गरज यह कि राम पूरी मानवता के हैं, उन्हें जो भी किसी संकुचित दायरे में बाँधने का प्रयास करता है, वह अनुचित कार्य करता है। हर दशहरे वाले दिन हम एक ही बात वर्षों से सुनते आ रहे हैं, चाहे कविताओं में या प्रवचनों में या मेले में पहुँचे राजनेताओं से, "हमें मन के रावण को मारना है!" हम बस बोलते और सुनते ही रहे, किंतु रावण का पुतला हर वर्ष और अधिक ऊँचा होता गया। अपराध न केवल संख्या में बढ़ते गए, वरन् उनकी भयावहता भी बढ़ती गई! किसी जमाने में चंबल के दस्यु भी कुछ मर्यादाओं का पालन करते थे, किंतु अब अपराधों की ऐसी-ऐसी खबरें मिलती हैं कि दिल दहल जाता है! राम के देश में यदि नन्हीं-नन्हीं बच्चियाँ दुष्कर्म का शिकार होती हैं तो रावण-वध पर प्रसन्न होने का क्या अर्थ! पिता की आज्ञा पर १४ वर्ष के वनवास को सहर्ष स्वीकार करने वाले राम के देश में यदि वृद्धाश्रमों की संख्या बढ़ती जा रही है तो फिर राम के प्रति कैसा सम्मान दिखा रहे हैं हम! राम और सीता के आदर्श वाले देश में यदि अदालतों में तलाक तथा विवाह-विच्छेद के लाखों मुकदमे चल रहे हैं तो यह विचारणीय प्रश्न है। राजतंत्र के बावजूद मात्र एक साधारण से नागरिक के आक्षेप पर राम यदि लोकमत के सम्मान के लिए सती सीता का परित्याग का आदर्श प्रस्तुत करते हैं तो विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र भारत में किसी प्रकार की अनैतिकता, सत्ता के लिए जोड़-तोड़ या लोकमत की अवहेलना को कैसे स्वीकारा जा सकता है! प्रश्न यही है कि क्या हमारे मन के रावण को मारने के लिए मंगल ग्रह से कोई अवतरित होगा! मन के रावण को तो 'आत्मावलोकन' करके हमें स्वयं ही नियंत्रित करना होगा। तभी हम सही अर्थों में 'राम के देश' के वासी होने का गौरव प्राप्त करेंगे।

अक्तूबर अंक

'साहित्य अमृत' के रजत जयंती विशेषांक के संबंध में अनेक वरिष्ठ साहित्यकारों-विद्वानों से जो प्रतिक्रियाएँ मिली हैं, उनसे 'साहित्य अमृत' के प्रकाशन से जुड़े सभी लोगों को संतोष तथा हर्ष की अनुभूति हुई है और संबल भी मिला है। अक्तूबर अंक में प्रख्यात कथाकार राजेंद्र रावजी का रिपोर्ताज प्रकाशित हो रहा है, रिपोर्ताज विधा अब विलुप्तप्राय सी हो रही है। किसी एक काव्य विधा पर जानकारी दी जा रही है। आशा है, हमें युवा रचनाकार माहिये प्रेषित करेंगे और अपनी मिट्टी से उपजी इस विधा को पुष्पित-पल्लवित करेंगे। रचनाकार हर पीड़ा या हर्ष से प्रभावित होता है तथा उसे अपने शब्दों में व्यक्त करता है। कोरोना जैसी भयावह महामारी से रचनाकार का प्रभावित होना भी स्वाभाविक था। कोरोना पर हमें अनेक रचनाएँ प्राप्त हुईं। जहाँ कुछ लोगों ने लॉकडाउन का मातम मनाया, अवसाद में चले गए या आत्मघात तक कर लिया, सकारात्मक दृष्टिकोण रखने वाले रचनाकारों ने लॉकडाउन का भरपूर लाभ उठाया और आपदा को अवसर में बदला। कुछ ने उपन्यास लिख डाले, कुछ ने अधूरे नाटक या कहानियाँ पूरी कर लीं। हंसराज कॉलेज, दिल्ली की प्राचार्या डॉ. रमा ने दो महत्त्वपूर्ण ग्रंथनुमा पुस्तकें लिख दीं—एक सिनेमा और साहित्य पर तो दूसरी सिनेमा और स्त्री-जीवन पर। अपने मन में हम ही अपना स्वर्ग-नर्क रच लेते हैं। कोरोने पर विशेष रचनाएँ इस अंक में प्रकाशित की जा रही हैं।

इस बीच भारतीय कला-संस्कृति को मूल्यवान योगदान देनेवाली पद्मविभूषण से सम्मानित डॉ. कपिला वात्स्यायन देहमुक्त हो गईं, 'साहित्य अमृत' की उन्हें विनम्र श्रद्धांजलि!

(लक्ष्मी शंकर वाजपेयी)

दुर्गा का मंदिर

● मुंशी प्रेमचंद

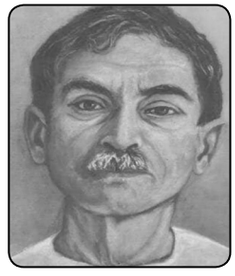

प्रेमचंद ने उर्दू से हिंदी में आने का निश्चय कर लिया तो उनकी पहली हिंदी कहानी 'परीक्षा' विजयदशमी पर 'प्रताप' में अक्तूबर १९१४ में प्रकाशित हुई। इसके बाद उनकी 'सरस्वती' पत्रिका में 'सौत' (दिसंबर १९१५), 'सज्जनता का दंड' (मार्च १९१६), 'ईश्वरी न्याय' (जुलाई १९१७) तथा 'दुर्गा का मंदिर' (दिसंबर १९१७) में प्रकाशित हुईं। इन कहानियों से प्रेमचंद हिंदी के एक लोकप्रिय कहानीकार बन गए। यहाँ उनकी कहानी 'दुर्गा का मंदिर' प्रस्तुत है, जो एक हिंदू पति-पत्नी को देवी दुर्गा के संदेश/आदेश से सत्मार्ग की ओर ले जाती है और वे पराए धन को पाप-धन मानकर उसके स्वामी को लौटा देते हैं तथा आत्मिक सुख प्राप्त करते हैं। आज के कुछ अंग्रेजी पढ़े-लिखे पाठक इसे अंधविश्वास और मूर्खता कह सकते हैं, लेकिन हिंदू-समाज आज भी पराया धन हो या बेटी का धन, लेना पाप मानता है।

यह कहानी पूर्णत: हिंदू-समाज के परंपरागत नैतिक विश्वास पर आधारित है। हिंदू-समाज का यह नैतिक विश्वास है कि पराए धन को रखना पाप है। पर-स्त्री एवं पर-धन के प्रति ऐसी ही कठोर नैतिकता रही है। यह कहानी इसी नैतिकता को स्थापित करती है। बाबू ब्रजनाथ इलाहाबाद हाईकोर्ट में अनुवादक थे, परंतु उन्नति के लिए कानून की पढ़ाई कर रहे थे। नैतिक सिद्धांतों के ज्ञाता थे, लेकिन उनके पालन में शिथिल थे। एक दिन उन्हें पार्क में एक पुड़िया में आठ गिन्नी मिलीं तो वे दुविधा में फँस गए। वे पुलिस थाने में जमा कराने की सोचते-सोचते घर ले आए और पत्नी मिले धन को छोड़ना नहीं चाहती थी। ब्रजनाथ के लिए पराया धन गले की फाँसी के समान था, परंतु वे फँसते चले गए। उन्हें अपने मित्र गोरेलाल को उसकी सहायता के लिए दो गिन्नी देनी पड़ गईं और वह वायदे पर लौटाने नहीं आया। इस पर ब्रजनाथ और अधिक मेहनत करके धन एकत्र करने में लग गए, जिससे धन लौटाया जा सके। अधिक मेहनत से वह बीमार पड़े तो उनकी पत्नी भामा ने सोचा कि यह कष्ट पराए धन के कारण तो नहीं आया है? उसने नवरात्र का कठिन व्रत रखा और दुर्गा की मूर्ति के सम्मुख बैठकर दया की भीख माँगी तो उसे प्रतीत हुआ कि देवी उससे कह रही है कि पराया धन लौटा दे, तेरा भला होगा। इसी समय एक वृद्धा आई और देवी से प्रार्थना करते हुए बोली कि जिसने मेरा धन लिया हो, उसका सर्वनाश हो जाए। भामा को ज्ञात हो गया कि वे आठ गिन्नियाँ इसी बूढ़ी औरत की हैं। उसने बुढ़िया को सारी बात बातई तथा उसकी गिन्नियाँ लौटा दीं। लेखक के अनुसार, भामा को आज आत्मा का आनंद मिला। बुढ़िया ने दोनों को आशीर्वाद दिया और एक दिन गोरेलाल भी दो गिन्नियाँ लौटा गए।

इस कहानी में नैतिकता की रक्षा के लिए धर्म का उपयोग किया गया है। मंदिर में दुर्गा की मूर्ति भामा को पराया धन लौटाने को प्रेरित करती है। लेखक ने इसे मनोवैज्ञानिक आधार दिया है। भामा के मन में पाप का भय है तथा पति की अस्वस्थता से अनिष्ट के होने की संभावना है। ऐसी स्थिति में भामा धर्म की ओर उन्मुख होती है और वह नवरात्र का व्रत रखती है, दवी की पूजा करती है तथा वह अपने अंत:करण में स्वर्गलोक की ध्वनि सुनती है। आप-हम भले इसे कपोल-कल्पना कहें, परंतु हिंदू-समाज का साधारण व्यक्ति अनेक बार इसी मन:स्थिति से गुजरता है। प्रेमचंद धर्म का उपयोग मनुष्य को सन्मार्ग की ओर उन्मुख करने के लिए करते हैं और इसके लिए किसी भी मार्क्सवादी को क्यों आपत्ति होनी चाहिए! कहानी का प्रतिपाद्य यही है कि पराए धन का उपयोग पाप है, संतोष सबसे बड़ा धन है तथा इसके सम्मुख सब धन धूली समान हैं। यही लोक-विश्वास कहानी की बुनियाद है और यह लेखक को भारतीयता का अंग बनाता है। प्रेमचंद की हिंदू आस्थाओं और नैतिक एवं मानवीय मूल्यों में पूरी आस्था थी और उन्होंने पौराणिक विश्वासों का चरित्र विकास एवं मनुष्यता के उत्कर्ष के लिए कई कहानियों में उपयोग किया था। प्रेमचंद हिंदू जीवन की कहानियाँ लिख रहे थे तो उनकी रचनाओं में हिंदू जीवन के लोकविश्वासों एवं नैतिक आस्थाओं का सहज रूप से आना स्वाभाविक था। 'वरदान' उपन्यास (१९२०) में तो एक स्त्री पात्र देवी से देशप्रेमी पुत्र होने का वरदान माँगती है और देवी प्रकट होकर उसे वरदान देती हैं। यह ध्यान रहे कि प्रेमचंद हिंदू धर्म की जड़ताओं की आलोचना में भी पीछे नहीं हैं। उनका साहित्य-सिद्धांत है—'मंगल भवन अमंगल हारी।' उनमें तुलसी की अनुगूँज सुनाई पड़ती है।

□

बाबू ब्रजनाथ कानून पढ़ने में मग्न थे और उनके दोनों बच्चे लड़ाई करने में। श्यामा चिल्लाती कि मुन्नू मेरी गुड़िया नहीं देता। मुन्नू रोता था कि श्यामा ने मेरी मिठाई खा ली।

ब्रजनाथ ने क्रुद्ध होकर भामा से कहा, "तुम इन दुष्टों को यहाँ से हटाती हो कि नहीं? नहीं तो मैं एक-एक की खबर लेता हूँ।"

भामा चूल्हे में आग जला रही थी; बोली, "अरे, तो अब क्या संध्या को भी पढ़ते ही रहोगे? जरा दम तो ले लो।"

ब्रजनाथ—"उठा तो न जाएगा; बैठी-बैठी वहीं से कानून बघारोगी! अभी एक-आध को पटक दूँगा तो वहाँ से गरजती हुई आओगी कि हाय-हाय! बच्चे को मार डाला।"

भामा—"तो मैं कोई बैठी या सोई तो नहीं हूँ। जरा एक घड़ी तुम्हीं लड़कों को बहलाओगे, तो क्या होगा! कुछ मैंने ही तो उनकी नौकरी नहीं लिखाई!"

ब्रजनाथ से कोई जवाब देते न बन रहा था। क्रोध पानी के समान बहाव का मार्ग न पाकर और भी प्रबल हो जाता है। यद्यपि ब्रजनाथ नैतिक सिद्धांतों के ज्ञाता थे, पर उनके पालन में इस समय कुशल न दिखाई दी। मुद्दई और मुद्दालेह, दोनों को एक ही लाठी हाँका और दोनों को रोते-चिल्लाते छोड़, कानून का ग्रंथ बगल में दबा कॉलेज-पार्क की राह ली।

□

सावन का महीना था। आज कई दिन के बाद बादल हटे थे। हरे-भरे वृक्ष सुनहरी चादरें ओढ़े खड़े थे। मृदु समीर सावन के राग गाती थी और बगले डालियों पर बैठे हिंडोले झूल रहे थे। ब्रजनाथ एक बेंच पर जा बैठे और किताब खोली; लेकिन इस ग्रंथ की अपेक्षा प्रकृति-ग्रंथ का अवलोकन अधिक चित्ताकर्षक था। कभी आसमान को पढ़ते थे, कभी पत्तियों को, कभी छविमयी हरियाली को और कभी सामने मैदान में खेलते हुए लड़कों को।

एकाएक उन्हें सामने घास पर कागज की एक पुड़िया दिखाई दी। माया ने जिज्ञासा कि आड़ में चलो, देखें, इसमें क्या है?

बुद्धि ने कहा—तुमसे मतलब? पड़ी रहने दो।

लेकिन जिज्ञासारूपी माया की जीत हुई। ब्रजनाथ ने उठकर पुड़िया उठा ली। कदाचित् किसी के पैसे पुड़िया में लिपटे गिर पड़े हैं। खोलकर देखा; सावरेन थे! गिना, पूरे आठ निकले। कुतूहल की सीमा न रही।

ब्रजनाथ की छाती धड़कने लगी। आठों सावरेन हाथ में लिये सोचने लगे, 'इन्हें क्या करूँ? अगर यहीं रख दूँ तो न जाने किसकी नजर पड़े; न मालूम कौन उठा ले जाए! नहीं, यहाँ रखना उचित नहीं। चलूँ, थाने में इत्तला कर दूँ और ये सावरेन थानेदार को सौंप दूँ। जिसके होंगे, वह आप ही ले जाएगा; या अगर उसे न भी मिले तो मुझ पर कोई दोष न रहेगा; मैं तो अपने उत्तरदायित्व से मुक्त हो जाऊँगा।'

माया ने परदे की आड़ से मंत्र मारना शुरू किया। वे थाने नहीं गए, सोचा, 'चलूँ, भामा से एक दिल्लगी करूँ। भोजन तैयार होगा। कल इतमीनान से थाने जाऊँगा।'

भामा ने सावरेन देखे, हृदय में एक गुदगुदी सी हुई। पूछा, "किसकी हैं?"

ब्रजनाथ—"मेरी।"

भामा—"चलो, कहीं हों न।"

ब्रजनाथ—"पड़ी मिली हैं।"

भामा—"झूठी बात। ऐसे ही भाग्य के बली हो तो सच बताओ कहाँ मिलीं? किसकी हैं?"

ब्रजनाथ—"सच कहता हूँ, पड़ी मिली हैं।"

भामा—"मेरी कसम?"

ब्रजनाथ—"तुम्हारी कसम।"

भामा गिन्नियों को पति के हाथ से छीनने की चेष्टा करने लगी।

ब्रजनाथ ने कहा, "क्यों छीनती हो?"

भामा—"लाओ, मैं अपने पास रख लूँ।"

ब्रजनाथ—"रहने दो, मैं इनकी इत्तला करने थाने जाता हूँ।"

भामा का मुख मलिन हो गया। बोली, "पड़े हुए धन की क्या इत्तला?"

ब्रजनाथ—"हाँ, और क्या, इन आठ गिन्नियों के लिए ईमान बिगाड़ूँ न?"

भामा—"अच्छा, तो सवेरे चले जाना। इस समय जाओगे, तो आने में देर होगी।"

ब्रजनाथ ने भी सोचा, 'यही अच्छा है। थानेवाले रात को तो कोई कररवाई करेंगे नहीं। जब अशर्फियों को पड़ा ही रहना है, तब जैसे थाना, वैसे मेरा घर।'

गिन्नियाँ संदूक में रख दीं। खा-पीकर लेटे तो भामा ने हँसकर कहा, "आया धन क्यों छोड़ते हो? लाओ, मैं अपने लिए एक गुलूबंद बनवा लूँ, बहुत दिनों से जी तरस रहा है।"

माया ने इस समय हास्य का रूप धारण किया था।

ब्रजनाथ ने तिरस्कार करके कहा, "गुलूबंद की लालसा में गले में फाँसी लगाना चाहती हो क्या?"

□

प्रात:काल ब्रजनाथ थाने जाने के लिए तैयार हुए। कानून का एक लैक्चर छूट जाएगा, कोई हरज नहीं। इलाहाबाद के हाईकोर्ट में अनुवादक थे। नौकरी में उन्नति की आशा न देखकर साल भर से वकालत की तैयारी में मग्न थे। लेकिन अभी कपड़े पहन ही रहे थे कि उनके एक मित्र मुंशी गोरेलाल आकर बैठ गए और अपनी पारिवारिक दुश्चिंताओं की विस्तृत रामकहानी सुनाकर अत्यंत विनीत भाव से बोले, "भाई साहब, इस समय मैं इन झंझटों में ऐसा फँस गया हूँ कि बुद्धि कुछ काम नहीं करती। तुम बड़े आदमी हो। इस समय कुछ सहायता करो। ज्यादा नहीं, तीस रुपए दे दो। किसी-न-किसी तरह काम चला लूँगा। आज ३० तारीख है। कल शाम को तुम्हें रुपए मिल जाएँगे।"

ब्रजनाथ बड़े आदमी तो न थे, किंतु बड़प्पन की हवा बाँध रखी थी। यह मिथ्याभिमान उनके स्वभाव की एक दुर्बलता थी। केवल अपने वैभव का प्रभाव डालने के लिए ही वे बहुधा मित्रों की छोटी-मोटी आवश्यकताओं पर अपनी वास्तविक आवश्यकताओं को निछावर कर दिया करते थे, लेकिन भामा को इस विषय में उनसे सहानुभूति न थी। इसीलिए जब ब्रजनाथ पर इस प्रकार का संकट आ पड़ता था, तब थोड़ी देर के लिए उनकी पारिवारिक शांति अवश्य नष्ट हो जाती थी। उनमें इनकार करने या टालने की हिम्मत न थी।

वे कुछ सकुचते हुए भामा के पास गए और बोले, "तुम्हारे पास तीस रुपए तो न होंगे? मुंशी गोरेलाल माँग रहे हैं।"

भामा ने रुखाई से कहा, "मेरे पास रुपए नहीं हैं।"

ब्रजनाथ—"होंगे तो जरूर, बहाना करती हो!"

भामा—"अच्छा, बहाना ही सही।"

ब्रजनाथ—तो मैं उनसे क्या कह दूँ?

भामा—"कह दो कि घर में रुपए नहीं हैं। और तुमसे न कहते बने तो मैं परदे की आड़ से कह दूँ!"

ब्रजनाथ—"कहने को तो मैं कह दूँ, लेकिन उन्हें विश्वास न आवेगा। समझेंगे, बहाना कर रहे हैं।"

भामा—"समझेंगे तो समझा करें।"

ब्रजनाथ—"मुझसे तो ऐसी बेमुरौवती नहीं हो सकती। रात-दिन का साथ ठहरा, कैसे इनकार करूँ?"

भामा—"अच्छा, तो जो मन में आवे, सो करो। मैं एक बार कह चुकी, मेरे पास रुपए नहीं हैं।"

ब्रजनाथ मन में बहुत खिन्न हुए। उन्हें विश्वास था कि भामा के पास रुपए हैं; लेकिन केवल मुझे लज्जित करने के लिए इनकार कर रही है। दुराग्रह ने संकल्प को दृढ़ कर दिया। संदूक से दो गिन्नियाँ निकालीं और गोरेलाल को देकर बोले, "भाई, कल शाम को कचहरी से आते ही रुपए दे जाना। ये एक आदमी की अमानत हैं। मैं इसी समय देने जा रहा था, यदि कल रुपए न पहुँचे तो मुझे बहुत लज्जित होना पड़ेगा; कहीं मुँह दिखाने योग्य न रहूँगा।"

गोरेलाल ने मन में कहा, 'अमानत स्त्री के सिवा और किसकी होगी।' और गिन्नियाँ जेब में रखकर घर की राह ली।

□

आज पहली तारीख की संध्या है। ब्रजनाथ दरवाजे पर बैठे गोरेलाल का इंतजार कर रहे हैं।

पाँच बज गए, गोरेलाल अभी तक नहीं आए। ब्रजनाथ की आँखें रास्ते की तरफ लगी हुई थीं। हाथ में एक पत्र था, लेकिन पढ़ने में जी न लगता था। हर तीसरे मिनट रास्ते की ओर देखने लगते थे। लेकिन सोचते थे, 'आज वेतन मिलने का दिन है, इसी कारण आने में देर हो रही है; आते ही होंगे।' छह बजे, पर गोरेलाल का पता नहीं। कचहरी के कर्मचारी एक-एक करके चले आ रहे थे। ब्रजनाथ को कई बार धोखा हुआ, 'वह आ रहे हैं। जरूर वही हैं। वैसी ही अचकन है, वैसी ही टोपी। चाल भी वही है। हाँ, वही हैं। इसी तरफ आ रहे हैं।' अपने हृदय से एक बोझा सा उतरता मालूम हुआ, लेकिन निकट आने पर ज्ञात हुआ कि कोई और है। आशा की कल्पित मूर्ति दुराशा में बदल गई।

ब्रजनाथ का चित्त खिन्न होने लगा। वे एक बार कुरसी से उठे और बरामदे की चौखट पर खड़े हो सड़क पर दोनों तरफ निगाह दौड़ाई। कहीं पता नहीं।

दो-तीन बार दूर से आते हुए इक्कों को देखकर गोरेलाल को भ्रम हुआ। आकांक्षा की प्रबलता!

सात बजे। चिराग जल गए। सड़क पर अँधेरा छाने लगा। ब्रजनाथ सड़क पर उद्विग्न भाव से टहलने लगे। इरादा हुआ, गोरेलाल के घर चलूँ। उधर कदम बढ़ाए, लेकिन हृदय काँप रहा था कि कहीं वे रास्ते में आते हुए न मिल जाएँ, तो समझें कि थोड़े से रुपयों के लिए इतने व्याकुल हो गए। थोड़ी ही दूर गए कि किसी को आते देखा। भ्रम हुआ, गोरेलाल हैं। मुड़े और सीधे बरामदे में आकर दम लिया। लेकिन फिर वही धोखा! फिर वही भ्रांति! तब सोचने लगे कि इतनी देर क्यों हो रही है? क्या अभी तक वे कचहरी से न आए होंगे? ऐसा कदापि नहीं हो सकता। उनके दफ्तरवाले मुद्दत हुई, निकल गए। बस दो बातें हो सकती हैं—या तो उन्होंने कल आने का निश्चय कर लिया, समझे होंगे, रात को कौन जाए, या जान-बूझकर बैठ रहे होंगे, देना न चाहते होंगे। उस समय उनको गरज थी, इस समय मुझे गरज है। मैं ही किसी को क्यों न भेज दूँ? लेकिन किसे भेजूँ! मन्नू जा सकता है। सड़क पर ही मकान है। यह सोचकर कमरे में गए, लैंप जलाया और पत्र लिखने बैठे; मगर आँखें द्वार ही की ओर लगी हुई थीं। अकस्मात् किसी के पैरों की आहट सुनाई दी। तुरंत पत्र को एक किताब के नीचे दबा लिया और बरामदे में चले आए। देखा, पड़ोस का एक कुँजड़ा तार पड़ाने आया है। उससे बोले, "भाई, इस समय फुरसत नहीं है, थोड़ी देर में आना।" उसने कहा, "बाबूजी, घर भर के आदमी घबराए हैं, जरा एक निगाह देख लीजिए।" निदान ब्रजनाथ ने झुँझलाकर उसके हाथ से तार ले लिया और सरसरी नजर से देखकर बोले, "कलकत्ते से आया है, माल नहीं पहुँचा।" कुँजड़े ने डरते-डरते कहा, "बाबूजी, इतना और देख लीजिए कि किसने भेजा है!" इस पर ब्रजनाथ ने तार को फेंक दिया और बोले, "मुझे इस वक्त फुरसत नहीं है।"

आठ बज गए। ब्रजनाथ को निराशा होने लगी। मन्नू इतनी रात बीते नहीं जा सकता। मन ने निश्चय किया कि आप ही जाना चाहिए; बला से बुरा मानेंगे। इसकी कहाँ तक चिंता करूँ? स्पष्ट कह दूँगा, मेरे रुपए दे दो। भलमनसी भलेमानसों से निभाई जा सकती है। ऐसे धूर्तों के साथ भलमनसी का व्यवहार करना मूर्खता है। अचकन पहनी और घर में जाकर भामा से कहा, "जरा एक काम से बाहर जाता हूँ, किवाड़ बंद कर लो।"

चलने को तो चले, लेकिन पग-पग पर रुकते जाते थे। गोरेलाल का घर दूर से दिखाई दिया; लैंप जल रहा था। ठिठक गए और सोचने लगे कि चलकर क्या कहूँगा? कहीं उन्होंने जाते-जाते रुपए निकालकर दे दिए और देर के लिए क्षमा माँगी तो मुझे बड़ी झेंप होगी। वे मुझे क्षुद्र,

ओछा, धैर्यहीन समझेंगे। नहीं, रुपयों की बातचीत करूँ ही क्यों? कहूँगा कि भाई, घर में बड़ी देर से पेट दर्द कर रहा है। तुम्हारे पास पुराना तेज सिरका तो नहीं है? मगर नहीं, यह बहाना कुछ भद्दा-सा प्रतीत होता है। साफ कलई खुल जाएगी। उँह! इस झंझट की जरूरत ही क्या है। वे मुझे देखकर आप ही समझ जाएँगे। इस विषय में बातचीत की कुछ नौबत ही न आएगी। ब्रजनाथ इसी उधेड़-बुन में आगे बढ़ते चले जा रहे थे, जैसे नदी की लहरें चाहे किसी ओर चलें, धारा अपना मार्ग नहीं छोड़ती।

गोरेलाल का घर आ गए। द्वार बंद था। ब्रजनाथ को उन्हें पुकारने का साहस न हुआ। समझे, खाना खा रहे होंगे। दरवाजे के सामने से निकले और धीरे-धीरे टहलते हुए एक मील तक चले गए। नौ बजने की आवाज कान में आई। गोरेलाल भोजन कर चुके होंगे, यह सोचकर लौट पड़े; लेकिन द्वार पर पहुँचे तो अँधेरा था। वह आशारूपी दीपक बुझ गया था। एक मिनट तक दुविधा में खड़े रहे। क्या पुकारूँ? हाँ, अभी बहुत सवेरा है। इतनी जल्दी थोड़े ही सो गए होंगे! दबे पाँव बरामद पर चढ़े। द्वार पर कान लगाकर सुना। चारों ओर ताक रहे थे कि कहीं कोई देख न ले। कुछ बातचीत की भनक कान में पड़ी। ध्यान से सुना। स्त्री कह रही थी, "रुपए तो सब उठ गए, ब्रजनाथ को कहाँ से दोगे?" गोरेलाल ने उत्तर दिया, "ऐसी कौन सी उतावली है, फिर दे देंगे, आज दरख्वास्त दे दी है, कल मंजूर ही हो जाएगी। तीन महीने के बाद लौटेंगे, तब देखा जाएगा।"

ब्रजनाथ को ऐसा जान पड़ा, मानो मुँह पर किसी ने तमाचा मार दिया। क्रोध और नैराश्य से भरे हुए बरामदे से उतर आए। घर चले तो सीधे कदम न पड़ते थे, जैसे कोई दिन भर का थका-माँदा पथिक हो।

□

ब्रजनाथ रात भर करवटें बदलते रहे। कभी गोरेलाल की धूर्तता पर क्रोध आता था, कभी अपनी सरलता पर। 'मालूम नहीं, किस गरीब के रुपए हैं! उस पर क्या बीती होगी!' लेकिन अब क्रोध या खेद से क्या लाभ? सोचने लगे, 'रुपए कहाँ से आएँगे; भामा पहले ही इनकार कर चुकी है; वेतन में इतनी गुंजाइश नहीं। दस-पाँच रुपए की बात होती तो कोई कतरब्योंत करता। तो क्या करूँ? किसी से उधार लूँ? मगर मुझे कौन देगा? आज तक किसी से माँगने का संयोग नहीं पड़ा और अपना कोई ऐसा मित्र है भी तो नहीं! जो लोग हैं, वे मुझे ही को सताया करते हैं; मुझे क्या देंगे, हाँ, यदि कुछ दिन कानून छोड़कर अनुवाद करने में परिश्रम करूँ तो रुपए मिल सकते हैं। कम-से-कम एक मास का कठिन परिश्रम है। सस्ते अनुवादकों के मारे दर भी तो गिर गई है। हाय, निर्दयी! तूने बड़ी दगा की। न जाने किस जन्म का वैर चुकाया! कहीं का न रखा!'

दूसरे दिन से ब्रजनाथ को रुपयों की धुन सवार हुई। सवेरे कानून के लैक्चर में सम्मिलित होते, संध्या को कचहरी से तजवीजों का पुलिंदा घर लाते और आधी रात तक बैठे अनुवाद किया करते। सिर उठाने तक की मोहलत न मिलती। कभी एक-दो भी बज जाते। जब मस्तिष्क बिल्कुल शिथिल हो जाता, तब विवश होकर चारपाई पर पड़े रहते।

लेकिन इतने परिश्रम का अभ्यास न होने के कारण कभी-कभी सिर में दर्द होने लगता। कभी पाचनक्रिया में विघ्न पड़ जाता, कभी ज्वर चढ़ आता। तिस पर भी वे मशीन की तरह काम में लगे रहते। भामा कभी-कभी झुँझलाकर कहती, "अजी, लेट भी रहो; बड़े धर्मात्मा बने हो। तुम्हारे जैसे दस-पाँच आदमी और होते तो संसार का काम ही बंद हो जाता।" ब्रजनाथ इस बाधाकारी व्यंग्य का उत्तर न देते। दिन निकलते ही फिर वही चरखा ले बैठते।

यहाँ तक कि तीन सप्ताह बीत गए और २५ रुपए हाथ आ गए। ब्रजनाथ सोचते थे कि दो-तीन दिन में बेड़ा पार है। लेकिन इक्कीसवें दिन उन्हें प्रचंड ज्वर चढ़ आया और तीन दिन तक न उतरा। छुट्टी लेनी पड़ी। वे शय्या-सेवी बन गए। भादों का महीना था। भामा ने समझा, पित्त का प्रकोप है। लेकिन जब एक सप्ताह तक डॉक्टर की औषधि सेवन करने पर भी ज्वर न उतरा, तब वह घबराई। ब्रजनाथ प्राय: ज्वर में बक-झक भी करने लगते। भामा सुनकर डर के मारे कमरे में से भाग जाती। बच्चों को पकड़कर दूसरे कमरे में बंद कर देती। अब उसे शंका होने लगती थी कि कहीं यह कष्ट उन्हीं रुपयों के कारण तो नहीं भोगना पड़ रहा है! कौन जाने, रुपएवाले ने क्या कर-धर दिया हो! जरूर यही बात है; नहीं तो औषधि से लाभ क्यों नहीं होता?

संकट पड़ने पर हम धर्मभीरु हो जाते हैं, औषधियों से निराश होकर देवतों की शरण लेते हैं। भामा ने भी देवतों की शरण ली। वह जन्माष्टमी, शिवरात्रि और तीज के सिवा और कोई व्रत न रखती थी। इस बार उसने नवरात्र का कठिन व्रत शुरू किया।

आठ दिन पूरे हो गए। अंतिम दिन आया। प्रभात का समय था। भामा ने ब्रजनाथ को दवा पिलाई और दोनों बालकों को लेकर दुर्गाजी की पूजा करने मंदिर में चली। उसका हृदय आराध्य देवी के प्रति श्रद्धा से परिपूर्ण था। मंदिर के आँगन में पहुँची। उपासक आसनों पर बैठे हुए दुर्गा-पाठ कर रहे थे। धूप और अगरु की सुगंध उड़ रही थी। उसने मंदिर में प्रवेश किया। सामने दुर्गा की विशाल प्रतिमा शोभायमान थी। उसके मुखारविंद पर एक विलक्षण दीप्ति झलक रही थी। बड़े उज्ज्वल नेत्रों से प्रभा की किरणें छिटक रही थीं। पवित्रता का एक समा सा छाया हुआ था। भामा इस दीप्तिपूर्ण मूर्ति के सम्मुख सीधी आँखों से ताक न सकी। उसके अंत:करण में एक निर्मल, विशुद्ध, भावपूर्ण भय का उदय हो आया। उसने आँखें बंद कर लीं। घुटनों के बल बैठ गई और हाथ जोड़कर करुण स्वर में बोली, "माता, मुझ पर दया करो!"

उसे ऐसा ज्ञात हुआ, मानो देवी मुसकराई। उसे उन दिव्य नेत्रों से एक ज्योति सी निकलकर अपने हृदय में आती हुई मालूम हुई। उसके कानों में देवी के मुँह से निकले ये शब्द सुनाई दिए—'पराया धन लौटा दे, तेरा भला होगा!'

भामा उठ बैठी। उसकी आँखों में निर्मल भक्ति का आभास झलक रहा था। मुखमंडल से पवित्र प्रेम बरस पड़ा था। देवी ने कदाचित् उसे अपनी प्रभा के रंग में डुबा दिया था।

इतने में एक दूसरी स्त्री आई। उसके उज्ज्वल केश बिखरे और मुरझाए हुए चेहरे के दोनों ओर लटक रहे थे। शरीर पर केवल एक श्वेत साड़ी थी। हाथ में चूड़ियों के सिवा और कोई आभूषण न था। शोक और नैराश्य की साक्षात् मूर्ति मालूम होती थी। उसने भी देवी के सामने सिर झुकाया और दोनों हाथों से आँचल फैलाकर बोली, "देवी, जिसने मेरा

धन लिया हो, उसका सर्वनाश करो।"

जैसे सितार मिजराब की चोट खाकर थरथरा उठता है, उसी प्रकार भामा का हृदय अनिष्ट के भय से थरथरा उठा। ये शब्द तीव्र शर के समान उसके कलेजे में चुभ गए। उसने कातर नेत्रों से देवी की ओर देखा। उनका ज्योतिर्मय स्वरूप भयंकर था। नेत्रों से भीषण ज्वाला निकल रही थी। भामा के अंत:करण में सर्वत्र आकाश से, मंदिर के सामनेवाले वृक्षों से, मंदिर के स्तंभों से, सिंहासन के ऊपर जलते हुए दीपक से और देवी के विकराल मुँह से ये शब्द निकलकर गूँजने लगे—'पराया धन लौटा दे, नहीं तो सर्वनाश हो जाएगा।'

भामा खड़ी हो गई और उस वृद्धा से बोली, "क्यों माता, तुम्हारा धन किसी ने ले लिया है?"

वृद्धा ने इस प्रकार उसकी ओर देखा, मानो डूबते को तिनके का सहारा मिला। बोली, "हाँ, बेटी।"

भामा—"कितने दिन हुए?"

वृद्धा—"कोई डेढ़ महीना।"

भामा—"कितने रुपए थे?"

वृद्धा—"पूरे एक सौ बीस।"

भामा—"क्या जाने कहाँ गिर गए! मेरे स्वामी पल्टन में नौकर थे। आज कई बरस हुए, वे परलोक सिधारे। अब मुझे सरकार से ६० रुपए साल के पेंशन मिलती है। अब की दो साल की पेंशन एक साथ ही मिली थी। खजाने से रुपए लेकर आ रही थी। मालूम नहीं, कब और कहाँ गिर पड़े! आठ गिन्नियाँ थीं।"

भामा—"अगर वे तुम्हें मिल जाएँ तो क्या दोगी?

वृद्धा—"अधिक नहीं, उसमें से ५० रुपए दे दूँगी।"

भामा—"रुपए क्या होंगे, कोई उससे अच्छी चीज दो।"

वृद्धा—"बेटी, और क्या दूँ, जब तक जिऊँगी, तुम्हारा यश गाऊँगी।"

भामा—"नहीं, इसकी मुझे आवश्यकता नहीं।"

वृद्धा—"बेटी, इसके सिवा मेरे पास क्या है?"

भामा—"मुझे आशीर्वाद दो। मेरे पति बीमार हैं, वे अच्छे हो जाएँ।"

वृद्धा—"क्या उन्हीं को रुपए मिले हैं?"

भामा—"हाँ, वे उसी दिन से तुम्हें खोज रहे हैं।"

वृद्धा घुटनों के बल बैठ गई और आँचल फैलाकर कंपित स्वर में बोली, "देवी! इनका कल्याण करो।"

भामा ने फिर देवी की ओर सशंक दृष्टि से देखा। उनके दिव्य रूप पर प्रेम का प्रकाश था। आँखों में दया की आनंददायिनी झलक थी। उस समय भामा के अंत:करण में कहीं स्वर्गलोक से यह ध्वनि सुनाई दी—'जा, तेरा कल्याण होगा!'

□

संध्या का समय है। भामा ब्रजनाथ के साथ इक्के पर बैठ तुलसी के घर उसकी थाती लौटाने जा रही है। ब्रजनाथ के बड़े परिश्रम की कमाई तो डॉक्टर की भेंट हो चुकी है, लेकिन भामा ने एक पड़ोसी के हाथ अपने कानों के झुमके बेचकर रुपए जुटाए हैं। जिस समय झुमके बनकर आए थे, भामा बहुत प्रसन्न हुई थी। आज उन्हें बेचकर वह उससे भी अधिक प्रसन्न है।

जब ब्रजनाथ ने आठों गिन्नियाँ उसे दिखाई थीं, तब उसके हृदय में एक गुदगुदी सी हुई थी, लेकिन यह हर्ष मुख पर आने का साहस न कर सका था। आज उन गिन्नियों को हाथ से जाते समय उसका हार्दिक आनंद आँखों में चमक रहा है, होंठों पर नाच रहा है, कपोलों को रँग रहा है और अंगों पर किलोल कर रहा है। वह इंद्रियों का आनंद था, पर यह आत्मा का आनंद है। वह आनंद लज्जा के भीतर छिपा हुआ था, यह आनंद गर्व से बाहर निकल पड़ा है।

तुलसी का आशीर्वाद सफल हुआ। आज पूरे तीन सप्ताह के बाद ब्रजनाथ तकिए के सहारे बैठे थे। वे बार-बार भामा को प्रेमपूर्ण नेत्रों से देखते थे। वह आज उन्हें देवी मालूम होती थी। अब तक उन्होंने उसके बाह्य सौंदर्य की शोभा देखी थी, आज वे उसका आत्मिक सौंदर्य देख रहे हैं।

तुलसी का घर एक गली में था। इक्का सड़क पर जाकर ठहर गया। ब्रजनाथ इक्के पर से उतरे और अपनी छड़ी टेकते हुए भामा के हाथों के सहारे तुलसी के घर पहुँचे। तुलसी ने रुपए लिये और दोनों हाथ फैलाकर आशीर्वाद दिया, "दुर्गाजी तुम्हारा कल्याण करें!"

तुलसी का वर्णहीन मुख वैसे ही खिल गया, जैसे वर्षा के पीछे वृक्षों की पत्तियाँ खिल जाती हैं। सिमटा हुआ अंग फैल गया, गालों की झुर्रियाँ मिटती दिख पड़ीं। ऐसा मालूम होता था, मानो उसका कायाकल्प हो गया।

वहाँ से आकर ब्रजनाथ अपने द्वार पर बैठे हुए थे कि गोरेलाल आकर बैठ गए। ब्रजनाथ ने मुँह फेर लिया।

गोरेलाल बोला, "भाई साहब, कैसी तबीयत है?"

ब्रजनाथ—"बहुत अच्छी तरह हूँ।"

गोरेलाल—"मुझे क्षमा कीजिएगा। मुझे इसका बहुत खेद है कि आपके रुपए देने में इतना विलंब हुआ। पहली तारीख को ही घर से एक आवश्यक पत्र आ गया और मैं किसी तरह तीन महीने की छुट्टी लेकर घर भागा। वहाँ की विपत्ति-कथा कहूँ तो समाप्त न हो। लेकिन आपकी बीमारी का शोक-समाचार सुनकर आज भागा चला आ रहा हूँ। ये लीजिए, रुपए हाजिर हैं। इस विलंब के लिए अत्यंत लज्जित हूँ?" ब्रजनाथ का क्रोध शांत हो गया। विनय में कितनी शक्ति है! बोले, "जी हाँ, बीमार तो था, लेकिन अब अच्छा हो गया हूँ। आपको मेरे कारण व्यर्थ कष्ट उठाना पड़ा। यदि इस समय आपको असुविधा हो तो रुपए फिर दे दीजिएगा। मैं उऋण हो गया हूँ। कोई जल्दी नहीं है।"

गोरेलाल विदा हो गए तो ब्रजनाथ रुपए लिये हुए भीतर आए और भामा से बोले, "ये लो अपने रुपए; गोरेलाल दे गए।"

भामा ने कहा, "ये मेरे रुपए नहीं, तुलसी के हैं; एक बार पराया धन लेकर सीख गई।"

ब्रजनाथ—"लेकिन तुलसी के तो पूरे रुपए दे दिए गए?"

भामा—"दे दिए गए तो क्या हुआ? ये उसके आशीर्वाद को न्योछावर हैं।"

ब्रजनाथ—"कान के झुमके कहाँ से आवेंगे?"

भामा—"झुमके न रहेंगे न सही, सदा के लिए 'कान' तो हो गए।"

आफत भरे दिन

● राजेंद्र राव

पहले दो दिन तो आसन्न संकट के साये में ठीक-ठाक गुजरे, लेकिन तीसरे दिन कयामत बरपा हो गई। पुलिस का डंडा चलना शुरू हुआ तो फिर रुकने का नाम ही नहीं लिया। पूरा बाजार बंद करवा दिया, यहाँ तक कि पूजा की सामग्री और फूल बेचनेवाले भी भाग खड़े हुए। बाजार की जिस सड़क पर हमेशा जाम लगा रहता था, जहाँ पैदल चलना भी मुश्किल था, वह एकदम सूनी हो गई। मेडिकल स्टोर खोलने की इजाजत थी, मगर वह भी आधा शटर गिराकर बैठे थे।

गिरीश बाबू के बेटे ने बेंगलुरु से फोन पर कहा कि पापा अपनी बी.पी. वगैरह की रेगुलर दवाइयाँ कम-से-कम एक महीने की लेकर रख लीजिए। लॉकडाउन के खुलने का कोई भरोसा नहीं है। अभी इक्कीस दिन बोल रहे हैं, लेकिन ये बढ़ाते जाएँगे। चायना और इटली में महीनों से लगा है, मगर पेंडेमिक काबू नहीं आ रहा; अपने यहाँ फैलेगा तो फिर भगवान् ही मालिक है। उन्हें तुरंत ही बात समझ में आ गई, घर में बस पाँच दिन की दवा शेष थी। अगर बंदी के मारे पीछे से दवाओं की सप्लाई रुक गई तो मुसीबत हो जाएगी। मन बेचैन होने लगा, तो उन्होंने तत्काल बाजार जाने का निश्चय किया। हालाँकि अड़ोस-पड़ोस से पुलिस की सख्ती की तमाम बातें सुनने के बाद बाहर निकालने में कुछ धुकधुकी सी हो रही थी। यह आश्वस्ति तो थी कि दवा लाने के लिए निकलने की छूट है, मगर अखबार में पढ़ा था कि पुलिस द्वारा माँगे जाने पर डॉक्टर का लिखा प्रिस्क्रिप्शन दिखाना होगा। उन्होंने ढूँढ़-ढाँढ़कर कार्डियोलॉजिस्ट का पाँच साल पुराना परचा निकालकर जेब में रखा और स्कूटी बाहर निकाली।

मुख्य सड़क पर बाजार से पहले दो चौराहे पड़ते थे। दोनों पर पुलिस थी, मगर उन्हें किसी ने भी नहीं रोका, तो उनके मन में सोया हुआ आत्मविश्वास जाग उठा। दवा के अलावा सब्जी-फल वगैरह भी ले लूँगा, उन्होंने मन-ही-मन में सोचा। आज तो दवा के लिए जाने को मिल रहा है, कल पता नहीं निकलना हो पाए या नहीं!

निकले वह पिछले दिन भी थे, मगर तब तो बाजार गुलजार था। अखबार में यह खबर पढ़कर कि आटे, सरसों के तेल और शक्कर की कालाबाजारी शुरू हो गई है, लोग सुबह तीन घंटों के लिए खुली किराना की दुकानों पर टूट पड़े। अखबार में सही लिखा था, तेईस रुपए किलो वाला आटा चालीस रुपए में मिल रहा था। तेल पंद्रह रुपए और शक्कर पाँच रुपए ज्यादा पर मिल रहा था। लेना है तो लो, नहीं तो अपना रास्ता लो! गिरीश बाबू महीने भर का सामान जिस दुकान से लेते थे, उसने धीरे से कहा, "बाबूजी, सामान की लिस्ट दे जाइए। अभी भीड़ है, घंटे भर बाद ले जाइएगा।" बाद में जब उन्होंने सामान उठाया तो बिल देखकर खुशी हुई कि उसने आटा भले ही सात रुपए प्रति किलो ज्यादा लगाया हो, मगर तेल, चीनी और दालों के दाम ठीक लगाए थे। इस तरह वे लॉकडाउन के मैदान में अपनी पहली लड़ाई जीतकर प्रसन्न मन घर लौटे और पत्नी को सब हाल कह सुनाया। उसने प्रश्न किया, "चलो आज तो मिल गया, मगर यह बंदी लंबी चली, तो आगे जाने क्या हाल होगा?" और दोनों भविष्य की चिंता में वर्तमान की उपलब्धि को भुला बैठे।

□

गिरीश बाबू दो चौराहे तो ठाठ से पार कर आए, मगर बाजार में मुहाने पर पुलिस का बैरियर लगा देखकर उनका मुँह उतर गया। स्कूटी निकलने लायक जगह भी नहीं छोड़ी थी उन्होंने। सड़क किनारे की एक बंद दुकान के सामने कुरसियों पर तीन पुलिसवाले बैठे थे। उन्होंने स्कूटी खड़ी की और उनके पास जाकर विनम्रता से कहा, "मुझे अपनी दवा लेने मेडिकल स्टोर तक जाना है।" उनमें से एक ने कहा, "परचा लाए हैं?" उन्होंने जेब से निकालकर आगे बढ़ा दिया। दरोगाजी ने बड़े गौर से प्रिस्क्रिप्शन पढ़ा और कुछ तीखे स्वर में कहा, "श्रीमानजी, यह तो पाँच साल पुराना परचा है। सीधे-सीधे कहिए न कि आपको बाजार जाना है, मगर अंदर एक भी

सातवें दशक में लघु उद्योगों से कॅरियर की शुरुआत करने के बाद कुछ अत्याधुनिक और विशिष्ट गैर-सरकारी और सरकारी संस्थानों में तकनीकी और प्रबंधन के प्रशिक्षण में कार्यरत रहते हुए उन्होंने कहानियाँ और रिपोतार्ज तो लिखे ही, विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में नियमित कॉलम लेखन भी किया। अभी तक बारह कथा संकलन, दो उपन्यास और एक कथेतर लेखन का संकलन प्रकाशित। संप्रति 'दैनिक जागरण' में साहित्य-संपादक।

दुकान खुली नहीं है। हाँ, आपको सचमुच दवा ही लेनी है तो अंदर चले जाइए, मेडिकल स्टोर खुला है।"

'विनोद मेडिकल' बाजार के बीचोबीच था। बाकी सारी दुकानों के शटर गिरे हुए थे। रोजाना फुटपाथ घेरकर खड़े होनेवाले ठेले और रेहड़ियाँ नदारद थीं। और तो और, सड़क पर मटरगश्ती और मस्ती करनेवाले साँड, गाएँ, कुत्ते और सूअरों का कहीं पता नहीं था। एक अनोखी बात यह थी कि पूरी सड़क साफ थी और जगह-जगह लगे कूड़े के ढेर भी गायब थे। लग रहा था, जैसे बाजार बंद करके झाड़-बुहारकर चमका दिया गया हो। मगर किसके लिए? वहाँ तो एक गहरा स्यापा जारी था।

मेडिकल स्टोर के सामने पहुँचकर कुछ प्राणी नजर आए, तो राहत सी महसूस हुई। वहाँ भी शटर आधा गिरा हुआ था और ज्यादातर ग्राहक बाहर लाइन में दूर-दूर खड़े थे। अंदर एक समय में एक ही व्यक्ति जाता था। वह भी लाइन में खड़े हो गए और अपनी बारी का इंतजार करने लगे। उन्होंने देखा कि लाइन में खड़े सभी लोगों ने अपने चेहरों पर मास्क लगा रखे थे। कुछ देर बाद बिना मास्क उन्हें अटपटा-सा लगने लगा। मगर क्या कर सकते थे! अंदर से जैसे ही कोई दवा लेकर निकलता, लाइन में आगेवाला व्यक्ति अंदर दाखिल हो जाता। उन्होंने गौर किया कि दवा लेने में औसतन एक आदमी को दस से बारह मिनट लग रहे थे। इस हिसाब से उन्हें कम-से-कम पौना घंटा तो लगना-ही-लगना था। जब सामने दो आदमी रह गए तो अंदर से एक सेल्समैन मास्क की गड्डी लेकर निकला और जोर से बोला, "बिना मास्कवाले को दवा नहीं मिलेगी। जिन-जिन को चाहिए, ले लें। चालीस-चालीस रुपए का है। तीन लेने पर सौ में मिल जाएँगे।" गिरीश बाबू ने सौ का नोट देकर तीन ले लिये।

राम-राम करके दवा मिली, मगर हमेशा मिलनेवाला टेन परसेंट डिस्काउंट नहीं मिला। वापसी में सब्जी से लदे हाथठेलों की एक लंबी कतार कॉलोनी की तरफ जाती दिखाई दी। शायद मंडी से माल लेकर लौट रहे थे। उन्हें याद आया कि अखबार में जहाँ किराना को सुबह तीन घंटे की छूट थी, वहीं दूध-ब्रेड-सब्जी की बिक्री पर पाबंदी नहीं थी। शर्त यही कि इसके लिए दुकान खोलने की अनुमति नहीं होगी। ठेलेवाले मास्क लगाकर गली-मोहल्लों में सब्जी बेच सकेंगे। उनका मकान कॉलोनी में सबसे पीछे था। वहाँ तक आते-आते सब्जी और फल छँट जाएँगे; बचा-खुचा मिलेगा। उन्होंने सोचा कि क्यों न किसी एक को रोककर अभी ही सब्जी ले ली जाए। संयोग से पंक्ति के अंतिम छोर पर एक लड़का था, जो उन्हें पहचानता था। उनके कहने से रुक तो गया, मगर बोला, "अगले चौराहे पर बाएँ मुड़कर आ जाइए, यहाँ रुकेंगे तो पुलिसवाला लाठी से मारेगा।" अगले चौराहे पर बाएँ मुड़कर कुछ दूर चलने पर सब्जीवाला मिल गया। सचमुच एकदम ताजा-ताजा सब्जियाँ थीं। वे बड़े उत्साह से भिंडी, तुरई, करेले, गोभी, टमाटर छाँट-छाँटकर थैले में डलवाते रहे, जब तक वह पूरी तरह न भर गया। सब्जीवाला हिसाब जोड़ रहा था कि छत पर लगे भोंपूवाली पुलिस की जीप सायरन बजाते हुए आई और जब तक वे सँभलें, सब्जीवाला ठेले सहित भाग खड़ा हुआ। जीप उनके पास से यह कहते हुए गुजरी, "जाइए, घर जाइए, बाहर निकलने पर मुश्किल में पड़ सकते हैं।" उन्होंने तुरंत स्कूटी स्टार्ट की और वापस चौराहे जा पहुँचे। यहाँ से सीधे घर का रास्ता पकड़ा।

जैसे ही अपने फाटक के सामने स्कूटी खड़ी की, माँ-बेटी दोनों बाहर निकल आईं। उनकी पत्नी बोली, "शुक्र है, आप सही-सलामत लौट आए। बगलवाले शुक्लाजी का बेटा अपने दोस्त के घर गया था, रास्ते में ही पकड़ लिया गया। उसे तो छोड़ दिया, मगर मोटरसाइकिल थाने में जमा कर ली गई। शुक्लाजी नेताइन को लेकर बाइक छुड़ाने गए हैं।"

गिरीश झल्लाकर बोले, "अरे भाई, मैं तो दवाइयाँ लेने गया था, मेडिकल स्टोर जाना अलाउड है। मैं कोई घूमने तो नहीं गया। फिर काहे को शोर मचाए हो?"

पत्नी मुँह बनाकर कहने लगी, "इनकी सुनो, कहते हैं कि दवा लेने गए थे, और सामने थैले में सब्जियाँ भरी हैं। पुलिसवालों के क्या आँखें नहीं हैं?"

बेटी शैल ने भी अपने दिल का गुबार निकाला, "पापा, दो दिन से बराबर टी.वी. पर कहा जा रहा है कि साठ से ऊपरवाले बुजुर्ग इमरजेंसी के अलावा घर से बाहर कतई न निकलें। खासतौर पर बी.पी. और डाइबिटीज के मरीज। आप तो यह भागा-दौड़ी रहने दो, हम लोग सब्जी-भाजी के बगैर काम चला लेंगे।"

गिरीश बाबू को मन-ही-मन बहुत कोफ्त हुई, 'लो, इनके लिए तो किसी तरह से ताजा सब्जियाँ लेकर आया और यही आँखें दिखा रही हैं!' बहरहाल, थैला उठाकर दोनों खाना बनाने किचन में चली गईं। वे अखबार लेकर तमाम निषेध और नकार तफसील से पढ़ने लगे। सुबह तो सरसरी तौर से नजर डाली थी। देश में क्या-क्या बंद रहेगा, इसकी सूची बहुत लंबी और त्रासद थी। ऐसा शायद ही किसी ने पहले कभी देखा या सुना हो। ट्रेनें, बसें और यहाँ तक कि टैक्सी और ऑटो तक बंद हो चुके थे। बाजार, दफ्तर, होटल-रेस्त्राँ, मॉल, सिनेमा, जिम और सैलून ही नहीं, मंदिर-मसजिद-गुरुद्वारे और चर्चों के दरवाजे भी उपासकों के लिए बंद हो चुके थे। अस्पतालों और नर्सिंग होम्स के ओ.पी.डी. तो बंद हुए ही, स्कूल-कॉलेज और सभी तरह के शिक्षण संस्थानों में अनिश्चित काल के लिए लॉकडाउन घोषित हो गया। चलती हुईं परीक्षाएँ अधबीच में रुक गईं। कुल मिलाकर यह एक कल्पनातीत स्थिति थी। पूरा विश्व एक भयावह और सर्वग्रासी महामारी की चपेट में आ चुका था और किसी को पता नहीं था कि आगे क्या होनेवाला है! बस, एक ही बात बार-बार दोहराई जा रही थी कि अभी तक यह मर्ज लाइलाज है। यह सब सोचते हुए उनका माथा घूमने लगा।

अखबार में किसी-किसी जगह लॉकडाउन की जगह कर्फ्यू शब्द का भी प्रयोग किया गया था। लॉकडाउन तो नहीं, मगर कर्फ्यू की कुछ डरावनी यादें उनके जेहन में थीं, जो मौका पाते ही उभरने लगीं। अपने बासठ साल के जीवन में उन्होंने तीन-चार कर्फ्यू झेले थे, जो कि सांप्रदायिक दंगों के कारण लगाए गए थे। उनमें सख्ती से सबकुछ बंद कर दिया जाता था। कई-कई दिन दूधवाली चाय पीने को तरस जाते थे। घर के दरवाजे से बाहर पैर रखना गुनाह था, जिसकी तत्काल सजा मिलती थी। गैस सिलेंडर खत्म हो जाए या किसी को दिल का दौरा पड़ जाए, तो गम खाने के अलावा कोई चारा नहीं था।

सब बंद-ही-बंद है या कुछ खुला भी है ? यह सोचते ही उनकी नजर टी.वी. पर पड़ी। यही एक था, जो २४×७ खुला था। उन्होंने रिमोट उठाया और टी.वी. ऑन कर दिया। एंकर किसी बड़े डॉक्टर से कोविड-१९ के बारे में बात कर रही थी। उस समय डॉक्टर साहब बता रहे थे कि इस पेंडेमिक का सबसे खतरनाक दौर होता है कम्युनिटी-स्प्रेड। इस स्थिति में इसे रोकना बहुत कठिन हो जाता है। हम अभी इससे बहुत दूर हैं, मगर यह स्थिति बनाए रखने के लिए जरूरी है कि हम फुरती से कॉण्टेक्ट ट्रेसिंग करते रहें और इसकी चेन को यथासंभव शीघ्र तोड़ते जाएँ। एक पी.आर.एस.एच.एन. के उत्तर में बताया गया कि अगर संक्रमित व्यक्ति के पास बगैर मास्क नौ मिनट रहा जाए, तो वायरस ग्रहण करने की संभावना हो सकती है। अभी आगे की बात सुनते कि उनकी बेटी खाने के लिए बुलाने आ गई।

डाइनिंग टेबल का नजारा देखने लायक था। कई तरह की डिशेज सजी थीं। तिल और मूँगफली वाली कुरकुरी भिंडी, मलाई भरवाँ टिंडे, टमाटर का रायता, मटर पुलाव वगैरह। उन्होंने मुसकराते हुए पूछा, "आज कोई खास दिन है, मुझे तो याद नहीं आ रहा।"

"हाँ, बहुत खास दिन है। लॉकडाउन है और आप ताजा-बढ़िया सब्जियाँ ले आए हैं तो सेलिब्रेशन तो बनाता है। अब कल से जाने मिलें-न-मिलें!" पत्नी ने उनकी प्लेट में परोसते हुए कहा।

"हाँ पापा, आज आप एकदम फ्रेश धारीदार तुरई ले आए। मैंने उनके छिलकों से शामी कबाब बनाए हैं। खाकर बताइए कैसे बने हैं?" उन्होंने चम्मच उठाई और कबाब चखकर कहा, "लाजवाब, जरा सॉस की बोतल आगे बढ़ाओ।"

ऐसा शायद ही किसी ने पहले कभी देखा या सुना हो। ट्रेनें, बसें और यहाँ तक कि टैक्सी और ऑटो तक बंद हो चुके थे। बाजार, दफ्तर, होटल-रेस्त्राँ, मॉल, सिनेमा, जिम और सैलून ही नहीं, मंदिर-मसजिद-गुरुद्वारे और चर्चों के दरवाजे उपासकों के लिए बंद हो चुके थे। अस्पतालों और नर्सिंग होम्स के ओ.पी.डी. तो बंद हुए ही, स्कूल-कॉलेज और सभी तरह के शिक्षण संस्थानों में अनिश्चित काल के लिए लॉकडाउन घोषित हो गया। चलती हुईं परीक्षाएँ अधबीच में रुक गईं। कुल मिलाकर यह एक कल्पनातीत स्थिति थी।

खाना खाकर कुछ देर तक टी.वी. देखा, जब नींद से पलकें भारी होने लगीं तो बेडरूम में जाकर सो गए।

□

शाम को सूरज ढलते ही चाय पीकर वे टहलने निकले। रोजाना की आदत थी। कॉलोनी की एक परिक्रमा कोई ढाई-एक किलोमीटर की होती थी। इसमें वे एक ब्रेक करके मुल्लाजी की दुकान में आराम से बैठकर एक सिगरेट पीते थे। घर में तो सिगरेट का नाम लेना भी पाप था। जब से उनको बी.पी. की शिकायत हुई, तब से उन्होंने कसम खाकर छोड़ी हुई थी। लेकिन मौका निकालकर एक-दो बार कश मार ही लेते थे। सिगरेट पीते हुए अकसर वे तत्कालीन गंभीर समस्या के बारे में मनोयोग से सोचा करते थे; और आज तो पेंडेमिक और लॉकडाउन जैसे मसले दरपेश थे।

मुल्लाजी के झोंपड़ीनुमा घर के बरामदे में ही साइकिल मरम्मत और पान की दुकान थी। उन्होंने पहुँचकर देखा कि बरामदे के आगे टाट का परदा लटक रहा था। वे निराश होकर लौटने लगे तो परदे के पीछे से आवाज आई, "सर, अंदर आ जाइए। आपके लिए तो सेवा अभी चालू है।" सिगरेट सुलगाकर पैसे दिए तो मुल्लाजी ने कहा, "सर, एक रुपया और दीजिए। अब ब्लैक में बहुत महँगी मिल रही है।"

अब दुकान में बैठने की सुविधा नहीं थी, तो बाहर पीपल के पेड़ के नीचे जा खड़े हुए और धुआँ उड़ाते हुए परिस्थिति पर गंभीरता से विचार करने लगे। सहसा समवेत स्वर के शोर से उनका ध्यान टूटा। पीपल के नीचे बने गोलाकार चबूतरे पर बैठनेवाला मोची नदारद था और कॉलोनी के पाँच-छह लड़के महफिल जमाए थे। एक लड़का कह रहा था, "अबे करोना से उतनी परेशानी नहीं है, जितनी सब दफ्तर बंद हो जाने से हुई है। अब हमारा बाप दिन भर घर में बने रहते हैं तो समझो जीना मुहाल है। पूरा घर परेशान है। सारे दिन हर बात पर टोका-टाकी। सबसे ज्यादा मुसीबत अम्मा की है, अगले का हुकुम बजाते-बजाते मार हलकान हुई रहती हैं। दीदी तो बेचारी सामने पड़ती ही नहीं। हर समय किताब लिये बैठी रहती हैं। लेकिन हमारी तरफ नजर नहीं डालते, मालूम है कि अपन उनको ठेंगे पर रखते हैं। और हमारा मार-कूट और गाली खाने का कोटा पूरा हो चुका है।"

"नहीं बे! असल बात ये है कि तुम लाते हो कमाकर, जबकि तुम्हारे साथ के सब लड़के टुल्लू बने घूम रहे हैं। इस अभिषेकवा को ही देखो, करते-धरते कुछ हैं नहीं, बस, पड़ोस में आँखें लड़ाया करते हैं। वह भी अभी टाइम पास कर रही है, मौका पाते ही झटक देगी। समझे!"

एक जोरदार ठहाका लगा। गिरीश बाबू भी मुसकराने लगे। तभी संभवत: अभिषेक ने प्रतिवाद किया, "अरे छोड़ो, अपन कच्ची गोलियाँ नहीं खेलते, रेखा इधर-उधर होनेवाली नहीं है। उसे मालूम है कि बाबू देर-सवेर मर्चेंट नेवी का कंपटीशन निकाल ले जाएँगे। असली लभेड़ तो हमारे बुढ़वों से है, दोनों को शक हो गया है। दिन-रात ताड़ते रहते हैं कि कहीं नैन-मटक्का न हो जाए! कसम से प्यार का लॉकडाउन हुआ पड़ा है।"

"अरे छोड़ो, ये साले बुड्ढे होते ही हरामी हैं। सौ-पचास का नोट निकालने में भी जान निकलती है इनकी। अरे, जब बेटों के शौक पूरे नहीं कर सकते, तो कमाते क्यों हो? और अभिषेक बाबू, अब लॉकडाउन भर तो सबर रखना ही पड़ेगा। इतनी फैसिलिटी क्या कम है कि मामला बस नेक्स्ट डोर का है। यहाँ तो दस किलोमीटर के चक्कर लगाते-लगाते पागल हो गए। हजारों का पेट्रोल फूँक दिया, सो अलग।"

लड़कों की उलटी-सीधी सुनते हुए गिरीश बाबू ने ईश्वर को हृदय से धन्यवाद दिया कि उनको शलभ जैसा सीधा, नेक और अनुशासित लड़का मिला। हमेशा पढ़ाई में अव्वल। इंजीनियरिंग पास करके अच्छी नौकरी में लगा है। यह भी अच्छा है कि बेंगलुरु में है, कॉलोनी के लड़कों की संगत से दूर। लड़की भी कम योग्य नहीं थी। फर्स्ट क्लास एम.एस-सी., बी.एड.

करके कंपटीशन की तैयारी कर रही थी। उसके लिए वर ढूँढ़ने की जरूरत ही नहीं पड़ी। शलभ का एक क्लासमेट भुवन यहाँ एच.ए.एल. में मैनेजमेंट ट्रेनी होकर आया और ट्रेनिंग खत्म होते-होते उसने शैल को पसंद कर लिया। दोनों पक्ष मिले और बात पक्की हो गई। शलभ की उपलब्धता के अनुसार मई में सगाई का कार्यक्रम होना था। गिरीशजी दकियानूसी तो नहीं थे, मगर शादी के पहले लड़के-लड़की का ज्यादा मिलना-जुलना उन्हें सही नहीं लगता था, मगर उनकी पत्नी अकसर भुवन को चाय पर बुलातीं और फिर रात का खाना खिलाकर ही भेजतीं। उनका खयाल था कि शैल और भुवन की काफी बातचीत हुआ करती है। उनकी असहज मुद्रा को भाँपकर श्रीमती गिरीश ने यह तय कर दिया कि हर शनिवार की शाम भुवन उनके यहाँ ही भोजन करेंगे।

उनके मन में यही सोच-विचार चल रहा था कि टैंपो स्टैंड की तरफ से दो लड़के चिल्लाते हुए आए, "भागो, भागो, सिंघम आ रहा है। चौराहे पर लड़कों को खूब लठियाया है।"

सुनते ही पीपल के नीचे अड्डा जमाए लड़के सिर पर पैर रखकर भागे। जब तक वह कुछ समझ पाते, पुलिस की डायल-१०० जीप अजीब सी आवाज निकालती रोड से अंदर की ओर मुड़ी और उनके पास आकर रुकी। ड्राइवर की बगल में बड़ी-बड़ी मूँछोंवाला लगभग दैत्याकार एक वरदीधारी हाथ में बेंत लिये बैठा था। यही होगा सिंघम, उन्होंने अनुमान लगाया। अब गाड़ी उनके पास आकर रुकी थी तो पलायन करना मुश्किल था। सिंघम कुछ देर तक अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से उन्हें घूरता रहा, फिर हाथ जोड़कर बोला, "मेहरबानी करके अपने घर जाइए! कहीं कोरोना ने पकड़ लिया तो जान के लाले पड़ जाएँगे। बुजुर्गों को ही सबसे ज्यादा खतरा है। अभी कुछ दिन घूमना-फिरना बंद रखिए! चलो भाई।" और एक झटके से जीप आगे बढ़ गई। उन्होंने घर जाने के लिए एक घुमाव-फिराव वाला अपेक्षाकृत सुरक्षित रास्ता पकड़ा। इसलिए कि सिंघम से दोबारा टकराने की नौबत न आए। यह रास्ता आदर्श नगर के भीतर से जाता था। चलो, ढाई के बजाय चार किलोमीटर सही। इस रास्ते पर चलते हुए सहसा घी में कुछ मसालेदार तले जाने की मोहक खुशबू आई। उन्हें याद आया कि यह बजरंग स्वीट हाउसवाले गुप्ताजी का घर है। दुकान तो खोल नहीं सकते, इसलिए घर में जरूर समोसे बन रहे होंगे। उनका अनुमान सही निकला। सामने पहुँचकर खुले दरवाजे से उन्होंने देखा कि बीच आँगन में गैस भट्ठी की ज्वाला लपलपा रही है और तख्त पर बैठा कारीगर कड़ाही में तले जा रहे समोसों को झारी से उलट-पलट रहा है। दो-तीन ग्राहक प्रतीक्षारत खड़े नजर आए, तो वे भी अंदर चले गए। वहाँ से निकले तो हाथ में समोसों से भरा डोंगा था।

सुबह की तरह ही विजेता की मुद्रा में वे घर में दाखिल हुए। लेकिन इस बार उन्हें डाँट नहीं पड़ी, बल्कि समोसे देखकर माँ-बेटी के चेहरे खिल गए। प्रेम से समोसे खाते हुए शैल ने माँ के कान में कुछ कहा, जिसे सुनकर उन्होंने सिर हिलाया और गिरीश बाबू से बहुत मीठे स्वर में कहा, "यह तो बड़ा अच्छा हुआ कि लॉकडाउन में भी समोसे मिलने का ठिकाना आपने ढूँढ़ निकाला। देखना, अब उसके घर में रोज समोसे-खस्ते बनेंगे। सुनो, कल कुँवर साहब आएँगे तो आप पहले ही जाकर ले आना, उन्हें गुप्ता के समोसे बहुत पसंद हैं।"

उसके बाद चाय का दौर चला। उस दौरान श्रीमती गिरीश ने कहा, "आप बाजार जाने से पहले मुझसे और शैल से पूछ तो लेते। बहुत से जरूरी आइटम रह गए। शैंपू एकदम खत्म है, पीयर्स सोप नहीं है, वॉशिंग मशीन का पाउडर भी चाहिए था। इसको कल सुबह-सुबह ही बाल धोने होंगे। कल शनिवार है न, बताओ बगैर शैंपू कैसे धोएगी?" उन्होंने आश्वस्त किया कि सुबह जल्दी जाकर ले आएँगे।

शैल कुछ सकुचाते हुए बोली, "मम्मी, हमें पार्लर भी जाना था। पता नहीं खुलेंगे भी या नहीं?" गिरीश बाबू मंद-मंद मुसकराते हुए बोले, "नहीं बेटे, सैलून, ब्यूटी पार्लर, जिम सब बंद रहेंगे।"

"कोई बात नहीं, हम भटनागर आंटी से करवा लेंगे, वह घर में करती हैं।" बेटी ने कहा तो गिरीश को उस दिन की याद आ गई, जब वह लड़की देखने गए थे। उन दिनों कहाँ होते थे ब्यूटी पार्लर! बड़ी बहन या सहेलियाँ अच्छे से सजा देती थीं।

वे उठकर टी.वी. देखने ड्रॉइंग रूम जाने लगे तो उनकी पत्नी ने कहा, "देखो, सुबह मैं कहीं भूल न जाऊँ, इसलिए अभी बता रही हूँ, बाजार जाओ तो याद करके कल शाम के लिए पनीर और कुछ ड्राइ फ्रूट्स जरूर लेते आना।"

□

सुबह जल्दी उठकर उन्होंने नहाना-धोना, पूजा-पाठ निपटाया, चाय पीते हुए अखबार की सुर्खियों पर नजर डाली और बाजार का काम निपटाने को तैयार हो गए। पत्नी से पूछकर सब आइटम्स की लिस्ट बनाई और स्कूटी स्टार्ट करके रवाना हुए। जैसे ही ब्लॉक की सड़क पार करके मेन रोड के मुहाने के नजदीक पहुँचे, एक झटके से उनकी स्कूटी रुक गई। आगे रास्ता बंद था।

उन्होंने हैरानी से देखा कि उनके घर से मेन रोड आनेवाली सड़क महानगर पुलिस के दो रोड ब्लॉक लगाकर बंद कर दी गई थी। उस पार किसी पासवाले घर से माँगी गई प्लास्टिक की कुरसियों पर पुलिस के दो जवान बैठे थे और एक होमगार्ड खड़ा था।

स्कूटी खड़ी करके वे रोड ब्लॉक तक गए। पूछने पर पुलिसवालों ने बताया कि पिछली रात को इसी ब्लॉक में आगे कोरोना का एक केस निकल आया है। उसे अस्पताल ले गए हैं और बीमारी को फैलने से रोकने के लिए इस सड़क को दोनों छोर से बंद कर दिया गया है। अब चौदह दिन तक इस गली के सभी लोगों का आना-जाना पूरी तरह बंद रहेगा। उन्होंने जरूरी चीजें खरीदने के लिए बाजार जाने की जरूरत बताई, तो टके-सा जवाब मिला, "बाबूजी, अब दो हफ्ते तो बाहर निकलने की सोचिए भी मत। जल्द ही होम डिलिवरी सेवा शुरू हो जाएगी, बस, तब तक काम चला लीजिए। अगर आपको दूध, ब्रेड या दवा चाहिए तो एक परचे पर अपने फोन नंबर सहित लिखकर पैसों के साथ इस होमगार्ड को दे दीजिए। सामान आते ही आपको फोन करके बुला लेंगे।"

लौटते हुए उन्होंने देखा कि गली में सन्नाटा पसरा था। कुछ लोग ऊपर छतों से जरूर झाँक रहे थे।

घर पहुँचकर जब उन्होंने यह सब बताया तो माँ-बेटी दोनों के मुँह से निकला, "हाय राम, अब क्या होगा? कमबख्त कोरोना को कोई और ठौर

नहीं मिली, जो हमारे ही मोहल्ले में आ धमका। अब रहना होगा दो हफ्तों तक घर में कैद।"

गिरीश बाबू निराश दिखाई दिए तो पत्नी ने सुर बदला, "अरे, आप किस सोच में पड़ गए, एक हम ही तो नहीं, पूरा ब्लॉक ही झेलेगा। पता नहीं किसके घर में निकला है। थोड़ी देर में पता करते हैं। मुन्नी, जरा शुक्लाइन आंटी को फोन लगा। उनसे पता चल जाएगा। उन्हें सारी खबर रहती है।"

पता चला कि भटनागरजी का लड़का दो दिन पहले ही नोएडा से आया था, उसी को निकला है कोरोना। रात में लेकर गई है सरकारी एंबुलेंस। आज पूरे परिवार का टेस्ट होगा, तब पता चलेगा कि किस-किस को और है। मोहल्ले-पड़ोस में भी लोगों से पूछा जाएगा कि पिछले दिनों कौन-कौन गया था उनके यहाँ। अरे, यह तो भगवान् ने बचाया हम लोगों को, नहीं तो शैल जानेवाली थी उनके यहाँ फेशियल करवाने। सोचो, तब कैसी मुसीबत आती!

गिरीश बाबू ने भारी मन से खाली थैले पत्नी को पकड़ाते हुए कहा, "मैं समझता हूँ, हमें भुवन को खबर कर देनी चाहिए। एक तो वैसे ही रास्ता बंद है, दूसरे बहुत बड़ा रिस्क है।"

पत्नी मुँह बनाकर बोलीं, "आप भी न, कैसी बातें करते हैं! ऐसे आने को माना किया जाता है क्या? और कौन सा यहाँ निकला है, पाँच घर छोड़कर हुआ है, वह भी बाहर से आए लड़के को। वहीं से लेकर आया होगा। इस गली का रहनेवाला होता तो हम मानते।"

लेकिन शैल ने प्रतिवाद किया, "मम्मी, पापा ठीक कह रहे हैं। हमें उन्हें बता देना चाहिए। मैं अभी फोन करके आती हूँ", कहकर वह दूसरे कमरे में चली गई। पति-पत्नी ने अर्थपूर्ण दृष्टि से एक-दूसरे को देखा और बैठ गए। गिरीशजी ने कहा, "मुझे तो चिंता हो रही है। भुवनेश बाबू फैक्टरी में काम करते हैं, वहाँ हर समय दूरी बनाकर रखना मुमकिन नहीं है। सैकड़ों-हजारों में कौन वायरस ले आए, क्या पता चलता है!"

पत्नी ने कहा, "शुभ-शुभ बोलिए। मुझे पूरा विश्वास है कि उनका बाल भी बाँका नहीं होगा। वे तो खुद इतने समझदार हैं कि इस आफत से बचकर ही रहेंगे। अपना शैलेश भी तो इतनी बड़ी कंपनी में काम कर रहा है, लेकिन ये सब पढ़े-लिखे लड़के हैं। इन्हें अपना दामन बचाना खूब आता है।"

वे कुछ बोलते कि शैल फोन कान पर लगाए हुए आई और धीरे से बोली, "पापा, जरा वह सामान की लिस्ट पकड़ाइए तो!" उन्होंने जेब से लिस्ट निकालकर दे दी। वह फिर दूसरे कमरे में चली गई।

"अब यह खामख्वाह बेचारे कुँवर साहब को परेशान करेगी। ऐसा कौन सा जरूरी समान है, जिसके बिना काम नहीं चल सकता?"

लौटकर शैल ने सिर्फ इतना कहा, "मम्मी, उनके घर के पास ही एक जनरल स्टोर है, आते समय वहाँ से लेते आएँगे।"

मम्मी ने जवाब दिया, "तो ऐसा करें कि पहले घर की साफ-सफाई कर डालें। बाद में खाना बनाएँगे।"

□

दो ब्लॉकों के बीच में जगह कुछ ज्यादा छोड़ी गई थी। इसे परली तरफ जाने के लिए बतौर शॉर्टकट इस्तेमाल किया जाता था। वे उसी से होते हुए एक दूसरी सड़क पर निकल गए। वहाँ नाकाबंदी नहीं थी। आराम से टहलते हुए आदर्श नगर में गुप्ता के मकान तक पहुँच गए। समोसे लेकर अपनी गली में चोर की तरह छुपते-छुपाते दाखिल हुए तो दिल जोरों से धड़क रहा था, मगर सुरक्षित घर पहुँच गए। वहाँ रात्रिभोज की तैयारी जोर-शोर से चल रही थी।

समय गुजरता गया, यहाँ तक कि चाय का समय निकल गया। समोसे ठंडे होते रहे, मगर भुवन नहीं पहुँचे। चिंतित होकर गिरीश बाबू बोले, "कहीं ऐसा तो नहीं कि वो आए हों और पुलिसवालों ने लौटा दिया हो! लेकिन ऐसा होता तो वह फोन करके बताते। मुन्नी, तुम्हीं फोन लगाकर पता करो।"

सुबह जल्दी उठकर उन्होंने नहाना-धोना, पूजा-पाठ निपटाया, चाय पीते हुए अखबार की सुर्खियों पर नजर डाली और बाजार का काम निपटाने को तैयार हो गए। पत्नी से पूछकर सब आइटम्स की लिस्ट बनाई और स्कूटी स्टार्ट करके रवाना हुए। जैसे ही ब्लॉक की सड़क पार करके मेन रोड के मुहाने के नजदीक पहुँचे, एक झटके से उनकी स्कूटी रुक गई। आगे रास्ता बंद था।

तभी बाहर से किसी ने जोर से आवाज लगाई, "गिरीश चंद्र शर्माजी बाहर आइए!"

वे घबराकर पत्नी की ओर देखकर बोले, "यह कौन हो सकता है?"

"अरे, बाहर जाकर देखिए न, इतना घबरा क्यों रहे हैं?" और तीनों एक साथ बाहर निकल आए।

गिरीश बाबू ने फाटक पर खड़े होमगार्ड को पहचान लिया और उसके पास जाकर पूछा, "क्या बात है, भैया?"

उसने एक कैरी बैग आगे बढ़ाते हुए कहा, "नमस्ते बाबूजी, अभी एक साहब कार से आए थे। आपके लिए यह सामान दे गए हैं। लीजिए।"

"अरे भाई, वह हमारे दामाद हैं। उन्हें थोड़ी देर के लिए अंदर आ जाने देते।"

"मजबूरी है साहब, नहीं तो हम क्यों किसी को रोकते! आपसे क्या बताएँ कि कितनी सख्ती है। फिर वह कार में थे, उन्हें भेजने के लिए बैरियर हटाने पड़ते। रिपोर्ट या चेकिंग हो जाती, तो तीनों का सस्पेंशन पक्का था।"

वे कैरी बैग लेकर बरामदे तक पहुँचे तो उनकी पत्नी ने मुँह पर आँचल रखते हुए कहा, "देखा, कितने अच्छे हैं मुन्नी के होनेवाले दूल्हा। कर्फ्यू लगा है, मगर इसके लिए शैंपू और सोप पहुँचाकर ही गए"।

शैल चिढ़कर बोली, "अब क्या करेंगे इस शैंपू का? चौदह दिन तो न हम कहीं जा सकते, न कोई हमारे यहाँ आ पाएगा।"

तीनों अंदर पहुँचे तो शैल के फोन की घंटी बजे जा रही थी। सबके मुँह से एक साथ निकला, "उन्हीं का होगा।"

३७४ ए-२, तिवारीपुर
जे.के. रेयान गेट नं.-२ के सामने, जाजमऊ
कानपुर-२०८०१० (उ.प्र.)
दूरभाष : ९९३५२६६६९३

लेखक का लॉकडाउन, लॉकडाउन में लेखन

• प्रेम जनमेजय

कोरोनाकाल में समाचार और आँकड़े बताते रहे कि कोरोना है, पर सड़कें और बाजार देखकर आभासित होता कि कोरोना नहीं है। यह वैसा ही आभासित होना है, जैसे सोशल मीडिया में साहित्य आभासित हो रहा है। ऐसा ही एक आभास उस लेखक को हुआ, जिसकी जितनी उम्र है, उससे दोगुना उसकी पुस्तकें हैं। इतने सब उत्पादन के बाद भी उसे वरिष्ठ कोई नहीं मानता है। ऐसे में उसने अपने गुरु से तुलना करते हुए पार्टी का अध्यक्ष बनने को आतुर किसी युवा नेता-सा अपने महत्त्व का मूल्यांकन किया। गुरुदेव की तो मुझसे तिहाई किताबें हैं, फिर भी वरिष्ठ साहित्यकार का सम्मान पाते हैं! ऐसे गुरु के चरण छूते समय उसकी टाँग खींच उसे ऐसी पटकनी देनी चाहिए कि वह अपंग हो जाए। पर असंमजस काल से तो वही घिसा गुरु निकाल सकता है। गधे ने घोड़े को बाप बनाने के इरादे से सोचा कि अभी तो बाप बना लेता हूँ, पर जब घोड़ा बनूँगा तो पहली दुलत्ती इसे ही झाड़ूँगा। ऐसे ही अनेक विचारों से संपन्न ज्ञानवान साहित्य का युवा नेता कोरोना को अपने साहित्य सा आभासित मान गुरु के द्वार पहुँच गया।

गुरु के द्वार पहुँचने से पहले उसने गुरु को व्हाट्सएप किया, 'बरसात के मौसम में आ रहा हूँ, नुक्कड़वाले की जलेबी और समोसे मँगवाकर तैयार रखें।'

गुरु जानते हैं कि आज का एकलव्य गुरु को दक्षिणा देता नहीं, उससे लेता है। यदि आज की युवा पीढ़ी की इच्छा का सम्मान गुरु न करे तो वह उसका सम्मान नहीं करती है। गुरु ने तुलसी को पढ़ा है—'भय बिनु होइ न प्रीति।' गुरु ने शिष्य के भूतकाल को भी पढ़ा है। वे उसके पराक्रम से परिचित हैं। इस वीर एकलव्य ने आठवीं कक्षा में शिक्षा देनेवाले गुरु द्वारा दंडित करने पर, एक घूँसे में गुरु का मुँह तीरों से लहूलुहान कर दिया था। इसलिए ही आधुनिक भयांक्रात गुरु द्रोण एकलव्य से अपना अँगूठा बचाने के लिए साहित्य के अँगूठा छाप को धनुर्धर का सम्मान देते-दिलाने का कुकर्म रचते हैं।

एकलव्य ने गुरु द्वारा परोसे गए दो समोसों का भक्षण किया। समोसे अच्छे लगे तो गुरु की आँखों में आँखें डाल, उनका अभिवादन किया। जलेबी की मिठास मन भाई तो मिठास भरे शब्दों में पूछ लिया, "कोरोना में किसी बात की जरूरत हो तो कहें, अपने बहुत चेले हैं।"

सुप्रसिद्ध व्यंग्यकार। अब तक सात व्यंग्य-संग्रह, बाल साहित्य पर तीन पुस्तकें, नवसाक्षरों के लिए दो पुस्तकें, दो आलोचना पुस्तकें प्रकाशित। अवंतिका सहस्राब्दी सम्मान, हरिशंकर परसाई स्मृति पुरस्कार, हिंदी अकादमी द्वारा 'साहित्यकार सम्मान', इंडो-रशियन लिटरेरी क्लब सम्मान सहित अनेक विशिष्ट सम्मानों से सम्मानित। लोकप्रिय व्यंग्य पत्रिका 'व्यंग्य-यात्रा' का संपादन।

"अपने लिए तुम ही बहुत हो। लेखन कैसा चल रहा है?"

"लेखन तो आपकी कृपा से लोगों की छातियों में साँप लोटा रहा है।" गुरु असंमजस में कि यह कृपा उन्होंने कब कर डाली!

"मेरे पास अपना किया सबकुछ है—किताबें है, भूमिका लेखक हैं, प्रकाशक हैं, फेसबुक और व्हाट्सएप पर हजारों लाईक हैं, चेले-चपाटे भी हो गए हैं, पर···"

'पर क्या नहीं··· ?'

"मैं वरिष्ठ लेखक क्यों नहीं हूँ?"

"अच्छा है नहीं हैं। वरिष्ठ लेखक होना आज के समय में किसी निर्भया-सा अपना सम्मान बचाने के लिए भयभीत जिंदगी जीना है।"

समोसे और जलेबी का पूर्ण स्वाह करने के बाद सम्मानजनक स्वर फूटा, "वो कैसे गुरुदेव!"

"इसके लिए मैं तुम्हें कोरोना काल में लॉकडाउन हुए एक वरिष्ठ लेखक की सत्य नारायणी कथा कहता हूँ, जिसके सुनने से तुम्हें साहित्य के ब्रह्म सत्यों में से कुछ का भान होगा।"

यह कथा कोरोना काल के आदिकाल की है। एक वरिष्ठ लेखक पर आलोचक उसे वरिष्ठ नहीं मानते थे।

कृष्ण यशोदा से पूछते थे—'मैया कबहुँ बढ़ेगी चोटी' और लेखक आलोचक से पूछता—'हे माई-बाप आलोचकवा! कबहुँ होऊ मैं चोटी का लेखकवा।' साहित्य में वरिष्ठ लेखक विशेषाधिकार प्राप्त जीव होता है। वरिष्ठ होते ही अध्यक्षता का उसे अधिकार मिलता है, वयोवृद्ध साहित्यकार में पुरस्कार/सम्मान पाने की योग्यता में वृद्ध होती है, भक्तों

को बाँटने के लिए रेवड़ियाँ मिलती हैं, आदि।

हिंदी में वरिष्ठ लेखक होने के अनेक मापदंड हैं। कुछ उम्र के कारण होते हैं, कुछ उम्र कितनी हो, सफेद बालों के कारण होते हैं। कुछ बाल रँगने के कारण इस दौड़ में पिछड़ जाते हैं। कुछ चेलों-चेलियों की संख्या के आधार पर होते हैं। सैनिकों की वरदी पर टँगे मेडल से पता चलता है कि उसने कितने युद्ध लड़े। प्राप्त सम्मान/पुरस्कार बताते हैं कि वरिष्ठ होने के लिए उसने कितने जुगाड़-युद्ध किए।

तू समझ कि परिवार में अधिकांश वरिष्ठ लेखक बेचारे बुड्ढे होते हैं। साहित्य में पुरस्कारिया मोती चुननेवाला हंस घर में मुरगी होता है। जब दाल महँगी होती है तो वह दाल बराबर भी नहीं रहता। साहित्य में चाहे वह हाई कमांड होता है, पर घर में पार्टी का तुच्छ कार्यकर्ता होता है। सुबह दूध लाना, साग-सब्जी लाना, बच्चों को स्कूल छोड़ने जाना जैसे अनेक महत्त्वपूर्ण दायित्व वृद्धों के ही होते हैं।

बाजार में सब्जी लेते ऐसे वरिष्ठ लेखक को प्रणाम कर कनिष्ठ साश्चर्य पूछता है—'प्रणाम गुरुवर! आप यहाँ···लाइए, मैं थैला पकड़ लेता हूँ।' ऐसे में वरिष्ठ केवल हैं···हैं कर हिनहिनाता है।

वरिष्ठ लेखक और उसकी उदासी शेयर बाजार के सेंसेक्स की तरह चढ़ती-उतरती रहती है।

कोरोना काल के आदिकाल में सभी लेखकों की तरह वरिष्ठ लेखक का भी लॉकडाउन हो गया। बुड्ढा घर में उदास है। कोरोना युग ने उसका लॉकडाउन कर दिया है। वैसे तो साहित्य के हर युग में लॉकडाउन का खेला चलता रहता है, माई-बाप! एक-दूसरे को डाउन करने के लिए अनेक वायरस अखाड़ेबाजों की प्रयोगशाला में तैयार किए जाते हैं। पट्ठे ऐसे वायरस द्वारा दूसरे अखाड़े के पट्ठों को संक्रमित करते हैं। और दूसरे अखाड़ेवाले पहले को करते हैं। ऐसे में पहला वो होता है, जो 'पहल' करता है। इन वायरस के कारण वरिष्ठ हो या कनिष्ठ, लॉकडाउन में रहने को विवश हो जाते हैं। तरह-तरह के वायरस और तरह-तरह के ताले। साहित्य में लॉक लगानेवालों की कमी कहाँ है। किसी के पास पुरस्कार न मिलने देने का ताला है, किसी के पास किताब को तुच्छ सिद्ध करने का, किसी के पास किताब न छपने देने का। 'हिंदी चीनी भाई-भाई' का नारा लगानेवाले अनेक प्रिय भाई अपने-अपने ताले लिये सुअवसर की तलाश में रहते हैं।

कोरोना काल के आदिकाल में सभी लेखकों की तरह वरिष्ठ लेखक का भी लॉकडाउन हो गया। बुड्ढा घर में उदास है। कोरोना युग ने उसका लॉकडाउन कर दिया है। वैसे तो साहित्य के हर युग में लॉकडाउन का खेला चलता रहता है, माई-बाप! एक-दूसरे को डाउन करने के लिए अनेक वायरस अखाड़ेबाजों की प्रयोगशाला में तैयार किए जाते हैं। पट्ठे ऐसे वायरस द्वारा दूसरे अखाड़े के पट्ठों को संक्रमित करते हैं। और दूसरे अखाड़ेवाले पहले को करते हैं। ऐसे में पहला वो होता है, जो 'पहल' करता है।

वरिष्ठ लेखक महोदय को अमुक अखबार से अमुक पत्रकार महोदय का फोन आया। वरिष्ठ लेखक महोदय पेट की कब्जियत मिटाने के लिए दो गिलास पानी पी चुके थे और तीसरा पीने की तैयारी में थे। तीसरे गिलास का एक घूँट अंदर गया ही था। पान गुल खिलने की सूचना देने लगा। तीसरा गिलास पानी का हो या फिर रसरंजनी का, गुल खिलाता ही है। गुल खिला और लेखकीय मन प्रसन्न हुआ।

'आप अमुक बोल रहे हो?'

'जी हाँ।'

'मैं अमुक अखबार से अमुक बोल रहा हूँ। हम एक परिचर्चा कर रहे हैं कि लॉकडाउन के समय में मशहूर लेखक क्या कर रहे हैं। संपादकजी ने बताया है कि आप मशहूर लेखक हो। बताएँ कि इस समय क्या कर रहे हो?'

'श्रीमानजी! इस समय तो मैं नित्यकर्म की तैयारी कर रहा हूँ।'

'नित्यकर्म!'

'टॉयलेट···टॉयलेट जाने की तैयारी कर रहा हूँ।'

'पत्रकार का दुर्गंध पीड़ित स्वर बोला—अच्छा···निबटो, निबटो··· पाँच मिनट बाद फोन करता हूँ।' पत्रकार को दूसरा मशहूर लेखक निबटाना था। अत: उसने उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना फोन बंद कर दिया। फोन क्या बंद हुआ, वरिष्ठ लेखक सदमे में आ गए। बड़ी मुश्किल से लॉकडाउन में कुछ हत्थे चढ़नेवाला था··· यह क्या तरीका हुआ···वरिष्ठ लेखक ने गाली बुड़बुड़ाई, कितनी जल्दबाजी है आज की युवा पीढ़ी में···साली शालीनता तो बची नहीं है, वरिष्ठ लेखक का कोई सम्मान नहीं, वरिष्ठ लेखक ने यदि मना किया तो कुछ अनुनय-विनय करो···फोन बंद कर दिया···पत्रकारिता जल्दी रसाताल में जानेवाली है। पर इस समय उनकी कब्जियत रसातल में चली गई थी। पानी के तीन गिलास, किसी पुरस्कार विहीन वरिष्ठ लेखक से निष्प्रभावी हो गए थे।

मिर्जा गालिब ने कभी कहा था—'पहले आती थी हाले दिल पे हँसी और अब किसी बात पे नहीं आती।' आज वरिष्ठ लेखक महोदय का हाल यह हो गया, पानी देवता की कृपा से जो आनेवाली थी···अब नेताई आश्वासन सी कोई उम्मीद भी नहीं आती, कोई सूरत नजर नहीं आती। पर 'प्रकृति' एक मार्ग बंद करती है तो दूसरा खोल देती है। इधर शरीर की कब्जियत खुलने का मार्ग बंद हुआ तो उधर साहित्यिक दुनिया की कब्जियत से पीड़ित वरिष्ठ लेखक का मार्ग खुला। लॉकडाउन के कारण साहित्य बंदी झेल रहा था—गोष्ठी बंद, पुरस्कार/सम्मान समारोह बंद, मुफ्तिया विदेश यात्राएँ बंद, युवा कवयित्रियों के स्पर्श बंद तथा और भी आदि बंद थे। सम्मानजनक शॉल से संपन्न अलमारी किसी विरहिणी-सी बाट जोह रही थी। जमीनी लेखक के जनता से जुड़ने का सुअवसर ऐसा ही था, जैसे लाइन हाजिर किए पुलसिए को पेट्रोलिंग का सुअवसर!

लेखक महोदय के सामने एक बड़ी चुनौती ने जन्म ले लिया था। पाँच मिनट बाद पत्रकार का फोन आना था। वह तो अज्ञानी है, वरिष्ठ

के योगदान को कहाँ जानता होगा! जरूर पूछेगा कि आपने क्या-क्या लिखा है? उस अज्ञानी के सामने अपना महिमागान स्वयं ही गाना होगा। महिमागान के लिए शब्द पिरोने की चुनौती थी। स्वयं को सरस्वती माता तुच्छ सेवक बताते हुए, शर्मीली भाषा में मैं कुछ नहीं कहते-कहते बहुत कुछ कहना था। लॉकडाउन के समय के रचनाकर्म को तुच्छ और अपने रचनाकर्म को महान् सिद्ध करने की बड़ी चुनौती पार्टी छोड़कर जानेवाले किसी बागी-सी शतरंज खेल रही थी।

बड़ी चुनौती के सामने छोटी चुनौती अकसर मात खाती है। कोरोना काल का समय बड़ी चुनौती है और उसके सामने मजदूरों के पाँव के छाले जैसी छोटी चुनौतियाँ मात खा गई हैं। वरिष्ठ लेखक का नित्यकर्म भी मात खा गया।

पत्रकार के फोन के कारण लेखक महोदय में शब्दों का वायरस जन्म लेने लगा। वैज्ञानिक नोट करें कि मोबाइल फोन से भी वायरस फैल सकता है। वायरस केवल लेखकों में नहीं नेता, मंत्री-संतरी आदि किसी में भी फैल सकता है। इस कारण जाना था जापान, पहुँच गए चीन वाला मामला हो जाता है। वायरस कोई भी हो, उसका संबंध चीन से होता ही है। कोरोना वायरस ने मनुष्य की जिंदगी को दूभर नहीं किया है, जितना फोन वायरस ने किया है। जब से फोन मोबाइल हुआ है, इसका वायरस फैलता ही जा रहा है। कोरोना का तो टीका निकल आएगा, पर मोबाइल की वैक्सीन असंभव सी है। मोबाइल वायरस प्रजातंत्र के कर्णधारों सा एक आवश्यक बुराई बन गया है।

जैसे मोबाइल वायरस के लाभ प्रकट हुए, कोरोना वायरस के सरकारी लाभ भी प्रकट होने लगे। नेट माता की कृपा से लॉकडाउन में हर उम्र का लेखक प्रसन्न है। साहित्यकार और प्रकाशकों का लॉकडाउन अनलॉक हो गया है। आयोजक प्रसन्न हैं। लेखक का अवसाद दूर हो रहा है। फेसबुक, व्हाट्सएप, यू-ट्यूब पर गोष्ठियों का वायरस फैल गया है। शॉल-किराए की हींग, सभागार की फिटकरी बिना गोष्ठी का रंग चोखा हो रहा है। लेखन की कब्जियत दूर हो गई है। रचनाओं के दस्त हो रहे हैं। वेबिनार के कुएँ में उछल-कूद जारी है। इस हमाम में छोटे-बड़े सभी नंगे बराबर हैं। समझ लें कि साहित्य में समाजवाद आ गया है। वरिष्ठ और कनिष्ठ का भेद समाप्त हो गया है। अत: तू भी अपने को वरिष्ठ समझ और कोरोना प्रभु की जय बोल कह—'हे कोरोना! तुम न जाना, जाओ तो जल्दी आना'।"

वरिष्ठता के अमर मार्ग पर चलनेवाले साहित्य-सेवी को लगा कि गुरु कोरनाईट हो गया है। तब तक समोसे, जलेबी भी निबट चुके थे और बटर चिकनवाले गुरु के आश्रम जाने का अवसर आ गया था। जो अवसर चूक जाता है, वह वरिष्ठ नहीं हो सकता। यह जान, वह अन्वेषी अवसर मार्ग पर चल पड़ा।

साअ

७३, साक्षर अपार्टमेंट्स
ए-३, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-११००६३
दूरभाष : ९८६८७७८४३८

कविता

जाग उठे है हम फिर से

● नरेश टांक

कविता, कहानी, लघुकथा, निबंध लेखन में अभिरुचि। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। 'एक चिनगारी और' काव्य-संग्रह शीघ्र प्रकाश्य। संप्रति राजकीय विद्यालय में हिंदी अध्यापक।

मंजिल अपनी दूर नहीं है

मंजिल अपनी दूर नहीं है।
हार हमें मंजूर नहीं है।

जो खूनी-हत्यारे थे
मुख पर झूठे नारे थे
बैठ गए सिंहासन पर
जो दुश्मन हमारे थे
सबक सिखाना है सबको
हम इतने मजबूर नहीं हैं।

हम मौका परस्त हो गए
अपने में ही मस्त हो गए
स्वयं को ही सब कुछ मानकर
स्वचिंतन में व्यस्त हो गए
जाग उठे हैं हम फिर से
अब नशे में चूर नहीं हैं।

हमको आकाश झुकाना है

हमको आकाश झुकाना है।
नया इतिहास बनाना है।

हमने मन में ठान लिया
हर बात को जान लिया
हुई हार तो क्या गम है
आँसू बेकार बहाना है।

छूट गई पतवार क्यों?
नाव फँसी मझधार क्यों?
लहरें हों कितनी भी ऊँची
लेकिन मंजिल को पाना है।

नहीं रुकेंगे ये कदम
चल रही हवाएँ भी गरम
कर्म की होती जीत सदा
ये हमने पहचाना है।

अंगारों से खेल चुके
हर आघात को झेल चुके
अपने हाथों से आज हमें
खुद अपना भाग्य बनाना है।

साअ

दरवाजा मौहल्ला, हनुमान मार्केट,
कोटकासिम (अलवर)
राजस्थान-३०१७०२
दूरभाष : ८००३६६७७७३

मुलायम चारा

● दीपक शर्मा

ड्राइवर नया था और रास्ता भूल रहा था।

मैंने कोई आपत्ति न की।

एक अजनबी गोल, ऊँची इमारत के पोर्च में पहुँचकर उसने अपनी एंबेसेडर कार खड़ी कर दी और मेरे सम्मान में अपनी सीट छोड़कर बाहर निकल लिया।

पाँच सितारा किसी होटल के दरबान की मुद्रा में एक संतरी आगे बढ़ा और उसने मेरी दिशा का एंबेसेडर दरवाजा खोला।

मैं एंबेसेडर से नीचे उतर ली।

ऊँची इमारत के शीशेदार गोल दरवाजे से बाहर तैनात दूसरे संतरी ने मुझे सलाम ठोंका और सरकते उस गोल दरवाजे का एक खुला अंश मेरी ओर ला घुमाया।

"आपका बटुआ, मैडम?" ड्राइवर लपकता हुआ मेरे पास आ पहुँचा।

"इसे गाड़ी में रहने दो," मैंने अपने कंधे उचकाए और मुसकरा पड़ी। स्कूल में हमें शिष्टाचार सिखाते हुए किस टीचर ने लड़कियों की भरी जमात में कहा था, 'अ लेड शुड ऑलवेज बी सीन कैरअंग अ पर्स' (एक भद्र महिला को अपने बटुए के साथ दिखाई देना चाहिए)? चालीस बरस पूर्व? बयालीस बरस पूर्व? जब मैं दसवीं जमात में थी? या आठवीं में?

मैंने गोल दरवाजा पार किया।

सामने लॉबी थी। उसके बाएँ कोने में एक काउंटर था और इधर-उधर सोफे बिछे थे। कुछ सोफों पर हाथ पैर पसारे कुछ लोग बैठे थे। मैं यहाँ क्या कर रही थी?

तभी एक पहचानी सुगंध मुझ तक तैर ली। मेरे पति यहीं-कहीं रहे क्या? सुगंध की दिशा में मैंने अपनी नजर दौड़ाई।

बेशक वही थे। यहीं थे।

ऊर्जस्वी एवं तन्मय। मुझसे कम-के-कम बीस साल छोटी एक नवयुवती के साथ।

मेरी उम्र के तिरपन वर्षों ने मैंने खूब पहना-ओढ़ा था किंतु मेरे पति अपने पचास वर्षों से कम उम्र के लगते। इधर दो-तीन वर्षों से उनके कपड़ों की अलमारी में रेशमी रुमालों और नेकटाइयों की संख्या में निरंतर और असीम वृद्धि हुई। बेशक अपनी उम्र से कम लगने का वह एक निमित्त कारण ही था, समवायी नहीं।

सुपरिचित लेखिका। अठारह लघुकथा संग्रह एवं पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। संप्रति क्रिश्चियन कॉलेज लखनऊ से स्नातकोत्तर अंग्रेजी विभाग से सेवानिवृत के बाद स्वतंत्र लेखन।

मैं लॉबी के काउंटर की ओर चल दी। वहाँ लगभग तीस वर्ष की एक युवती तीन टेलिफोनों के बीच खड़ी थी। सफेद सूती ब्लाउज के साथ उसने बनावटी जार्जेट की काली साड़ी पहन रखी थी। किस ने कभी बताया था मुझे कि सफेद और काले रंग को एक साथ जोड़ने से पैशाचिक शक्तियाँ हमारी ओर आकर्षित होकर हमारे गिर्द फड़फड़ाने लगती हैं। इशारे से हम उन्हें अपने बराबर भी ला सकते हैं। उन्हें अपने अंदर उतार सकते हैं। बिखेर सकते हैं। छितरा सकते हैं।

"कहिए मैम," युवती मेरी ओर देखकर मुसकराई।

"उधर उन अधेड़ सज्जन के साथ लाल कपड़ोंवाली जो नवयुवती बैठी हँस-बतिया रही है, वह कौन है?" मैंने पूछा।

"सॉरी," काउंटर वाली युवती ने तत्काल एक टेलिफोन का चोंगा हाथ में उठाया और यंत्र पर कुछ अंक घुमाने लगी, "जासूसी में हम किसी की सहायता करने में अक्षम रहते हैं।"

"बदतमीजी दिखाने में नहीं?" मैं भड़क ली।

"आप कौन हैं, मैम?" काउंटर वाली युवती चौकस हो ली।

"एक उपेक्षित पत्नी", मैंने कहा। मार्क ट्वेन ने कहाँ लिखा था, 'वेन इन डाउट, टेल द ट्रुथ' ('जब आशंका हो तो सच बोल दो')।

"मैं आपका परिचय जानना चाहती थी," काउंटर वाली युवती फिर से टेलिफोन यंत्र पर अंक घुमाने लगी, "आप परिचय नहीं देना चाहती तो न दीजिए। यकीन मानिए, अजनबियों में हमारी दिलचस्पी शून्य के बराबर रहती है।"

"आप फिर बदतमीजी दिखा रही हैं," मैं चिल्ला उठी, "मैं आपसे

बात कर रही हूँ। आपसे कुछ पूछ रही हूँ और आप हैं कि टेलिफोन से खेल रही हैं।"

मेरे पति भी अकसर ऐसा किया करते। जैसे ही मैं उनके पास अपनी कोई बात कहने को जाती, वे तत्काल किसी टेलिफोन वार्त्ता में स्वयं को व्यस्त कर लेते। बल्कि इधर अपने मोबाइल के संग वे कुछ ज्यादा ही 'एंगेज्ड' रहने लगे थे। फोन पर बात न हो रही होती तो एस.एम.एस. देने में स्वयं को उलझा लिया करते। और तो और, अपने मोबाइल फोन की पहरेदारी ऐसी चौकसी से करते कि मुझे अपने वैवाहिक जीवन के शुरुआती साल याद हो आते, जब मेरी खबरदारी और निगरानी रखने के अतिरिक्त उन्हें किसी भी दूसरे काम में तनिक रुचि न रहा करती। भारतीय प्रशासनिक सेवा में हम दोनों एक साथ दाखिल हुए थे, सन् सतहत्तर में और अठहत्तर तक आते-आते हम शादी रचा चुके थे। भिन्न जाति समुदायों से संबंध रखने के बावजूद।

"बदतमीजी तो आप दिखा रही हैं," काउंटरवाली युवती की आवाज भी तेज हो ली, "मैं केवल अपना काम कर रही हूँ।"

"मैं कुछ कर सकता हूँ, क्या मैम?" तभी एक अजनबी नवयुवक मेरे समीप चला आया। उसकी कमीज सफेद सूती रही, अच्छी और तीखी कलफ लगी। बखूबी करीजदार।

"मुझे उस नवयुवती की बाबत जानकारी चाहिए," मैं विपरीत दिशा में घूम ली। काउंटरवाली युवती से बात करते समय अपने पति के सोफे की तरफ मेरी पीठ हो गई थी।

"किस नवयुवती की बाबत जानकारी चाहिए, मैम?"

मेरे पतिवाला सोफा अब खाली था। मैं पुनः काउंटर की ओर अभिमुख हुई, "उधर उस किनारेवाले सोफे पर मेरे पति लाल कपड़ोंवाली एक नवयुवती के साथ बैठे थे। वे दोनों कहाँ गए, कब गए?"

"कौन दोनों?" काउंटरवाली युवती ठठाई।

"मैंने वे दोनों आपको हँसते-बतियाते हुए दिखलाए थे," मैंने कहा, "एक अधेड़ और एक नवयुवती।"

"सॉरी," काउंटर वाली युवती ने मुझसे अपनी आँखें चुरा लीं, "मैं कुछ नहीं जानती···"

"झूठ मत बोलो," गुस्से में मैं काँप उठी, "उन्हें उधर एक साथ बैठे देखकर ही तो मैं तुम्हारे पास आई थी।"

"सॉरी," काउंटर वाली ने अपने दाँत निपोरे, "मेरे पास निपटाने को बहुत काम बाकी हैं। मैं आपकी तरह खाली नहीं हूँ। मेरा समय कीमती है। व्यर्थ गँवा नहीं सकती।"

"आप मुझे बतलाइए, मैम!" अजनबी नवयुवक ने एक मंद हास्य के साथ स्वयं को प्रस्तुत किया, "मैं जरूर आपकी सहायता करना चाहूँगा।"

"मेरे पति की एक गर्ल फ्रेंड है," मैं ने कहा, "मुझे उसका नाम और पता चाहिए।"

"आपके पति का नाम और पता?" अजनबी नवयुवक का स्वर दुगुना विनम्र हो उठा। उसके चेहरे पर सहानुभूति भी आ बैठी।

"मेरे बटुए में हैं···"

"आपका बटुआ?"

"बाहर एंबेसेडर में रखा है।"

"एंबेसेडर का नंबर?"

"मुझे याद नहीं।"

"ड्राइवर का नाम?"

"ड्राइवर नया है।"

"लेकिन वह आपको जरूर पहचान लेगा। आप जैसे ही बाहर निकलेंगी वह आपके पास दौड़ा चला आएगा।"

"ठीक है, मैं अपना बटुआ लेकर लौटती हूँ।"

लॉबी में तैनात एक तीसरे संतरी ने शीशेदार, गोल दरवाजे का खुला अंश मेरे सामने ला आवर्तित किया एक सलाम के साथ।

बाहर पार्किंग में खड़ी सभी गाड़ियाँ एंबेसेडर थीं। सभी का रंग सफेद था और कतार में खड़े सभी ड्राइवर एक सी सफेद वरदी में थे।

"आपके ड्राइवर को बुलवाएँ, मैम?" अंदर आते समय जिन दो संतरियों ने मेरे संग जी-हुजूरिया बरती थी, वे दोनों मेरे सामने आ खड़े हुए। "ड्राइवर ही, गाड़ी नहीं," मैंने कहा, "वह मुझे मेरा बटुआ ला देगा।"

"लीजिए मैडम," कतार तोड़कर एक ड्राइवर मेरे पलक झपकते-झपकते मेरे बटुए के साथ प्रकट हुआ।

बटुआ मैंने उसके हाथ से ले लिया।

"चाय पियोगे?" मैंने पूछा।

ओट में खड़े वे दोनों संतरी भी मेरे पास चले आए।

बटुआ खोलकर मैंने पचास रुपए का नोट ड्राइवर के हाथ में थमाया, "तीनों लोग एक साथ चाय लेना।"

"जी, मैडम," तीनों ने समवेत स्वर में चाय की पावती का आभार माना और फिर मुझे सलामी दी। अपना शीशेदार, गोल, दरवाजा मेरी दिशा में सरकाते हुए।

मैं लॉबी में लौट ली।

"आप अपना बटुआ ले आईं, मैम?" मुझे देखते ही वह अजनबी नवयुवक मेरी ओर बढ़ आया।

अपने बटुए से अपने पति का कार्ड मैंने निकाला और उसकी ओर बढ़ा दिया।

उनका नाम पढ़कर वह मुसकराया।

"तुम उन्हें जानते हो?" मैंने पूछा।

"जी, मैम।"

"लाल कपड़ेवाली उस नवयुवती को भी?"

"जी मैम, आप उससे मिलना चाहेंगी?"

"वह यहीं काम करती है?"

"जी मैम। लिफ्ट से जाना होगा।"

लिफ्ट मेरे लिए नई थी, लेकिन मैं उसमें सवार हो ली।

रास्ते भर लिफ्ट में कई यात्री अपने-अपने गंतव्य तल पर पहुँचने के लिए उस पर चढ़ते और उतरते रहे।

अलबत्ता अंक दस तक आते-आते लिफ्ट में केवल मैं और वह अजनबी नवयुवक ही रह गए। अंक ग्यारह में जैसे ही रोशनी चमकी, उसने स्टॉप का बटन दबा दिया।

लिफ्ट रुक गई।

"आइए," नवयुवक ने अपना पैर लिफ्ट छोड़ने के लिए बढ़ाया तो मेरी निगाह उसकी पतलून पर जम गई।

पतलून काली थी। उसके जूतों की तरह।

"वह नवयुवती यहाँ बैठती है?" मैंने लिफ्ट न छोड़ी।

"जी मैम," अजनबी नवयुवक की आवाज गूँजी, "अभी आपसे मिलवाता हूँ, मैम। आप आइए तो मैम···।"

लिफ्ट के सामनेवाली दीवार बंद थी। बाईं एक दरवाजा लिए थी और दाईं ओर एक खिड़की। दरवाजा आयताकार था और खिड़की मेहराबी।

वह खिड़की की ओर बढ़ लिया, "इस पूरी इमारत में यह एक अकेली खिड़की है, जिसमें एयर कंडिशनर फिट नहीं हुआ है।"

"वह नवयुवती यहाँ बैठती है?" अपनी आवाज की कमान मैं अपने वश में रखे रही, "ग्यारहवें तल पर?"

"जी, मैम," उसने आगे बढ़कर खिड़की खोल दी, "अभी आपसे मैं मिलवाता हूँ।"

खिड़की के पट घिराव की दिशा में न खुले, बाहर दीवार में खुले।

"दरवाजा खुलवाएँ?" मैंने पूछा।

"पहले इस खिड़की पर आइए, मैम," उसकी आवाज ने दुहरी गूँज ग्रहण कर ली, "इसका यह दर्रा देखिए, इसकी मेंड़ देखिए, इसकी ढलान देखिए।"

"नहीं, पहले दरवाजा खुलवाएँगे।" मैं दरवाजे की ओर बढ़ ली।

"आप मेरी बात सुनती क्यों नहीं, मैम," उसने मेरे हाथ का बटुआ हथिया लिया, "मानती क्यों नहीं?"

तभी एक जोरदार तिलमिली और गुबार भरी गर्द मुझ पर टूट पड़ी।

दूर पार उनकी दिशा में उसने मुझे उछाला क्या?

मेरा सिर घूम लिया और मेरी समूची देह चक्कर खाने लगी··· अस्थिर, अरक्षित आकाश में। सूरज को छूती हुई, हवा को चीरती हुई, ग्यारहवें तल की ऊँचाई को पीछे छोड़ती हुई, भू-तल तक, गोल-गोल-गोल···खाली हाथ, तिरछे पाँव···चिटकने-फूटने हेतु···

स्थावर, शरण्य धरा के गतिरोध पर एक धमक के साथ।

बी-३५, सेक्टर-सी
निकट अलीगंज पोस्ट ऑफिस
अलीगंज, लखनऊ-२२६०२४

क्षणिकाएँ

बावला हो गया सूरज

• धर्मपाल महेंद्र जैन

पहली बारिश

तपती धरती को
छींटों से छेड़ गया बादल
इस मस्ती की महक
हवा में है।

दोपहर

धूप नदी में उतर
नहाने लगी
झिलमिलाती लहरों पर
तैरती रहीं मुस्तैद मछलियाँ
बावला हो गया सूरज।

प्यार

चट्टानों को बाँहों में भर
बेतहाशा चूमती है नदी
इस उम्मीद में कि एक दिन
आकार देगी पत्थर को
अपने मिजाज से।

नजदीकियाँ

बहुत बड़े हैं तारे, सुना है
दूर हैं इतने कि छोटे से लगते हैं
नजदीकियाँ जरूरी हैं
बड़ा होने के लिए।

1512-17 Anndale Drive,
Toronto M2N2W7, Canada
दूरभाष : 4162252415

कश्मीर के इतिहास में रिंचन भोट की भूमिका

• कुलदीप चंद अग्निहोत्री

कश्मीर के इतिहास में रिंचन भोट की बहुत चर्चा होती है। कुछ इतिहासकार रिंचन भोट को कश्मीर का पहला मुस्लिम शासक भी कहते हैं। यह भी कहा जाता है कि कश्मीर में पहली मसजिद रिंचन भोट ने ही बनाई थी, जिसे आज भी लद्दाखी मसजिद के नाम से स्मरण किया जाता है। यही कारण है कि रिंचन के राज्यकाल को कश्मीर के इतिहास का ऐसा मोड़ माना जाता हैं जहाँ से राज्य पुराने मार्ग को छोड़कर एक नए मार्ग पर चल पड़ा था। रिंचन को लेकर इस प्रकार के मिथक बनाने का काम ज्यादातर परवर्ती फारसी इतिहासकारों या साहित्यकारों ने ही किया। रिंचन को लेकर कश्मीर में फैली इस प्रकार की दंतकथाओं का विश्लेषण करना जरूरी है ताकि इतिहास के साथ नीर क्षीर न्याय हो सके। रिंचन भोट या रिंचन बौद्ध ने १३२० में कश्मीर की सत्ता सँभाली थी और उसके तीन साल बाद ही १३२३ में उसकी मृत्यु हो गई। रिंचन भोट के कश्मीर नरेश बनने और उसके बाद हटने की कथा जानने के लिए सप्त सिंधु क्षेत्र में विदेशी अरब व मंगोल आक्रमणकारियों को जान लेना भी जरूरी है क्योंकि कश्मीर घाटी विशाल सप्त सिंधु प्रदेश का ही हिस्सा है। ईस्वी सन् ७१२ में मोहम्मद बिन कासिम ने सिंध पर हमला किया और राजा दाहिर को पराजित कर सिंध को अपने कब्जे में कर लिया था और वह लंबे अरसे तक अरबों के कब्जे में ही रहा। जिस समय सिंध पर अरबों के हमले हुए, उस समय कश्मीर में महाप्रतापी ललितादित्य मुक्तापीड़ का शासन था, जिसके बारे में सिंध में यह कहा जाता था कि अरबों ने हमें तो पराजित कर दिया लेकिन अब कश्मीर में उनका सामना जब ललितादित्य से पड़ेगा तो अरबों को छटी का दूध याद आ जाएगा। लेकिन भारत में अरबों का यह हमला सिंध से आगे नहीं बढ़ सका। भारतीयों ने उसके प्रवाह को ग्यारहवीं शताब्दी तक वहीं रोके रखा। लेकिन अब तक अरबों की आँधी के स्थान पर इतिहास में तुर्कों/मंगोलों की दूसरी आँधी शुरू हो चुकी थी। इस्लामी जगत के अंदर अरबों का सिक्का सिमटने लगा और तुर्कों/मंगोलों का प्रभाव बढ़ने लगा था। लेकिन उससे पहले तुर्क और मंगोल बुद्ध का रास्ता छोड़कर हजरत मोहम्मद के रास्ते पर चल निकले थे। हिंदुस्तान का पश्चिमोत्तर यानि सप्त सिंधु क्षेत्र भी तुर्कों की जद में आ रहा था। पश्चिमोत्तर भारत/सप्त सिंधु की कश्मीर घाटी के पूरे इतिहास में चौदहवीं शताब्दी के पहले दो दशक यानि १३०० से लेकर १३२० तक का कालखंड बहुत महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि इसी कालखंड में रिंचन भोट का प्रभाव क्षेत्र कश्मीर घाटी में बढ़ा था। यदि यह कहा जाए कि कश्मीर घाटी के आधुनिक काल की तमाम समस्याओं के बीज इन्हीं दो दशकों में बोए गए थे तो भी अतिश्योक्ति नहीं होगी। लेकिन उससे पहले महमूद गजनवी के कश्मीर पर हमले की बात।

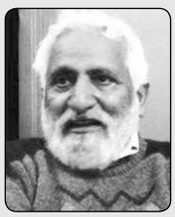

सुपरिचित लेखक। हि.प्र. केंद्रीय विश्वविद्यालय धर्मशाला के कुलपति हैं। भीमराव आंबेडकर पीठ के अध्यक्ष रहे। हि.प्र. में दीनदयाल उपाध्याय महाविद्यालय की स्थापना की। लगभग दो दर्जन से अधिक देशों की यात्रा, पंद्रह से भी अधिक पुस्तकें प्रकाशित। संप्रति भारत-तिब्बत सहयोग मंच के अखिल भारतीय कार्यकारी राष्ट्रीय संरक्षक और दिल्ली में 'हिंदुस्थान समाचार' के निदेशक।

२. कश्मीर पर महमूद गजनवी (९७१-१०३०) का हमला : महमूद गजनबी ने ग्यारहवीं शताब्दी के शुरू में ही भारत पर हमले शुरू कर दिए थे। वह दर्रा खैबर के रास्ते हिंदुस्तान पर हमला करनेवाला पहला तुर्क था। १०१४ में उसने कश्मीर पर हमला किया। वहाँ तो उसे सफलता नहीं मिली लेकिन हिंदुशाही वंश (जयपाल-आनंदराव-त्रिलोचनपाल) को परास्त करके उसने पश्चिमोत्तर भारत के अधिकांश हिस्सों पर कब्जा जरूर कर लिया। चाहे वह अपने कश्मीर जीतने के अभियान में सफल नहीं हो सका लेकिन, "इस अभियान में बहुत से तुर्क, ईरानी और खुरासानी मुस्लिम प्रचारक कश्मीर घाटी में जरूर प्रवेश कर गए। (१) अशोक कुमार पांडेय ने अपने ग्रंथ कश्मीरनामा में, मोहिबल हसन की पुस्तक 'कश्मीर अंडर सुलतांज' के प्रमाण उद्धृत करते हुए लिखा है कि 'महमूद गजनवी ने १०१५ और १०२१ में दो बार कश्मीर पर हमला किया और कश्मीर घाटी के दक्षिणी हिस्से में लूटपाट की और बहुत से लोगों का मजहब परिवर्तन करवाया।" (२) शैव/बौद्ध संस्कृति में पले बढ़े कश्मीरियों का इसलाम में नव मतांतरित मध्य एशिया के तुर्कों/मंगोलों से यह पहला वास्ता था। जिस प्रकार मध्य एशिया के लोगों को अरबों ने मतांतरित किया था अब उसी तरीके से मध्य एशिया के ये नव मतांतरित तुर्क/मंगोल भारत के लोगों को मतांतरित करना चाहते थे। तीन शताब्दी

पहले सिंध का सामना मोहम्मद बिन कासिम से हो चुका था और उसका परिणाम वह भुगत चुका था। अब कश्मीर का सामना महमूद गजनवी की फौज से हो रहा था। पश्चिमोत्तर भारत या सप्त सिंधु, तुर्कों के इन हमलों की जद में आ गया था। उसका एक हिस्सा कश्मीर पहले झटके से तो बच निकला था। लेकिन मराठी में कहावत है, बुढ़िया मर गई इस बात का गम नहीं, यमराज को घर का पता चल गया इस बात की चिंता है। लेकिन रघुनाथ सिंह कश्मीर पर पहले तुर्क हमलावर का नाम कज्जल बताते हैं। उनके अनुसार, "कश्मीर पर प्रथम विदेशी आक्रमण, तुर्क कज्जल का सन् १२८७ में हुआ था। यह प्रथम अवसर था जब विदेशी सेना ने कश्मीर में प्रवेश पाया था।"

३. तुर्कों/मंगोलों द्वारा सैयदों को चुनौती और उसका कश्मीर पर प्रभाव : मध्य एशिया के तुर्कों/मंगोलों के इस्लाम की शरण में चले आने से का अरबों को एक नुकसान हुआ कि इस्लामी जगत में अरबों का बर्चस्व समाप्त हो गया। अब इसलामी जगत में मध्य एशिया के तुर्कों व मंगोलों का बोलबाला होने लगा। यहाँ तक की तुर्कों द्वारा ओटोमन साम्राज्य की स्थापना से खलीफा का पद भी तुर्कों के कब्जे में आ गया। इसके साथ ही मध्य एशिया के तुर्कों और अरबों में विवाद भी बढ़े। दरअसल सैयद अरब अपने आप को इस्लाम का झंडाबरदार समझते थे/हैं। वे अपने आप को हजरत मोहम्मद के नवासों की वंश परंपरा में मानते हैं। हजरत अली से सैयदों की वंश परंपरा जुड़ती है। इस कारण इस्लामी जगत में सैयदों का स्थान सर्वोच्च माना जाता है। भारत की जाति व्यवस्था की पृष्ठभूमि में यदि, इस्लामी जगत में सैयदों की स्थिति को जानना हो तो उन्हें इस्लाम के ब्राह्मण कहा जा सकता है। या कम-से-कम वे अपने आपको ऐसा ही मानते हैं। उनकी मानसिकता रहती है कि इस्लाम में मतांतरित मध्य एशिया के लोग एक प्रकार की पराजित जातियाँ हैं जिन्हें सैयदों के चरणों में सजदा करना चाहिए और उनका मजहबी नेतृत्व स्वीकार करना चाहिए।

इसके साथ ही मध्य एशिया के तुर्कों और अरबों में विवाद भी बढ़े। दरअसल सैयद अरब अपने आप को इस्लाम का झंडाबरदार समझते थे/हैं। वे अपने आप को हजरत मोहम्मद के नवासों की वंश परंपरा में मानते हैं। हजरत अली से सैयदों की वंश परंपरा जुड़ती है। इस कारण इस्लामी जगत में सैयदों का स्थान सर्वोच्च माना जाता है। भारत की जाति व्यवस्था की पृष्ठभूमि में यदि, इस्लामी जगत में सैयदों की स्थिति को जानना हो तो उन्हें इस्लाम के ब्राह्मण कहा जा सकता है। या कम-से-कम वे अपने आपको ऐसा ही मानते हैं।

लेकिन मध्य एशिया का इस्लामीकरण होने के बाद, इस्लाम का भीतरी जातिगत संतुलन गड़बड़ा गया। सैयदों और तुर्कों/मंगोलों में जाने अनजाने वर्चस्व की लड़ाई छिड़ गई। सैयद जो स्वयं को इस्लामी जगत के पुरोहित मानते थे, उनकी यह हेकड़ी तुर्कों ने निकाल दी। इसका प्रभाव भारत पर भी पडा। तुर्कों/मंगोलों के सताए सैयद अरब ईरान से भाग कर भारत आने लगे। तेरहवीं शताब्दी के अंत और चौदहवीं शताब्दी के शुरू में तुर्कों/मंगोलों के सताए अनेक सैयद जिन्हें कलंदर भी कहा जाता है, कश्मीर घाटी में भी आए थे। इनमें से हजरत सैयद शरफुद्दीन अब्दुल रहमान उर्फ बुलबुल शाह का नाम सबसे ज्यादा जाना पहचाना है और कश्मीर आनेवाले कलंदरों में शायद वे पहले थे। सैयद बुलबुल शाह १३०१-१३२० के बीच में कश्मीर आया था। वह समरकंद से या तुर्किस्तान से, बुखारा से या फिर ईरान से भारत में आया था, इस पर अभी तक बहस चलती रहती है। वह अपने मित्र मुल्ला अहमद को साथ लेकर कश्मीर घाटी में ही बस गया। कुछ लोग यह भी मानते हैं कि वह एक हजार शिष्यों के साथ भारत में आया था, लेकिन इसका कोई प्रमाण नहीं है। यह जरूर कहा जाता है कि उसके साथ उसके दूसरे दो साथी सैयद कमालुद्दीन और सैयद जलालुद्दीन भी थे। वैसे तो उसके असली नाम को लेकर भी विवाद है लेकिन अपने आसपास के लोगों में वे बुलबुल शाह तुर्कस्तानी के नाम से ही जाना जाता था। इसका एक कारण उसकी सुरीली आवाज भी हो सकता है। बुलबुल शाह के नाम से जुड़ी एक और कथा भी है। उसका तख्खलस बिलाल था। इसी बिलाल से उसे बुलबुल शाह कहा जाने लगा। वह अपने आप को सुहरावर्दी सिलसिले का सूफी फकीर कहता था जो कश्मीर घाटी में इस्लाम का प्रसार करने के लिए आया था। इसलिए वह आम कश्मीरियों को आकर्षित करने के काम में लग गया था। भारत आने से पहले बुलबुल शाह अनेक साल बगदाद में भी रहा था। ज्ञान और साधना के क्षेत्र में आम कश्मीरी अरबों, तुर्कों व मंगोलों से इक्कीस ही ठहरता है। बुलबुल शाह उस समय के कश्मीरियों को कितना प्रभावित कर पाया होगा, इसमें संदेह ही है। इसलिए वह उस समय घाटी में इस्लाम की जड़ नहीं लगा सका। जिस समय बुलबुल शाह कश्मीर की घाटी में अपने लिए जमीन तलाश रहा था, उस समय कश्मीर में लोहरा वंश का शासन था और इस वंश के सहदेव या सुहदेव कश्मीर नरेश थे। सहदेव के राज्यकाल में कश्मीर घाटी में बाहर से आकर बहुत से लोग बस गए। राजा ने उन्हें प्रश्रय दिया। इसका जिक्र जोनराज ने अपनी राजतरंगिनी में किया है। श्रीकंठ कौल के अनुसार, "It appears from Jonraja's poetical language that Suhdeva was munificent in providing means of subsistence to outsiders, who had entered the valley in search of employment. In fact the outsiders were mercenary recruits, refugees and travelers patronised equally by the king and his rivals, the damars, in order to increase the number of their own retainers." (४) सहदेव ने लार घाटी के शक्तिशाली सरदार रामचंद्र को अपना प्रधानमंत्री बनाया था।

४. कश्मीर में तीन की तिकड़ी का आगमन : उन्हीं दिनों ईस्वी सन् १३०० से १३२० के बीच कश्मीर घाटी में तीन व्यक्ति और आए थे जिनको जाने बिना कश्मीर के इतिहास में आगे नहीं बढ़ा जा सकता। ये

तीन महानुभाव थे रिंचन, शाहमीर और लंकेर चक। वैसे ये तीनों वर्तमान जम्मू-कश्मीर के ही रहनेवाले थे। रिंचन लद्दाख का था, शाहमीर राजौरी का था और लंकेर चक गिलगित का रहनेवाला था। यदि यह कहा जाए कि कश्मीर घाटी के आधुनिक काल की तमाम समस्याओं के बीज इन्हीं दो दशकों में बोए गए थे तो भी अतिश्योक्ति नहीं होगी। अब इन तीनों महानुभावों के बारे में थोड़ा विस्तार से जान लेना जरूरी है।

(क) रिंचन-रिंचन : जिसे भोटी भाषा में, लहा चेन ग्यालबू रिन चेन लिखा जाता है, बौद्ध मत को माननेवाला था और लद्दाख के ना रुब राजवंश का राजकुमार था। भोटी भाषा में ग्यालबू का अर्थ ही राजकुमार होता है। वर्तमान जम्मू-कश्मीर राज्य के दो खंडों लद्दाख व बल्तीस्तान के शासकों में लड़ाई-झगड़े होते रहते थे। लद्दाखियों को पुराने ग्रंथों में वकतन्य भी कहा गया है। इसी प्रकार बलतियों को कालमान्य या मान्य भी कहा जाता है। इस्लाम में मतांतरण से पहले बलती भी बौद्ध थे। रिंचन के पिता ने लद्दाख की गद्दी पर कब्जा जमाया। लेकिन लद्दाखियों और बल्तियों की लड़ाईयों में रिंचन के पिता की हत्या कर दी गई। रिंचन ने अपने पिता की हत्या का बदला लिया या फिर उसके बाद स्वयं गद्दी सँभाली, इसके बारे में मतैक्य नहीं है। लेकिन इतना स्पष्ट है कि उसके अपने प्राण संकट में पड़ गए। इसलिए वह अपने विश्वस्त साथियों के साथ वहाँ से भागकर जोजीला के रास्ते कश्मीर में आ गया। रिंचन ने कश्मीर में लार संभाग में नीलग्राम, या नील या नीलाह या नीलाश पर कब्जा जमाया। सहदेव ने रिंचन को कश्मीर से इसलिए नहीं भगाया क्योंकि वह लार घाटी में लावण्य या डामर रामचंद्र के बढ़ते प्रभाव को रोकना चाहता था। उधर रामचंद्र ने रिंचन का विरोध इसलिए नहीं किया क्योंकि वह सहदेव की शक्ति को कम करना चाहता था। कश्मीर के दुर्भाग्य से जिस समय लद्दाख का रिंचन पूर्व दिशा से घाटी में पैर पसार रहा था, उसी समय मंगोल दुल्चु ने बारामूला या बराहमूल की पश्चिम दिशा से कश्मीर पर हमला कर दिया। यह माना जा सकता है कि रामचंद्र ने रिंचन का विरोध न कर उसे अपनी शक्ति बढ़ाने के लिए इस्तेमाल किया। इससे रामचंद्र को क्या लाभ हुआ यह विवादास्पद हो सकता है लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि इससे रिंचन का रुतबा लार घाटी में अवश्य बढ़ गया। जोनराज तो यह कहता है कि कश्मीर के लोग दुल्चु और रिंचन के दो पाटों के बीच में पिस रहे थे। उसने उस समय के कश्मीरी डामर रामचंद्र से मित्रता स्थापित कर ली और कश्मीर नरेश सहदेव से भी नजदीकियाँ बनाईं। वह जल्दी ही रामचंद्र और सहदेव के विश्वस्तों में गिना जाने लगा। (६) कुछ इतिहासकार रिंचन को लद्दाख के राजवंश का नहीं मानते। वह लद्दाख के राजवंश का था या नहीं इस पर मतभेद हो सकता है लेकिन इसमें कोई बहस नहीं है कि वह बौद्ध था।

(ख) शाहमीर : शाहमीर वर्तमान जम्मू-कश्मीर के बुधाल और राजौरी के बीच पंचगहवरा घाटी में स्वादगिर का रहनेवाला था। वह वहाँ से १३१३ में कश्मीर घाटी में आया था। कश्मीर में एक दंत कथा यहक भी है कि शाहमीर के दादा को स्वप्न आया था कि शाहमीर एक दिन कश्मीर का राजा बनेगा। उस स्वप्न से उत्साह में आकर उसने शाहमीर को राजौरी छोड़कर परिवार सहित कश्मीर चले जाने के लिए कह दिया। यह भी कहा जाता है कि शाहमीर के दरबारियों ने ही अपने मालिक की प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए इस कथा का अविष्कार किया था। शाहमीर के स्वप्न की कथा का जिक्र जोनराज ने भी राजतरंगिनी में किया है। हो सकता है कालांतर में यहीं से यह कथा कश्मीरी जनमानस में घर कर गई हो। शाहमीर खश जाति का राजपूत था। उन दिनों हिमालयी क्षेत्र में खश, किन्नर, किरात, निषाद इत्यादि जातियाँ बहुतायत में थीं। जोनराज ने द्वितीय राजतरंगिनी में शाहमीर को स्वात का बताया है, जो क्षत्रिय कुल का था लेकिन जिसके पूर्वज इस्लाम पंथ में दीक्षित हो गए थे। जोनराज ने अपनी राजतरंगिनी में शाहमीर के वंश के बारे में विस्तार से लिखा है। लेकिन इसके लिए उसने मोटे तौर पर भाटों की शैली का ही अनुसरण किया लगता है। शाहमीर के वंश को उच्चता प्रदान करने के लिए उसने सीधे ही उसे महाभारत के वभ्रुवाहन से जोड़ दिया। जोनराज ने शाहमीर को पांडवों के वंश से जोड़कर उसके वंश को तो शिखर पर पहुँचा दिया लेकिन अपनी विश्वसनीयता पर प्रश्नचिन्ह लगा लिया। डॉ. रघुवीर सिंह ने जोनराज की राजतरंगिनी के हिंदी अनुवाद की भूमिका में शाहमीर की वंशावली निम्न प्रकार दी है। "पार्थ वभ्रुवाहन कुरुशाह शाहमीर। जिसका अर्थ है कि वह कुरुवंश से ताल्लुक रखता था। ऐसा कोई ऐतिहासिक साक्ष्य नहीं मिलता जिससे शाहमीर का पांडवों से संबंध जुड़ता हो। उसके किसी पुरखे का नाम पांडव हो सकता है जिसे बाद के इतिहासकारों ने महाभारत के पांडवों से जोड़ दिया। श्रीकंठ कौल के अनुसार, "शाहमीर खश जाति का लुटेरा हो सकता है जो सुहदेव की सेना में काम करता था।" प्रो. बलराज मधोक शाहमीर को खुरासानी मानते हैं। लेकिन इसका कोई प्रमाण उन्होंने भी नहीं दिया।

परवर्ती फारसी इतिहासकारों ने जोनराज की नकल करते हुए शाहमीर को महाभारत के पांडव परंपरा से जोड़ दिया। बी.एन. अहमद भी शाहमीर को महाभारत काल के अर्जुन की कुल परंपरा का मानता है। अबुल फजल के अनुसार भी शाहमीर महाभारत के अर्जुन की कुल परंपरा का था। फरिश्ता भी शाहमीर को अर्जुन का वंशज ही मानता है। उसके अनुसार, "सन् १३१५ में जब कश्मीरियों का शासन सहदेव नामक राजा के हाथ में था, कश्मीर में एक व्यक्ति जिसका नाम शाह मिर्जा था, फकीरों के वेश में आया और राजा के कर्मचारियों में प्रवेश प्राप्त कर लिया। शाह मिर्जा अपने आप को अर्जुन का वंशज बताता था। और अपने वंश का शिजरा इस प्रकार बताता था। शाह मिर्जा माहिर-बिन-आलबिन गर शासफ बिन नकोदर। नकोदर के बारे में शाह मिर्जा का विचार था कि यह व्यक्ति अर्जुन के वंश से था जो पांडव के नाम से प्रसिद्ध है।" लेकिन यदि यह मान भी लिया जाए कि शाहमीर अर्जुन के वंश का ही था तो अब वह अर्जुन की कुल परंपरा और विरासत को बहुत पीछे छोड़ आया था। उस के पुरखों ने इस्लाम मजहब स्वीकार कर लिया था। लेकिन उसके पुरखों ने कब इस्लाम ग्रहण किया था, इसका कहीं उल्लेख नहीं मिलता। अनुमान लगाया जा सकता है कि यह ग्याहरवीं-बारहवीं शताब्दी में ही हुआ होगा। शाहमीर क्षत्रिय कुल का था इसलिए स्वभाविक ही वह भी

राजा के पास अपने अनुकूल किसी कार्य की तलाश में जाता और ऐसा उसने किया भी। सहदेव ने उसे अपने दरबार का हिस्सा बनाया और बारामुला में उसे एक गाँव की जागीर प्रदान की। सहदेव ने शाहमीर का किस प्रकार स्वागत किया इसका जिक्र करते हुए जोनराज कहता है," भूपति ने उसे उसी प्रकार अनुगृहीत किया जिस प्रकार आम का वृक्ष भ्रमरों को करता है।

(ग) अलंकार चक्र अथवा लंकेर चक : लंकेर चक अथवा अलंकार चक्र गिलगित दर्दस्तान का रहनेवाला था। वह अपने कुछ संगी साथियों के साथ कश्मीर में आया और उसने तरेहगाम गाँव में डेरा जमाया। वह डामर प्रमुख था। कुछ विद्वान लंकेर चक को गुरेज का रहनेवाला भी मानते हैं। चक या चक्र क्षत्रिय कुल के माने जाते हैं और स्वभाव से लड़ने-भिड़नेवालों में इनकी गिनती होती है। गिलगित में इस्लाम का प्रवेश कश्मीर घाटी से पहले हो चुका था। चक जाति के बहुत से लोग इस्लाम की ओर जा रहे थे। लेकिन इसके बाबजूद उनका आचरण और व्यवहार हिंदू या बौद्ध ही रहा। उनके नाम भी हिंदू तर्ज पर ही रहे। लंकेर चक के अलावा एक दूसरा चक सरदार हिलमत भी इसी कालखंड में गिलगित से कश्मीर में आया और उसने कुपवाड़ा में अड्डा जमाया। इन चकों ने शाहमीर, जिसने कालांतर में अपने षड्यंत्रों के चलते कश्मीर की गद्दी पर कब्जा कर लिया था,के राज्य में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। बाद में तो चकों ने ही कश्मीर की गद्दी पर कब्जा कर लिया था।

जोनराज लिखता है "दिगंतर से वृत्ति लिप्सा से प्रवेश किए, अनेक लोगों ने राजा का आश्रय ग्रहण किया था।" यह घटना सन् १३०१ की है। राजा की उदारता से आश्रय एवं शरण प्राप्त यह विषवृक्ष कश्मीर में पनपने लगा। इससे पूर्व हिंदू राजाओं की नीति थी कि वे किसी विदेशी को कश्मीर में न प्रवेश करने देते थे और न आबाद होने देते थे। इस नीति त्याग का कारण हिंदू राजाओं का दुर्बल होना तथा सीमांत से कश्मीर में इस्लाम में मतांतरित हो चुके तुर्कों एवं मंगोलों का प्रवेश और दबाब था।" कश्मीर नरेश सहदेव की उदारता का लाभ उठाते हुए रिंचन, शाहमीर और लंकेर चक जब कश्मीर घाटी में जब अड्डा जमा चुके थे, तभी कश्मीर के दुर्भाग्य से कश्मीर पर एक मंगोल आक्रांता दुल्चु ने हमला किया।

५. कश्मीर पर मंगोल दुल्चु का हमला और कश्मीर नरेश सहदेव का पलायन : महमूद गजनवी के हमलों के बाद तुर्कों के हमले उत्तर भारत के दूसरे हिस्सों पर तो जारी रहे लेकिन उन्होंने कश्मीर की ओर रुख नहीं किया था। इसका एक कारण शायद शुरू में कश्मीर में महमूद गजनबी की असफलता की कहानियाँ भी रही हों। लेकिन जब उत्तरी भारत पर मंगोलों के हमले शुरू हुए और उन्होंने दिल्ली में स्थापित हो चुकी तुर्कों की सल्तनत को हिलाना शुरू कर दिया तो मंगोलों की मार में कश्मीर भी आ गया। एक मंगोल सरदार दुल्चु ने सन् १३२० में अपने सत्रह हजार सैनिकों के साथ कश्मीर पर हमला कर दिया। कुछ इतिहासकार दुल्चु को लद्दाख नरेश कर्मसेन का सेनापति मानते हैं लेकिन ऐसा मुमकिन नहीं लगता क्योंकि उस कालखंड में लद्दाखियों ने कश्मीर घाटी पर हमला किया हो, ऐसा जिक्र इतिहास में कहीं नहीं आता। डॉ. रघुनाथ सिंह, दुल्चु को तुर्कस्तानी मंगोल मानते हैं। मंगोलों ने भारत पर सभी हमले अफगानिस्तान के रास्ते ही किया। इसलिए दुल्चु भी बारामुला के रास्ते कश्मीर में आया होगा।" सहदेव ने उसका सामना करने की कोशिश की। उसे धनराशि देकर संतुष्ट करने का प्रयास भी किया। लेकिन वह न तो उसका सामना कर सका और न ही उसे खरीद सका। प्रजा की रक्षा करते हुए रणभूमि में मर जाने का साहस उसमें नहीं था। तब पीठ दिखा कर भागने के अतिरिक्त उसके पास कोई विकल्प नहीं बचा था। वह भागकर किश्तवाड़ चला गया। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि वह भागकर तिब्बत चला गया था। वह भागकर कहाँ गया, इससे ज्यादा अंतर भी नहीं पड़ता। लार घाटी में वर्चस्व जमाए डामर रामचंद्र ने भी लार या लहर के किले में स्वयं को अपने परिवार सहित बंद कर लिया। उसके साथ उसके कुछ गिने चुने विश्वस्त सैनिक थे। अब कश्मीर घाटी में दुल्चु का विरोध करनेवाला कोई नहीं था। वह निरंतर आठ महीने कश्मीर घाटी में लूटमार करता रहा। निर्दयता से लोगों की हत्या की गई। खेत खलिहानों को जला दिया गया। हजारों स्त्री, पुरुषों और बच्चों तक को गुलाम बना लिया गया। कश्मीर में लूटमार कर दुल्चु को तो आखिर लौट ही जाना था। कश्मीर में सभी कुछ नष्ट हो जाने के कारण भुखमरी के हालात पैदा हो गए थे। घाटी में सर्दी शुरू हो गई थी। दुल्चु किसी छोटे रास्ते से वापिस लौटना चाहता था। कश्मीरियों ने उसे जो छोटा रास्ता बताया, वह उसकी मौत का रास्ता था। वैसे भी दिल्ली में राजनीतिक हालात बदल रहे थे। "सुल्तान मुबारक शाह का कत्ल हो गया था। दुल्चु ने इसका फायदा उठाने के लिए जल्दी से जल्दी दिल्ली की ओर प्रस्थान करने की सोची। वह जम्मू के रास्ते जा रहा था। बनिहाल पहुँचते-पहुँचते वर्फबारी ने घेर लिया और दुल्चु समेत सभी वहीं हिम समाधि में चले गए।" कश्मीरियों ने उसे जिंदा लौट जाने का अवसर प्रदान नहीं किया। दुल्चु के बाद कश्मीर नरेश सहदेव वापिस अपने राज्य में लौटा।

६. रामचंद्र द्वारा राजसिंहासन सँभालना : लेकिन अब कश्मीर की गद्दी पर कब्जा करना इतना आसान नहीं था। संकट काल में उसके कायरतापूर्ण व्यवहार के कारण आम लोगों में उसका कोई सम्मान नहीं बचा था। रामचंद्र ने ही उसके पैर नहीं लगने दिए। रामचंद्र उसे परास्त कर स्वयं कश्मीर की राजगद्दी पर काबिज हो गया। लेकिन लोगों के मन में अब इन कायरों के प्रति कोई सम्मान नहीं बचा था। दुलचा के आक्रमण और लूट के बाद कश्मीर में कोई शासन व्यवस्था बची ही नहीं थी। अकाल के हालत पैदा हो गए थे। आक्रमण काल में रिंचन और शाहमीर ने आम जनता से संपर्क बनाए रखा था। दोनों ने शायद यह अनुमान भी लगा लिया था कि सहदेव अब किसी उपयोग का नहीं रहा था। दोनों ने ही सहदेव के उपकारों को भूलने में क्षण मात्र नहीं लगाया। रिंचन ने रामचंद्र के महल में अपने कुछ विश्वस्त भोट सैनिक भी तैनात कर दिए थे और स्वयं किसी उपयुक्त समय की ताक में रहने लगा था।

७. रिंचन भोट का कश्मीर का शासक बनना : राम चंद्र के भाग्य में ज्यादा देर तक राजा बने रहना नहीं लिखा था। उसके दोनों सहयोगी, रिंचन और शाहमीर आपस में मिल गए। वे जनता के सुख दुख

के साथी बनने लगे और उसका विश्वास जीतने का प्रयास करने लगे। रिंचन ने अपने सैनिकों को वस्त्र व्यापारियों के रूप में रामचंद्र के महल में भेजना शुरू कर दिया। एक दिन व्यापारियों के भेष के इन सैनिकों ने रामचंद्र की उसके महल में ही हत्या कर दी और रिंचन ने अपने आप को कश्मीर का बादशाह घोषित कर दिया। ६ अक्तूबर, १३२० को उसका राज्याभिषेक हुआ। लेकिन राजा बनने से पहले ही उसने रामचंद्र के परिवार से सामंजस्य बनाने का प्रयास भी किया। रामचंद्र की बेटी कोटा देवी से शादी कर ली। रिंचन राजा बना और कोटा देवी महारानी। इतना ही नहीं उसने रामचंद्र के बेटे रावणचंद्र को भी छोटी-मोटी जागीर दे दी।

७.१ रिंचन द्वारा भोट विहार का निर्माण : रिंचन कश्मीर का राजा हो गया है, इसकी खबर लद्दाख में भी पहुँची। रिंचन लद्दाख का रहने वाला था। कश्मीर में जाने के बाद भी उसका लद्दाख से रिश्ता टूटा नहीं था। लद्दाख से बौद्ध भिक्षु, लामा और दूसरे साधारण लद्दाखी, उससे मिलने के लिए श्रीनगर आने लगे। वैसे भी उन दिनों कश्मीर में बौद्ध मत का प्रभाव बचा हुआ था। रिंचन के अपने विश्वस्त सैनिकों में से भी कुछ लद्दाखी भोट थे। इसलिए उसने इन सभी की सुविधा व भोटों की पूजा व्यवस्था व निवास के लिए राजमहल के समीप ही एक मठ या विहार का निर्माण करवाया। श्रीनगर में यह विहार, भोट विहार या लद्दाख विहार के नाम से प्रसिद्ध हो गया। रिंचन ने गरीब लोगों की भोजन व्यवस्था के लिए इसी इलाके में एक सार्वजनिक लंगरखाना भी खोला, जहाँ कोई भी गरीब या निराश्रित भोजन कर सकता था और रह भी सकता था। मध्य एशिया के तुर्कों/मंगोलों के सताए हुए जो सैयद कश्मीर में आ गए थे, उनमें से भी अनेक यहाँ भोजन करते थे। निराश्रितों के रहने की व्यवस्था हो जाने के कारण इसे खानगाह भी कहा जाने लगा। बुलबुल शाह भी उसी विहार में रहने लगा और वहीं लंगर में भोजन करने लगा। वहीं बुलबुल शाह नमाज भी पड़ता होगा। इतना निश्चित है कि बुलबुल शाह की अब तक शाहमीर के साथ नजदीकियाँ बन ही गई होंगी। इसलिए रिंचन के राजमहल के नजदीक बने लंगरखाने में ठहरने और मठ में नमाज पढ़ने में उसे कोई असुविधा नहीं हुई होगी।

कश्मीर घाटी में वह हिंदू राजा रामचंद्र की हत्या करके राजा बना था। उसने रामचंद्र के परिवार के सदस्यों से तो समझौता कर लिया था। उसकी बेटी कोटा देवी से विवाह करके और उसके बेटे रावणचंद्र को राज्य प्रशासन में ऊँचा पद देकर। लेकिन वह जानता था कि यदि लंबे समय तक राज करना है तो घाटी के कश्मीरी समुदाय से मान्यता लेनी ही होगी। उस समय तक कश्मीरी समुदाय मोटे तौर पर हिंदू या बौद्ध ही था।

७.२ कश्मीर की लोक कथाओं में रिंचन द्वारा इस्लाम की शरण में चले जाने की दंतकथा : हिंदुस्तान की सभी भाषाओं में कश्मीरी भाषा ही ऐसी भाषा है जो लोक साहित्य या लोक गाथाओं के मामले में सर्वाधिक समृद्ध कही जा सकती है। कहा जाता है कि कश्मीर का शासक बनने के बाद रिंचन ने इस्लाम पंथ को स्वीकार कर लिया और मुसलमान हो गया। मुसलमान होने के बाद उसने अपना नाम भी बदल लिया। अब वह सुल्तान सदरुदीन हो गया था। फारसी इतिहासकार उसे इसी नाम से संबोधित करते हैं। ऐसा भी कहा जाता है कि अब भगवान् बुद्ध के स्थान पर बुलबुल शाह, रिंचन के इस्लामी गुरु हुए। यह ऐसा यक्ष प्रश्न है जिसका उत्तर दिए बिना कश्मीर के इतिहास में आगे नहीं बढ़ा जा सकता। लेकिन उससे भी ज्यादा रुचिकर वह तरीका हे जिसके अनुसार रिंचन को मुसलमान पंथ में शामिल होते दिखाया है। वह मुसलमान कैसे बना, इसको लेकर जो कथा प्रचलित हुई है, उसके लिए ऐतिहासिक साक्ष्य तो नदारद है ही लेकिन उसमें तार्किक श्रृंखला भी गायब है। लेकिन लोक साहित्य का अध्ययन करनेवाले जानते हैं कि दंत कथाओं में जिज्ञासा व मनोरंजम का तत्व प्रमुख होता है, तर्क के लिए उतना स्थान नहीं रखा जाता। पीढ़ी-दर-पीढ़ी लोग उसमें कुछ-न-कुछ जोड़ते रहते हैं। कश्मीरी जनमानस में प्रचलित इस लोक कथा के दो हिस्से हैं—

(क) पंडितों द्वारा रिंचन को हिंदू बनाने से इनकार करना : ऐसा कहा जाता है कि रिंचन, काश्मीर नरेश बनने के बाद, हिंदू बनने के बारे में सोचने लगा था। लद्दाख का होने के कारण उसे कश्मीर घाटी में अपनी जड़ें जमानी थीं। कश्मीर घाटी में वह हिंदू राजा रामचंद्र की हत्या करके राजा बना था। उसने रामचंद्र के परिवार के सदस्यों से तो समझौता कर लिया था। उसकी बेटी कोटा देवी से विवाह करके और उसके बेटे रावणचंद्र को राज्य प्रशासन में ऊँचा पद देकर। लेकिन वह जानता था कि यदि लंबे समय तक राज करना है तो घाटी के कश्मीरी समुदाय से मान्यता लेनी ही होगी। उस समय तक कश्मीरी समुदाय मोटे तौर पर हिंदू या बौद्ध ही था। घाटी में कुछ संख्या में मुसलमान भी थे, लेकिन उस समय ये मुसलमान कश्मीरी नहीं थे बल्कि उनमें ज्यादातर अरब, ईरान इत्यादि से आए हुए विदेशी सैयद ही थे। सैयद उसको मान्यता दें या न दें, इससे रिंचन की स्थिति में बहुत ज्यादा फर्क नहीं पड़नेवाला था। क्योंकि ये विदेशी सैयद तो स्वयं अपने लिए कश्मीर घाटी में स्थान तलाश रहे थे। ऐसी स्थिति में उसका बौद्धमत त्यागने का एक ही कारण हो सकता था कि वह कश्मीर घाटी के बहुमत की विरासत से स्वयं को जोड़ना चाहता हो। इसका उसने प्रयास भी किया। घाटी के हिंदू समुदाय से उसने अनुरोध किया कि उसे भी उस समय कश्मीर में प्रचलित हिंदुत्व के शैवमत का अनुयायी बना लें। लेकिन हिंदू समुदाय मिशनरी समुदाय तो है नहीं। किसी को हिंदू कैसे बनाया जा सकता है, उस समय यह सचमुच बहस और विवाद का विषय ही हो सकता था। पंडितों में इसको लेकर बहस हुई। कहा जाता है कि देवस्वामी ने इस पर विचार करने के लिए विद्वानों की सभा बुलाई। परिणाम वही था कि हिंदू के घर में जन्म लेकर ही हिंदू बना जा सकता है। उसने रिंचन को शैवमत में दीक्षा देने से इनकार कर दिया।

यह कथा कि देवास्वामी ने रिंचन को शैव मत में लेने से इनकार कर दिया, विश्वसनीय नहीं लगती। प्रथम तो यही कि हिंदुओं की स्थिति उस समय ऐसी नहीं थी कि वे मौके के बादशाह को इनकार कर सके। दूसरे

इस्लाम और ईसाइयत की तरह हिंदू कोई संगठित मजहब नहीं है जिसमें शामिल होने के लिए किसी रस्म या अनुमति की जरूरत पड़ती हो। न ही हिंदुओं में ऐसा अकेला व्यक्ति प्राधिकृत होता है, जिसे शैव या अन्य किसी मत की देने के लिए प्राधिकृत हो। देवस्वामी ने इनकार किया तो राजा किसी दूसरे स्वामी को पकड़ सकता था। चौदहवीं शताब्दी में लद्दाख का बुद्धमत, वज्रयान में विकसित हो चुका था जिसे बुद्धमत और कश्मीर के शैवमत का संश्लेषण कहा जा सकता है। बज्रयान और शैवमत में बहुत ज्यादा फासला नहीं है। चौदहवीं शताब्दी का कश्मीर लोकतांत्रिक व्यवस्था वाला नहीं था कि राजा को राज करने के लिए प्रजा से स्वीकृति लेना अनिवार्य हो। न ही उस समय कश्मीर की जनता उस स्थिति में थी कि बलपूर्वक गद्दी पर बैठे राजा को हटा सके। इसलिए राजा/रिंचन का हिंदू समाज का हिस्सा बनने के लिए देवस्वामी की शरण में जाने की बात गले नहीं उतरती।

(ख) रिंचन द्वारा प्रतिकार में इस्लाम को स्वीकार कर लेना : जितनी कृत्रिम, हिंदू समाज में जाने की इच्छा की कथा है, उससे भी ज्यादा कृत्रिम रिंचन के मुसलमान बन जाने की है। रिंचन हिंदू समाज की स्वीकृति चाहता था, यह तो फिर भी स्वीकार किया जा सकता है, लेकिन वह मुसलमान किस उद्देश्य से बनेगा जब उस समय कश्मीर में मुसलमानों की संख्या उँगलियों पर ही गिनी जा सकती थी। मुस्लिम समाज से मान्यता प्राप्त करके रिंचन को क्या हासिल होनेवाला था ?

रिंचन को लेकर दूसरी कथा उसके मुसलमान हो जाने की है। यह कथा पहली कथा के दूसरे हिस्से के रूप में प्रचलित है। इसके अनुसार देवास्वामी द्वारा हिंदू समाज का हिस्सा बनाने से इनकार करने से रिंचन को निराशा हुई। इसलिए नहीं कि वह हिंदू समुदाय के दार्शनिक ग्रंथों का अध्ययन कहने से बंचित हो गया। बल्कि इसलिए कि घाटी के बहुमत ने उसके शासन को मान्यता नहीं दी। उसके बाद वह सैयदों की ओर मुडा। कम-से-कम किसी गुट का समर्थन तो उसे हासिल करना ही था। इस मामले में शाहमीर ने उसकी सहायता की। शाहमीर के पुरखे पहले ही मुसलमान बन चुके थे। इसलिए शाहमीर की घाटी में रहनेवाले कुछ छोटे मोटे सैयद फकीरों से जान पहचान भी थी और कईयों से गहरी दोस्ती भी। घाटी में कहीं-कहीं ताजा-ताजा मुसलमान बने तुर्क और मंगोल भी बसेरा बनाने लगे थे। वैसे तो शाहमीर को भी घाटी में सैयदों के समर्थन की जरूरत थी। सैयदों को भी ऐसे समर्थक चाहिए थे जिनकी पहुँच राजदरबार तक हो। शाहमीर तो राज दरबार का हिस्सा ही था। उस समय एक ही सैयद फकीर ऐसा था जिसकी थोड़ी बहुत चर्चा होती थी, वह बुलबुल शाह था। उस समय शाहमीर ने रिंचन को इस्लाम में खींच लाने की सोची। क्योंकि यदि रिंचन इस्लाम को स्वीकार कर लेता है तो कम से कम वे दोनों हम मजहब हो जाएँगे। इसका भविष्य में शाहमीर को लाभ हो सकता था। रिंचन के मन में इस बात को लेकर निश्चय ही गुस्सा होगा कि हिंदुओं ने राजा को भी हिंदू बनाने या अपना मानने से इनकार कर दिया है। गुस्से के साथ निराशा रही ही होगी। शायद इसीलिए यह प्रचलित हुआ होगा कि रिंचन मुसलमान हो गया है।

इस कथा के अनुसार रिंचन ने निर्णय किया कि सुबह उठकर वह अपने महल से बाहर निकलेगा, जिस व्यक्ति का वह सबसे पहले मुँह देखेगा, उसी के मजहब को वह स्वीकार कर लेगा। दूसरे दिन जैसे ही वह बाहर निकला तो बुलबुल शाह उसके महल के सामने नमाज पढ़ता हुआ दिखाई दिया। अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार रिंचन ने इस्लाम मत स्वीकार कर लिया और वह मुसलमान हो गया। लेकिन इस कथा के भीतर का खोखलापन, इस पूरी मनघडंत कथा का मुँह चिढ़ाता है। सुबह उठकर मुँह देखने पर रिंचन के पास तीन ही विकल्प थे।

१. यदि सुबह रिंचन के मत्थे कोई हिंदू लग जाता तब भी वह हिंदू नहीं बन सकता था, क्योंकि हिंदुओं ने तो उसे हिंदू बनाने से पहले ही इनकार कर दिया था। इसलिए सुबह किसी हिंदू के मत्थे लगने या न लगने का विकल्प तो पहले ही खत्म हो चुका था।

२. दूसरा विकल्प किसी बौद्ध के मत्थे लगने का था। वह विकल्प वास्तव में था ही नहीं क्योंकि रिंचन तो स्वयं बौद्ध ही था और इसी मत को वह छोड़ना चाहता था।

३. इसलिए अब राजनैतिक लिहाज से उसके पास केवल मुसलमान हो जाने का रास्ता बचा था। और कोई मजहब मसलन ईसाई या यहूदी उस समय कश्मीर घाटी में था ही नहीं।

कुछ विद्वान यह कहते हैं कि रिंचन ने बौद्ध, हिंदू और इस्लाम, इन तीनों मतों का गहराई से अध्ययन किया, इन मतों के विद्वानों से लंबी चर्चाएँ कीं। अंत में उसे इस्लाम मत ही सर्वश्रेष्ठ लगा। इसलिए उसने मुसलमान बनने का फैसला कर लिया। लेकिन इसका कोई पुख्ता आधार नहीं मिलता। रिंचन मूलत बौद्ध मत को माननेवाला था। वह लद्दाख के राजवंश से ताल्लुक रखता था। बौद्ध मत उसके पुरखों का पंथ था। इसलिए वह उसे विरासत में मिला था। वह शासक वर्ग से ताल्लुक रखता था। वह अरस्तु का 'दार्शनिक राजा' नहीं था जिसने विभिन्न मतों का मर्म समझने के लिए दार्शनिक परिषदों के सम्मेलन किए हों और उसके उपरांत इस्लाम को स्वीकार करने की सार्वजनिक घोषणा की हो। रिंचन कोई बहुत बड़ा नामी गिरामी दार्शनिक भी नहीं था जो बौद्ध मत के दर्शन से निराश होकर उसे त्यागने का निर्णय कर बैठा है।

यदि रिंचन सचमुच मुसलमान हुआ होता तो यकीनन वह अपनी प्रजा को भी इस्लाम में खींचने की कोशिश करता लेकिन इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। यहाँ तक की उसकी पत्नी कोटा रानी भी मुसलमान नहीं बनी थी। रिंचन के बहुत बाद जब कश्मीर में अधिकांश प्रजा का मत परिवर्तन हो गया होगा तब सैयदों ने यह कथा अपने एक पूर्व साथी बुलबुल शाह कलंदर का प्रभामंडल निर्माण करने के लिए रची होगी। प्रो. अब्दुल क्यूम रफीकी के अनुसार, "यह कथा इस्लाम को महिमामंडित करने और सैयद शरफुद्दीन की चमत्कारी शक्तियों को स्थापित करने के लिए गढ़ी गई लगती है।"

मध्यकाल के एक अन्य इतिहासकार हैदर मलिक ने फारसी भाषा में तारीख-ए-कश्मीर की रचना की। हैदर मलिक ने भी रिंचन के मुसलमान बन जाने का जिक्र किया है। उसने भी लगभग उपरी कथा को ही दोहराया

है। उसके अनुसार, "रिंचन ने काफिरों यानि हिंदुओं को बुलाकर कहा कि मुझे अपने पंथ के बारे में बताओ। तब उनके झूठे पंथ से उसकी संतुष्टि नहीं हुई। तब उसने सीधे अल्लाह को संबोधित किया। अल्लाह ने अपनी दया के दरवाजे उसके लिए खोल दिए। उसका भाग्य अच्छा था, उसने अल्लाह की रोशनी में फैसला किया कि कल सुबह उसको जो पहला व्यक्ति अपने महल के बाहर मिलेगा, वह उसी के मजहब को स्वीकार कर लेगा। दूसरे दिन जब वह अपने महल से बाहर आया तो उसने अपने घर के बाहर एक व्यक्ति प्रार्थना करने में लीन था। इससे पहले उसने प्रार्थना का यह तरीका नहीं देखा था। उसको विश्वास हो गया कि प्रार्थना का यह तरीका पाखंडरहित है और यही प्रार्थना भगवान द्वारा स्वीकृत की जाती है। रिंचन ने उस व्यक्ति से उसका नाम और मजहब पूछा। उसने अपना नाम बुलबुल और मजहब इस्लाम बताया और राजा को इस्लाम के बारे में समझाया। क्योंकि ये सभी बातें बुलबुल के दिल से निकल रही थीं, इसलिए इन बातों ने रिंचन के दिल पर सीधा असर किया। वह इस्लाम की मजबूत रस्सी पर चल पड़ा। तब रिंचन ने इस्लाम के प्रसार के ऐसे प्रयास किए कि सारी प्रजा मुसलमान हो गई।" हैदर की कथा में एक ही पेंच है। उसके अनुसार रिंचन ने किसी आदमी को नमाज पढ़ते पहली बार देखा था। तुर्क/मंगोल दुल्चु आठ महीने पूरी घाटी में कत्लेआम करता रहा और लूटमार करता रहा। दुल्चु की सेना में मध्य एशिया के हजारों मुसलमान थे जो कुछ शताब्दियों पहले बुद्धमत छोड़कर मुसलमान बने थे। यह आश्चर्य की बात है कि इन आठ महीनों में रिंचन ने किसी मुसलमान को नमाज पढ़ते देखा नहीं था। रिंचन का दूसरा साथी शाहमीर था। दुल्चु के सैनिक तो नमाज पढ़ने में फिर भी कोताही कर सकते थे लेकिन शाहमीर को भी इतने साल में रिंचन ने कभी नमाज पढ़ते नहीं देखा। इस पर हैदर मलिक के परवरदगार तो विश्वास कर सकते हैं कोई कश्मीरी कैसे विश्वास कर सकता है जिसका संवाद ही तर्क से शुरू होता है। जब रिंचन ने अल्लाह से सीधा संवाद स्थापित कर लिया और उसे वह इलाही प्रकाश प्राप्त हो चुका था तो 'जो पहले मिलेगा उसी का मजहब स्वीकार कर लूँगा' की कथा तो अपने आप अप्रासांगिक हो जाती है। इस कथा में तो यह संभावना बची ही रहती है कि दरवाजे पर कोई भी मिल सकता है। इसका अर्थ तो यह हुआ कि यदि सचमुच रिंचन मुसलमान बना ही था तो वह इलाही प्रकाश होने की वजह से नहीं बल्कि एक सैयद के गहरे षड्यंत्र में फँस कर बना था। यदि वह कभी मुसलमान बना ही नहीं था तो यह कथा कश्मीर के हिंदू समाज में सैयद बुलबुल शाह की प्रतिष्ठा बढाने के लिए रची गई। इसलिए कहानी का यह हिस्सा गढ़ने की जरूरत नहीं थी क्योंकि यदि हिंदुओं ने उसको हिंदू नहीं बनाया थो तो वह सीधा मुसलमान ही बन सकता था। घाटी में और कोई मजहब था ही नहीं जिसमें जाने का विकल्प उसके पास हो ? तब पूरी कहानी में सैयद बुलबुल शाह को क्यों घसीटा गया है ? इसका मकसद सिर्फ इतना ही है कि सैयद घाटी में अपना रुतबा बढ़ाना चाहते थे और आम कश्मीरियों का यह कहकर डराना चाहते थे कि तुम्हारा राजा ही हमारे कहने पर चलता है, हमसे मार्गदर्शन लेता है तो तुम्हारी क्या औकात है ?

हैदर अली की इस कथा को वर्तमान काल में भी सत्य मानने और बतानेवाले एक दूसरे व्यक्ति श्रीनगर के सैफुद्दीन सोज भी यही मानते हैं कि "बुलबुल शाह ने रिंचन को मुसलमान बनाया और जब कश्मीर के लोगों ने अपने राजा को मुसलमान बनते देखा तो तुरंत उसका अनुकरण करते हुए मुसलमान हो गए।" बुलबुल शाह ने रिंचन को मुसलमान बनाया, इसको लेकर तो पक्ष विपक्ष में फिर भी मतभेद हैं लेकिन अपने राजा को मुसलमान बनते देख सारे कश्मीरी मुसलमान बन गए, यह रहस्योदघाटन पहली बार सोज ने ही किया है। यह अलग बात है कि इस रहस्योदघाटन को विश्वसनीय बनाने के लिए न तो उन्होंने कोई स्रोत बताया है, न ही कोई तर्क दिया है और न ही उस समय की घटनाओं की कोई ऐसी सिलसिलेवार व्याख्या की है कि उनकी इस बात पर विश्वास किया जा सके। लेकिन फिर भी वे मानते हैं कि रिंचन, जो लद्दाखी बौद्ध था, ने एक दिन पहले इस्लाम को पकड़ा और दूसरे दिन से सभी कश्मीरी भेड़ों की तरह उसका अनुसरण करते हुए मुसलमान होने लगे, और उसके राज के तीन साल के अल्पकाल में सारे कश्मीरी मुसलमान हो गए। हैदर मलिक से प्रमाण की आशा करना तो मध्यकालीन फारसी इतिहास लेखन की शैली को देखते हुए उचित नहीं होगा लेकिन सोज तो मध्य युग के नहीं बल्कि इक्कीसवीं शताब्दी में रहते हैं, फिर भी दंत कथाओं को इतिहास का रंग दे रहे हैं। फारसी इतिहासकार निजामुद्दीन और फरिश्ता भी रिंचन के मुसलमान बनने की कथा को स्वीकार नहीं करते। वे रिंचन को काफिर बताते हैं। वे शाहमीर को ही कश्मीर का पहला मुस्लिम सुल्तान मानते हैं।"

कहा जाता है कि बुलबुल शाह ने रिंचन के अलावा दस हजार के लगभग और लोग मुसलमान बनाए। इसके प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं। यह संभव है कि रिंचन के शासन काल में ईरान, अरब, और मध्य एशिया के अलग-अलग स्थानों से आकर दस हजार के लगभग मुसलमान कश्मीर घाटी में आकर बस चुके हैं। कालांतर में फारसी इतिहासकारों ने इन विदेशी शरणार्थियों को कश्मीरी मुसलमान कहना व लिखना शुरू कर दिया हो।

यह भी कहा जाता है कि दिंवगत सेनापति रामचंद्र के बेटे रावणचंद्र ने इस्लाम मत को स्वीकार कर लिया। लेकिन उसकी बहन और रिंचन की पत्नी कोटा रानी ने इस्लाम स्वीकार नहीं किया। यह तभी संभव था जब रिंचन ने उस पर इस्लाम स्वीकार करने के लिए दबाब न डाला हो। यदि रिंचन सचमुच मुसलमान बन गया था और उसने दस हजार के लगभग कश्मीरियों को भी मुसलमान बना लिया था तो यकीनन वह अपनी पत्नी कोटा रानी को भी मुसलमान बनने के लिए कहता। परंतु कोटा रानी हिंदू ही थी, इसको लेकर कोई विवाद नहीं है। अत: यह कथा कि रिंचन भगवान बुद्ध की शरण छोड़कर हजरत मोहम्मद के रास्ते पर चल पड़ा था, कपोल कथा से ज्यादा मायने नहीं रखती। लगता है परवर्ती फारसी इतिहासकारों ने बुलबुल शाह का रुतबा बढ़ाने और उसे महिमामंडित करने के लिए, उसके हाथों तत्कालीन कश्मीर नरेश के मुसलमान हो जाने की कथा प्रचलित की। दरअसल शाहमीर वंश और चक वंश के

शासनकाल में जब बड़ी संख्या में कश्मीरी इस्लाम मजहब में मतांतरित हो गए होंगे और विदेशी सैयदों का दबदबा भी प्रशासन में बढ़ गया होगा तो तो परंपरा को प्राचीन सिद्ध करने की जरूरत महसूस हुई होगी। उसके लिए किसी मुल्ला-मौलवी को मगिमामंडित करना जरूरी था और उसके हाथों कोई बड़ा शिकार करवाना और भी जरूरी था। इसी जरूरत के कारण इन इतिहासकारों ने सैयद बुलबुल शाह का गान गाना शुरू किया। इस प्रशस्ति गान को पंचम स्वर तक ले जाने के लिए बुलबुल शाह के हाथों कोई बड़ा शिकार मरवाना अनिवार्य था। इस्लाम की सेवा में राजा रिंचन के शिकार से बड़ा शिकार क्या हो सकता है? यहीं से रिंचन के मुसलमान बनने और बुलबुल शाह के उसके महल के बाहर बैठे होने की कथा ने जन्म लिया लगता है।

७.३ रिंचन के शासन का अंत : रिंचन ने अपने विश्वस्त मित्र शाहमीर को अपना मंत्री बनाया था। कोटा रानी से रिंचन को एक पुत्र प्राप्ति हुई। लेकिन रिंचन को देर तक शासन करने का अवसर नहीं मिला। कश्मीर में ही कुछ लोग शुरू से ही उसको अपदस्थ करने के प्रयास में लगे थे। ऐसे ही एक विद्रोही विप्लव में रिंचन घायल हो गए। शासन संभालने के तीन साल बाद ही १३२३ में इन्हीं चोटों के चलते रिंचन की मौत हो गई। रिंचन पर हमला करनेवाले ये हमलावर कौन थे, इसको लेकर कश्मीर की लोक कथाओं में विवाद चलता रहता है। यह भी कहा जाता है कि इन हमलावरों को शाहमीर की शाह थी या फिर यह शाहमीर का ही षड्यंत्र था, जिसे उसने उस समय के तुर्क व मंगोल पनाहगीरों की सहायता से पूरा किया था। रिंचन के देहांत के बाद उसकी पत्नी कोटा देवी ने शासन व्यवस्था की बागडोर अपने हाथ में ले ली थी। कोटा रानी का शासन १३३९ ईस्वी तक रहा। कोटा रानी कश्मीर की अंतिम हिंदू साम्राज्ञी मानी जाती है। रिंचन की मौत के लगभग तीन चार साल बाद १३२६/७ में सैयद बुलबुल शाह की भी मौत हो गई। रिंचन की मौत के बाद उस द्वारा स्थापित भोट विहार भी उजड़ गया। जब तक कोटा रानी रही तब तक तो वह बौद्ध विहार किसी-न-किसी प्रकार चलता रहा। वैसे भी रिंचन की मृत्यु के बाद लद्दाख से भोटों का आना निश्चित ही कम हो गया होगा। रिंचन के बाद शासक बना शाहमीर, जिसके पुरखे बहुत साल पहले मतांतरित होकर इस्लामपंथी हो गए थे, एक बौद्ध विहार की सहायता क्यों करता? लंगरखाना तो चलता ही राजकीय सहायता से था। उसमें भोजन करनेवाले ज्यादातर लद्दाख से आनेवाले भोट ही होते थे, अत: उसका बंद होना भी निश्चित था। वैसे भी शाहमीर के राजा बन जाने से अब कलंदरों और उनके शिष्य अन्य सैयदों को भोजन के लिए सार्वजनिक लंगरखाना की जरूरत नहीं रही थी।

जब तक शासन कोटा रानी के हाथों में रहा तब तक तो यह भोट विहार व लंगर चलता रहा लेकिन कोटा रानी को अपदस्थ कर जब शाहमीर ने कश्मीर की गद्दी पर कब्जा कर लिया तब एक प्रकार से लंगरखाना और भोट विहार दोनों के ही दुर्दिन शुरू हो गए। किसी ने इस मठ की ओर ध्यान नहीं दिया, इसलिए यह जीर्ण-शीर्ण होने लगा। शाहमीर को इसकी जरूरत नहीं थी क्योंकि उसके पुरखे अरसा पहले अपना पंथ त्याग कर इस्लाम पंथ में चले गए थे। यदि यह मसजिद होती तो शाहमीर जरूर मरम्मत ही नहीं करवाता बल्कि इसे भव्य स्वरूप भी देता। यह भोट विहार राजमहल के पास था इसलिए यह लोकमानस से तो गुम नहीं हुआ, लेकिन इसके भौतिक रूप को काल चट कर गया। लेकिन उत्तरवर्ती मुस्लिम इतिहास का हिस्सा बन गया। कालांतर में जब कश्मीर घाटी के स्थानों, गाँवों, मंदिरों/मठों के नामों के इस्लामीकरण का अभियान चला (जो किसी-न-किसी रूप में अभी तक चल रहा है) धीरे-धीरे यह बौद्ध मठ, कश्मीर में, भोट मसजिद के नाम से जाना जाने लगा। यह कथा भी प्रचलित होने लगी कि यह भोट मसजिद रिंचन ने बुलबुल शाह के लिए बनाई थी। इसलिए अब कश्मीर में पहली मसजिद बनाने का जिम्मेदार भी रिंचन को ही माना जाने लगा। यह कथा कश्मीरी जनमानस में तो प्रचलित है परंतु इसका कोई ऐतिहासिक प्राथमिक साक्ष्य उपलब्ध नहीं है। ज्यादातर विद्वान इसी के आधार पर इस बात को पक्का मानते हैं कि रिंचन बुलबुल शाह के हाथों मुसलमान हो गए थे और इस खानगाह व मसजिद को प्रमाण के तौर पर पेश करते हैं। लेकिन कश्मीरी लोक साहित्य में बुलबुल शाह का कहीं जिक्र नहीं आता। वह मसजिद भी जिसे बुलबुल शाह के लिए बनाया गया कहा जाता है, कश्मीरी मानस में जिंदा नहीं है। इस तथाकथित मसजिद की वास्तुकला भी बौद्ध विहार के ज्यादा नजदीक ठहरती है। कालांतर में जब अधिकांश कश्मीर घाटी इस्लाम की शरण में चली गई, कश्मीर की भाषा भी फारसी हो गई तो जन स्मृति में वह बौद्ध विहार, मसजिद के नाम से ही जाना जाने लगा। दशकों बाद इस मसजिद के स्थान की तलाश शुरू हुई। वह स्थान मिल जाने के बाद वहाँ उस जीर्ण शीर्ण बौद्ध विहार को गिराकर नई मसजिद का निर्माण करवाया गया। लेकिन जन स्मृति में अब भी वह भोट मसजिद या लद्दाखी मसजिद के नाम से ही जानी जाती है।

इसी प्रकार रिंचन की मौत के बाद धीरे-धीरे कश्मीरी समाज में उसको लेकर भी अनेक कथाएँ प्रचलित होने लगीं। उनमें से एक कथा यह थी कि रिंचन का बेटा मुसलमान हो गया था। रिंचन की मृत्यु के समय उसके बेटे की आयु मुश्किल से दो साल की थी। शाहमीर, जो एक प्रकार से रिंचन के परिवार का ही सदस्य था। (लेकिन बाद में उसमें रिंचन के परिवार को धोखा ही नहीं दिया बल्कि उसके दो साल के बेटे की हत्या की और रिंचन की पत्नी को आत्महत्या के लिए विवश किया), उस बच्चे को खान या हैदर खान के नाम से पुकारता था। मंगोल क्षेत्रों में राजा को खान भी कहा जाता है। शाहमीर, रिंचन को खुश रखने के लिए या फिर उसको धोखा देने के लिए उसके साल दो साल के बेटे को भी खान कहता था, इसीलिए बाद के कुछ इतिहासकारों ने रिंचन के बेटे को मुसलमान बताना शुरू कर दिया। यह अलग बात है कि रिंचन की मौत के तुरंत बाद शाहमीर ने उसके बेटे की भी हत्या कर दी।

साअ

कुलपति
हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय
धर्मशाला-१७६२१५ (हि.प्र.)
दूरभाष : ९४१८१७७७७८

कोरोना बनाम सोना

● सतपाल

कोरोना का रोना-रोना तो निरंतर है और इसके हालात में आता नहीं कोई अंतर है, मगर कोरोना और सोना में कुछ-न-कुछ रिश्ता है, जो कष्ट के रूप में रिसता है। कोरोना भी सोना की तरह चुपचाप सोया रहता है, निष्क्रिय रहता है। इतना निष्क्रिय कि खुद वार नहीं करता, खुद-ब-खुद सक्रिय होने में यकीन नहीं करता और जब इनसान गलतियाँ या लापरवाही करता है, तो स्वत: लापरवाही और गलती करने वालों की दुर्गति कर देता है। दूसरे शब्दों में कोरोना स्वाभिमानी है। वह इनसान के बुलावे पर ही उसका बेहया मेहमान बनता है और मुश्किल से पल्ला छोड़ता है। इनसान द्वारा की गई गलतियाँ और लापरवाहियाँ ही उसके लिए बुलावा है। इस बुलावे पर जब कोरोना मेहमान बनता है तो पक्का अतिथि बन जाता है और फिर जोंक की तरह चिपक जाता है। ऐसा जोंक, जो जमकर खून चूसता है और किसी तरह की रोक टोक पसंद नहीं करता। अगर शराफत से, मान-सम्मान से उसकी मेहमाननवाजी की जाए तो वह एक समय सीमा के बाद अलविदा कह देता है वरना जान लेने में भी संकोच नहीं करता।

कोरोना और गोल्ड यानी सोने के बीच भी कई समानताएँ हैं। दोनों निकम्मे और निष्क्रिय हैं, दोनों आराम-पसंद हैं और गहरी नींद के शौकीन हैं। दोनों को किसी काम काज से कुछ लेना देना नहीं है। ये सोये-सोये बढ़ते हैं। सोना बढ़ता है तो उसका भाव बढ़ता है। उधर कोरोना बढ़ता है तो उसके मामले बढ़ते हैं, ऐसे में दोनों फूले नहीं समाते। दोनों को इस बात पर गर्व है कि इनसान को उपलब्धियों के लिए कड़ी मेहनत करनी होती है, जबकि हम दोनों बिना कुछ किए एक दिन में न जाने कितने शतक जड़ देते हैं? ऐसी उपलब्धि पर इनसान को पदम सम्मान मिलते हैं मगर कोरोना और सोने की उपलब्धियों पर इनसान ताली बजाने की भी सहृदयता नहीं दिखाता। इनसान इतना खुदगर्ज है कि हमारी उपलब्धियों पर वह मातम, जैसे माहौल में गमगीन दिखाई देता है। आखिर इनसान किस मिट्टी का बना है कि उसे दूसरों के घर में आई बहार पर संताप का आभास होता है। कोरोना और सोना ने कहा कि हमारी तरह इनसान को भी दिल बड़ा रखना चाहिए। न जाने कब से इनसान का स्वभाव संकुचित बन गया है, जो न्यायोचित नहीं रहा? इनसान है कि मानता नहीं, हकीकत पहचानता नहीं। कोरोना और सोने ने कहा कि हम श्योर हैं, जबकि इनसान के दिल में काला चोर है। कोरोना और सोने ने कहा, "हम रंगभेद में विश्वास नहीं करते, समानता का व्यवहार करते हैं, मगर इनसान रंगभेद पर आधारित राजनीति करता है, दरअसल इनसान कोरी राजनीति नहीं अपितु अवसरवादी राजनीति करता है, इसलिए इनसानों में लूट, फूट तथा टूटन के काफी तत्त्व मौजूद हैं।"

वर्तमान में एक प्रमुख कार्यालय में परामर्शदाता (कंसल्टेंट) कई वर्षों तक दिल्ली सरकार में सूचना अधिकारी के रूप में सेवारत रहे, आकाशवाणी तथा दूरदर्शन के समाचार कक्ष में तीन दशक तक संपादन-कार्य, नियमित रूप से समाचार-पत्रों में साप्ताहिक कॉलम-दिल्ली, देश दुनिया का लेखन, कई लेख हिंदी और अंग्रेजी समाचार-पत्रों में प्रकाशित।

कोरोना और सोने की स्पीड यानी गति लाजवाब है, ऐसी गति है कि ओलंपिक्स में दौड़ और कूद के सारे पदक जीतने की उनमें क्षमता है। उन्होंने कहा कि हम बढ़ते हैं तो देश में कोई जश्न नहीं मनाया जाता। इनसान हमारी मंद गति पर संतोष भी व्यक्त नहीं करता और हमारी फर्राटेदार गति पर उसे जैसे साँप सूँघ जाता है। सोना बढ़ता है तो इनसान कंजूसी से खर्च करने लगता है और जब कोरोना छलाँगें लगाता है तो मातम में डूब जाता है। सोना बढ़ता है तो इनसान आर्टिफिशियल ज्वैलरी की तरफ दौड़ता है, आखिर क्यों न करे उसे दिखावटी प्यार करने का चसका जो लगा हुआ है। कोरोना दौड़-दौड़कर ब्राजील को पछाड़कर दूसरे पायदान पर पहुँचा तो माडिया ने इस खबर को कोई अहमियत नहीं दी बल्कि उसे बेदर्दी से प्रकाशित किया। कोरोना अगर आसमान भी छू ले तो मीडिया इसे नोटिस नहीं करेगा। न जाने इनसान को कोरोना से जलन और नफरत क्यों है, हालाँकि उसने हमें अभी तक देखा नहीं है। दरअसल कोरोना इनसान को चाँद तक पहुँचने का

आसान तरीका बता सकता है बशर्ते वह कोरोना के साथ सद्भावपूर्ण व्यवहार करे। कोरोना सद्भाव बनाना चाहता है और वह नहीं चाहता कि भारत का 'मून मिशन' एक बार फिर नाकाम हो। अगर इनसान अब भी सुधरता है तो वह फायदे में रहेगा। कोरोना तो अदृश्य है और वह पड़ोसी देशों से सीक्रेट लाकर उसकी जानकारी दे सकता है, जिससे देश की रक्षा पंक्ति मजबूत बनेगी। कोरोना ने कहा "इनसान हमें थोड़ा सा पेट भरने दे तो हम उसका उपकार करेंगे, कभी कृतघ्न नहीं बनेंगे, भगवान् इनसान को सदबुद्धि दे।"

कोरोना बेदर्द है और इसके यहाँ न कोई शिकायत न शिकवे की कोई सुनवाई है और न ही किसी के लिए किसी प्रकार की माफी का कोई प्रावधान है। कोरोना और देश की सबसे पुरानी पार्टी में कोई अंतर नहीं है। इस पार्टी में किसी चिट्ठी पर ध्यान देने की परंपरा नहीं है और न ही पढ़ कर विचार करने का चलन है। इसी तरह कोरोना भी रहम की अर्जी बिना पढ़े खारिज कर रहा है। शायद कोरोना को देश की सबसे बड़ी पार्टी की तरह सलूक करने पर गर्व महसूस हो रहा होगा। कोरोना को यह भी मालूम नहीं होगा कि मनमर्जी करने वालों का क्या हश्र होता है? बहरहाल शायद वह सोचता होगा कि कोई तो है, जो उसके दिल की बात सुनेगा?

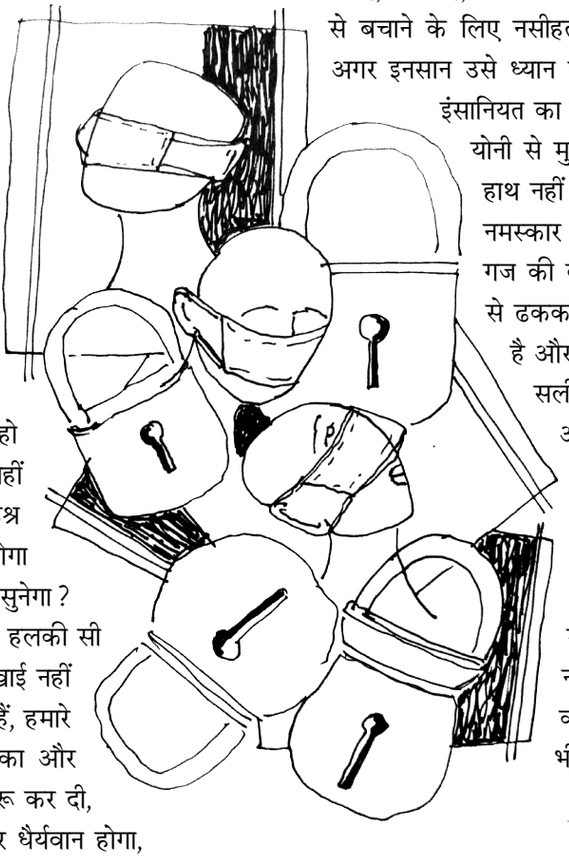

पार्क में सैर करते हुए कान के पास हलकी सी सनसनाहट हुई, इधर उधर देखा कुछ दिखाई नहीं दिया। धीरे-धीरे आवाज आई हम कोरोना हैं, हमारे दिल की बात सुनो। उत्सुकता में, मैं रुका और कोरोना ने अपनी दिल की बात कहनी शुरू कर दी, "हमने सोचा था कि इनसान बहादुर और धैर्यवान होगा, मगर वह तो बहुत ही डरपोक निकला। हमारा मकसद डराना नहीं था बल्कि मजबूरन, जो काम मिला था उसे कुछ हद तक करना था, हम फैलाव भी नहीं चाहते थे, मगर इनसान भयभीत होकर घबराहट में एक के बाद एक लापरवाही करता गया और उसने हमें फैलने का जगह दिया, हम मजबूर हो गए। हमारा समूचे संसार में तबाही मचाने का कोई इरादा नहीं था, मगर हमारे जनक देश ने अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए हमें एक के बाद एक देश में धकेल दिया, हम नेक आत्मा हैं, किसी का नुकसान नहीं चाहते, हम तो हालात के शिकार हो गए और ऐसी तबाही केवल हमारी मजबूरी का नतीजा है। हम चाहते थे कि हमें यानी कोरोना को बनाने वाले देश में हम इतनी तबाही करें कि उसे सबक मिल सके, मगर वह देश चालाक निकला उसने खुद को तो बचा लिया, हमें संसार को असहाय और कमजोर करने के लिए कई देशों में धकेल दिया। अब हम थक गए हैं, जल्दी अपने काम को समाप्त कर इस योनी का त्याग करना चाहते हैं। हमसे अब और तबाही नहीं देखी जाती। मेहनत करते-करते हम हार गए हैं और इनसान को आगाह करना चाहते हैं कि वे जिम्मेदार बनकर अब बेवजह गलती और लापरवाही न करें। कल हम इनसान को नसीहत देने वाली बात करेंगे।"

अगले दिन सुबह पार्क में मुझे देखते ही कोरोना ने कान के पास सनसनाहट की और दिल की बात शुरू कर दी—"हम अपनी बात के पक्के हैं, सच्चे हैं, अपना वायदा निभाने आ गए, मानवता को तबाही से बचाने के लिए नसीहत देने आ गए। हम जो बताने वाले हैं, अगर इनसान उसे ध्यान से सुनकर नोट करेगा, अमल करेगा तो इंसानियत का कल्याण होगा और हमें भी इस अनचाही योनी से मुक्ति मिल सकेगी। इनसान को किसी से हाथ नहीं मिलाना बल्कि दिल से दोस्ती करनी है, नमस्कार करना है। किसी से गले नहीं मिलना, दो गज की दूरी रखनी है। मुँह और नाक को मास्क से ढककर रखना है। अपने हाथ पर संयम रखना है और केवल जरूरत पड़ने पर किसी वस्तु को सलीके से छूना है। बार-बार साबुन पानी से अच्छी तरह हाथ धोना है। शराब के ठेके खुलने और दारू की कीमत कम होने पर पहले जैसी भीड़ जमा कर जश्न-ए-लापरवाही और जोश नहीं दिखाना। मंत्रियों के स्वागत में और चुनाव रैली में आपसी दूरी रखने के फर्ज को भूलना नहीं। मेट्रो में चिपकना और ठुमके लगाने की हरकत बिलकुल नहीं करनी, लाइन में भी आपसी दूरी का पालन करना होगा। बार और रेस्तराँ में टल्ली होकर एक-दूसरे से लिपटने और छूने की हरकत से बाज आना है। बारात आदि में जानबूझकर अँधेरा कर मजाक-मजाक में सोशल डिस्टेंसिंग की धज्जियाँ नहीं उड़ानी। कोई महिला अगर कहती है कि मुझे छूना नहीं तो उसके साथ जबर्दस्ती नहीं करनी। यह हमारी नसीहत है, अगर इनसान मानेगा तो हमारा कल्याण होगा, हमें मुक्ति मिलेगी और इनसान की भी वर्तमान घातक संक्रमण से पूरी रक्षा हो सकेगी। इनसान हमारी बात माने, अपनी जान बचा ले।"

साअ

एन-७, प्रथम फ्लोर
जीके पार्ट-१, नई दिल्ली-११००५८
दूरभाष : ९८१८४९५५००
spvpkda@gmail.com

कोरोना से दीर्घकालिक सुरक्षा

• श्रीधर द्विवेदी

कोरोना विषाणु से उत्पन्न कोविड-१९ वैश्विक महामारी इस समय भारत में अपने प्रचंड रूप में है। उसकी नित्य प्रति बढ़ती प्रसार संख्या सबके मन में चिंता का विषय बनी हुई है। आज के दिन पूरे देश में करीब उन्नीस लाख (बारह लाख उनतालीस हजार छह सौ चौसठ) लोग इसकी चपेट में हैं और तकरीबन उनतालीस हजार आठ सौ नब्बे लोगों की मृत्यु हो चुकी है। देश की आर्थिक राजधानी कहा जानेवाला मुंबई इससे सर्वाधिक प्रभावित क्षेत्र है। हाल-फिलहाल इसके कम होने के आसार उत्साहजनक नहीं हैं। सबसे दुखद पक्ष यह है कि इसकी देखभाल में तत्पर चिकित्सक, नर्स, अन्य परिचारक और पुलिस जन भी इससे ग्रस्त हो रहे हैं। इनमें से कुछ लोग परिचर्या के दौरान संक्रमित होकर अपनी जान गँवा बैठे हैं।

यद्यपि कोरोना के खिलाफ वैक्सीन की खोज हो चुकी है और इसके परीक्षण की भी बात बहुत जोर-शोर से चल रही है, परंतु निकट भविष्य में इसके सार्वजनिक उपयोगिता के समाधान में कम-से-कम तीन से चार महीने और लगेंगे। तब तक स्थिति को विकराल होने से बचाने के लिए हमें कोविड से बचाव की निम्न छह प्रमुख सावधानियों का दृढ़ता से पालन करना चाहिए—

१. मुँह और नाक ढकने के लिए मुखावरण (मास्क) का प्रयोग : कोरोना से बचने के लिए यह पहला और अपरिहार्य कदम है। घर के अंदर या दरवाजे पर किसी बाहरी व्यक्ति से (दूधवाला/सब्जीवाला/अखबारवाला/कोरियरवाला/अतिथि) से बात करते समय भी मास्क लगाना जरूरी है। घर के बाहर कदम रखते ही मुँह को ढकना जरूरी है। कार्यस्थान पर भी मास्क लगाइए। दिखावटी तौर पर या रस्म निबाहने के उद्देश्य से ढीला-ढाला मास्क लगाना आपके मन को संतोष दे सकता है, पर विषाणु से बचाव नहीं कर सकता। दो परतोंवाला सूतीवाला मास्क साधारण बचाव के लिए पर्याप्त है। थूकने या खाँसी आने पर हमेशा रुमाल, टिशू या अपने हाथों पर उच्छिष्ट को एकत्र करें। सार्वजनिक स्थानों या सड़क पर कदापि न थूकें।

२. परस्पर दो मीटर की दूरी रखें। मॉल, उपासना-स्थल, मेट्रो, होटल जाने से फिलहाल बचें।

३. जितनी बार किसी भी व्यक्ति से मिलें या संक्रमित स्थानों पर जाएँ, हाथों को साबुन से धोएँ। हाथ न मिलाएँ। केवल नमस्ते-आदाब करें। कार्यालय या बाजार से आने के पश्चात् नियमत: हाथ साबुन से धोएँ। कपड़े धुलने के लिए डाल दें। पैर धोएँ। जूते घर के प्रवेश द्वार पर नियत स्थान पर उतार दें।

चिकित्सा विषय पर हिंदी में लिखनेवाले प्रतिनिधि लेखक। एम.डी., पी-एच.डी., एफ.ए.एम.एस., एफ.आर.सी.पी. (लंदन), भूतपूर्व डीन, हमदर्द इंस्टिट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज; संप्रति : वरिष्ठ हृदय रोग विशेषज्ञ, नेशनल हार्ट इंस्टिट्यूट, ईस्ट ऑफ कैलास, नई दिल्ली। 'हृदयवाणी' काव्य-संग्रह प्रकाशित, 'तंबाकू चित्रावली' दूसरी प्रमुख हिंदी रचना है।

४. सुबह-शाम नमक के गरम पानी से गरारे करें। नमक के स्थान पर आप औषधि रूप में हल्दी या काली मिर्च का भी उपयोग गरारे के लिए कर सकते हैं। इन्हें पहले पानी में उबाल लें। उस पानी को ठंडा होने दें। हलका गुनगुना होने पर उस पानी से गरारे करें। इस प्रकार का गरारा आपके गले और नाक के आसपास के क्षेत्र को कोरोना मुक्त करने में सहायक सिद्ध होगा। कोरोना काल में यह बहुत कारगर उपाय है।

५. प्राणायाम करें : सरल अनुलोम-विलोम वाला प्राणायाम। प्राणायाम से फेफड़े के समस्त भाग, विशेषत: ऊपरी भाग के वायुकोशों में प्राणवायु (ऑक्सीजन) भर जाती है, जो हृदय समेत सभी अंगों को ऊर्जावान बनाती है।

६. उचित खानपान : भोजन में अधिकाधिक फल व हरी सब्जियों के साथ-साथ कुछ विशिष्ट मसालों, जैसे—काली मिर्च, हल्दी, आमला और अदरक का नियमित प्रयोग करें। ऐसा करने से हमारे शरीर को कोरोना से बचने के लिए विटामिन सी, जरूरी लवण (पोटैशियम), फ्लेवोनॉयड और शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ानेवाले औषधि द्रव्य मिलेंगे।

हमारे प्रतिदिन के भोजन में प्रयुक्त होनेवाले कुछ ऐसे भोज्य पदार्थ हैं, जो कोरोना काल में हमें विशेष लाभ दे सकते हैं। आइए, संक्षेप में

इन पर एक दृष्टि डाल लें। हम ऐसे भोज्य पदार्थों को चार वर्गों में बाँट सकते हैं—

(क) **मसाले :** हल्दी (कुर्कुमिन नामक औषधि द्रव्य-दाह कम करता हैं, रोग प्रतिरोधी), अदरक (दाह कम करती है), मेथी (शुगर कम करती है), दालचीनी (शुगर कम करती है), जायफल (एंटीऑक्सीडेंट), काली मिर्च (एंटीऑक्सीडेंट, कृमि, जीवाणु, विषाणु प्रतिरोधी), हरी मिर्च (एंटीऑक्सीडेंट)।

(ख) **सब्जी :** टमाटर (लाइकोपीन-एंटीऑक्सीडेंट), पालक (रेशे से पूर्ण, एंटीऑक्सीडेंट), प्याज (एलीसीन से युक्त—एंटीऑक्सीडेंट, कोलेस्ट्रॉल कम करता है), लहसुन (एलीसीन से युक्त—एंटीऑक्सीडेंट, कोलेस्ट्रॉल कम करता है), लौकी (कोलेस्ट्रॉल कम करती है), बीन्स (एंटीऑक्सीडेंट), करेला (शुगर कम करता है)।

(ग) **फल :** सेब (लौह और एंटीऑक्सीडेंट से पूर्ण), अनार (एंटीऑक्सीडेंट), बेल (एंटीऑक्सीडेंट, शुगर कम करता है), अंगूर (एंटीऑक्सीडेंट), पपीता (दाह कम करता है, आमाशय में अम्ल के दुष्प्रभाव को ठीक करता है), नारियल (कोलेस्ट्रॉल कम करता है), जामुन (शुगर कम करता है), बादाम (एंटीऑक्सीडेंट, कोलेस्ट्रॉल कम करता है)।

(घ) **अन्य :** दलिया (रेशे से परिपूर्ण, विटामिन से भरपूर), तुलसी (एंटीऑक्सीडेंट), दूध (हड्डियों की मजबूती के लिए), जैतून का तेल (कोलेस्ट्रॉल कम करने के लिए), हरी चाय (एंटीऑक्सीडेंट), कॉफी (एंटीऑक्सीडेंट), करीपत्ता (एंटीऑक्सीडेंट), अलसी के बीज (कोलेस्ट्रॉल और अन्य चिकनाई-दोष को कम करने के लिए)।

७. निषिद्ध पदार्थ : किसी भी मादक वस्तु का प्रयोग, जैसे—तंबाकू, धूम्रपान, अफीम और मदिरा इस समय पूर्णत: मना हैं। घातक हैं।

संक्षेप में यदि हम इन सात बातों, जैसे—मास्क (मुखावरण), भीड़ से बचाव, हाथों की सफाई, कफ का शिष्टाचार, गरारा, प्राणायाम, खानपान का आचार-विचार (गोल मिर्च, हलदी, तुलसी का नियमित प्रयोग) का पालन नियम और निष्ठापूर्वक करें तो हम कोरोना से काफी हद तक बच सकते हैं। ध्यान रखने की बात यह है कि वैक्सीन आ जाने पर भी हमें उपर्युक्त बातों का पालन निजी और सार्वजनिक जीवन में करना पड़ेगा, अन्यथा कोरोना पर नियंत्रण सहज नहीं होगा।

हमदर्द इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंस ऐंड रिसर्च
एसोसिएटेड हकीम अब्दुल हमीद सेंटेनरी हॉस्पिटल
जामिया हमदर्द (हमदर्द यूनिवर्सिटी)
नई दिल्ली-११००६२
दूरभाष : ९८१८९२९६५९

संकेत सृष्टि-कोविड पर माँ करती प्रहार

● **श्रीधर द्विवेदी**

ज्येष्ठ के ये अंतिम दिन थे,
धरा थी तप्त उगलती आग,
कोरोना ग्रस्त विश्व भूभाग,
हिमजल वर्षा करते घन थे।

क्षितिज दो इंद्रधनुष उभरे,
उपवन तड़ाग मंडूक गान,
हर्षित मयूर बहु नृत्य करे,
अद्‌भुत निसर्ग ऐसा वितान।

संकेत सृष्टि थी मानव को,
मत छेड़छाड़ भूतल पर कर,
जीवों का तू संहार न कर,
माँ तत्पर थी कोविड प्रहार।

गंगावतरण का दिवस निकट,
अब नीलकंठ भूपर तत्पर,

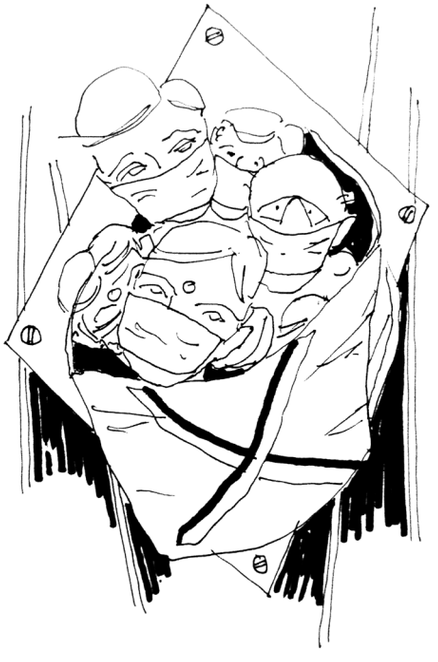

कटिबद्ध खड़े थे देवभूमि,
विष से उद्धार करा सत्वर।

अनुपम माँ है उसकी लीला,
कहती संकट से लूँ उबार,
कितनी विशाल, कितनी उदार,
निश्चित समाप्त कोविड लीला।

तू संगरोध शुचिता अपना,
धारण कर मुखावरण विहार,
मत करना पर्यावरण क्षार,
कोविड विषाणु अवसान सार।

पृथ्वी का हम सब करें मान,
रख पंच तत्त्व सम्मान ध्यान,
नभ पय वर्षा कृषि स्वर्ण खान,
कोविड उन्मुक्त भारत विहान।
कोविड पर माँ करती प्रहार।

राम झरोखे बैठ के

कोरोना के आयाम

● गोपाल चतुर्वेदी

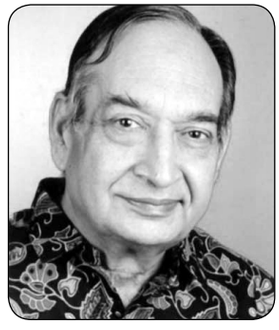

नेहरूजी के समय उन्नीस सौ बासठ तक हिंदी-चीनी भाई-भाई थे यकायक बॉर्डर पर युद्ध के हालात बनने लगे। घुसपैठ की संभावना भी। कौन कहे, संयुक्त परिवार का विघटन भी इसी वक्त शुरू हुआ? भाई-भाई न रहा। फिर भी चीन ने भारत को उपयोगी पाठ पढ़ाए। पंचशील तभी सार्थक है, जब देश शक्तिशाली हो। शांति के प्रतीकात्मक लक्का कबूतर उड़ाकर अमन-चैन के अरमान पूरे नहीं होते हैं। देश अपने स्वार्थ के हित में काम करते हैं, शांति दूत वह तब तक बने रहते हैं जब तक पारस्परिक हितों का टकराव न हो। कमजोर उसूलों को अपनाने की बात करता है, इसी बीच ताकतवर जमीन हथियाने की। कभी-कभार हथिया भी लेता है। अमन के सिद्धांत को सिंगट्टा दिखाकर। ऐसे अपने नेक इरादे दिखाने वह हर विवाद के मुद्दे को आपसी वार्त्ता से हल करने का उसूल भी प्रतिपादित करते हैं। वह जानते हैं कि इससे उनकी सकारात्मक छवि बनेगी। विवाद फिर भी रहेगा। वह जब, चाहेंगे बंदूक के बल पर उसका हल निकाल लेंगे।

हाल-फिलहाल के कोरोना-वायरस का विषय ही लें। कुछ का आरोप है कि इसका प्रसार चीन से ही हुआ है। चीन को चिढ़ाने के लिए ऐसे एक देश ने इसका नाम ही 'चीनी वायरस' रख दिया है। अपनी मान्यता है कि कोरोना का दुनिया में फैलना महज एक दुर्घटना है, संयोग है, त्रासदी है। पूरी तरह गैर-इरादतन हरकत है। इसका शिकार केवल भारत, अमेरिका या इटली ही नहीं, चीन के विश्वस्त मित्र ईरान और पाकिस्तान भी हैं। वहाँ भी इसका नियंत्रण ही प्रभारी है। चीन को दोष देने वाले व्यर्थ में तिल को ताड़ बना रहे हैं। हम तो इतना जानते हैं कि कोरोना की मारक क्षमता के साथ ही इसके पीछे कुछ उपयोगी सुझाव भी हैं। सकारात्मक दृष्टिकोण के साथ ही देशों को, विशेषकर घनी आबादी वाले मुल्कों को माल्थस की चेतावनी कि आबादी की अधिकता से संहारक प्राकृतिक आपदाओं, भुखमरी, महामारी को प्रेरित करती है, इसके प्रति भी सचेत रहना चाहिए। डेंगू, मलेरिया, चिकनगुनिया आदि के विरुद्ध तैयारी हमेशा अपेक्षित है। इतना ही नहीं, कोरोना भी एक प्रकार का अधिक घातक तथा संक्रामक फ्लू है। यह हवा या वातावरण में उपस्थिति न रहकर, शारीरिक संपर्क, हाथ मिलाने या झप्पी पाने से शरीर को संक्रमित करता है। संसार ने इससे बचने के लिए हाथ मिलाने, गले पड़ने के स्थान पर भारत के लोकप्रिय 'नमस्ते' का विकल्प खोज लिया है। कई पश्चिमी देश इसे गंभीरता से अपना रहे हैं। इतना ही नहीं हम तो भारतीय संस्कृति के इस प्रचार-प्रसार में चीनी योगदान को महत्त्वपूर्ण मानते हैं।

इतना ही नहीं, गीता का ज्ञान है कि शरीर तो नश्वर है, जो तत्त्व इसमें अमर है, वह आत्मा है। ऐसा नहीं है कि कोई भी भारतीय इस तथ्य से अपरिचित हो। फिर भी हम कितने भद्दे या श्याम वर्ण हों, भेंगे हों, जब बाएँ देखें तो लगे कि दाएँ ताक रहे हैं, मुँह खोलें तो प्रतीत हो कि दाँतों की क्यारी कुछ टेढ़ी-मेढ़ी है, एक बाहर आने को उत्सुक है तो दूसरा कुछ-कुछ अंतर्मुखी है, फिर भी हम चोला बदलने से डरते हैं। अपना जितना अपरिचय ऊपर वाले से है, उतना ही आत्मा से। हमने इनमें से किसी को भी देखा नहीं है। कुछ ध्यानी-ज्ञानी किस्म के महापुरुषों का दावा है कि उन्होंने भगवान् और आत्मा दोनों के दर्शन किए हैं। आजकल वह अपने इस दिव्य दर्शन को कैश करने में लगे हैं। कौन कहे उनसे प्रभु ने अवतरित होकर यही कहा हो कि "तुम तो दर्शन-सिद्ध इनसानी अजूबे हो, अब त्याग की झोंपड़ी तुम्हारे योग्य नहीं है। एक बड़ा सा आश्रम बनवाओ। उसमें मैदान और फलों के वृक्ष हों, फूलों के सुगंधित उद्यान हों, अपनी सुख-सुविधा से लैस वातानुकूलित कुटिया आश्रम की शोभा बढ़ाएँ। क्यों सुदामा बने घूम रहे हो?"

उन्होंने प्रभु के इस आदेश को गंभीरता से लिया है। गरीबों और समृद्धों के चंदे-दान की रकम और सैक्युलर सरकार की भेंट की गई जमीन से निर्मित इस आश्रम ने विलासिता के नए प्रतिमान बनाए हैं। आश्रम में भक्तों के हर कमरे में वातानुकूलन है। फलों और सोमरस से भरा एक फ्रिज है तथा हर प्रसाधन कक्ष में एक छिपा हुआ एक गुप्त कैमरा। पता नहीं, स्वामीजी की भक्तिनें किस कमरे में ठहरें? उनके उज्ज्वल भविष्य के लिए सिर से नख-शिख तक की आवरण रहित जाँच करके स्वामीजी स्वंय निर्णय लेते हैं कि किसको आशीर्वाद दें? कौन उनकी इस कृपा का अधिकारी है? उससे चर्चा करने स्वामीजी की हेड भक्तिन खुद-ब-खुद पधारती है। वह उसे स्वामीजी पर सबकुछ प्रथम भेंट में न्योछावर करने को प्रोरित करती है, "मुझे अपना अनुभव है। स्वामीजी के संसर्ग से तुम्हारे अंदर एक नई आनंद-कारक अनुभूति होगी। एक दिव्य ऊर्जा का संचार होगा। तुम्हारा चेहरा एक आंतरिक संतोष से दीप्तिमान होगा।" स्वामीजी

अपने कमरे में लगे यंत्र पर यह सब सुनकर मंद-मंद मुसकराते हैं। क्यों न भक्तिन को आशीर्वाद आज की रात ही दे दिया जाए? कल तो प्रवचन के लिए उनका प्रस्थान है। वह अनिर्णय के गद्देदार झूले पर प्रभु-चिंतन में व्यस्त हैं कि हेड-भक्तिन उनके समाने लगे वीडियो पर भेंट की अनुमति माँगती है। "तुम्हारे प्रवेश के लिए यह द्वार सदा ही खुला है और खुला ही रहेगा।" वह उसे अनुमति प्रदान करने की कवितामय कृपा करते हैं।

हेड भक्तिन की चर्चा के उपरांत स्वामीजी अपने ध्यान मे डूब जाते हैं। उन पर ऊपर वाले का यह आशीर्वाद सदा बना रहे। इसी के कारण वह प्रगति-पथ पर निरंतर अग्रसर हो रहे हैं। उन्हें विचार आता है कि जाने कितनी भक्तिनें उनकी कृपा से जीवन में कृत-कृत्य हुई हैं? देश भर में चल रहे उनके आश्रम की देख-रेख इन्हीं भक्तिनियों के हाथ में हैं, साल भर में एक बार तो वह स्वयं आश्रम का निरीक्षण कर भक्तिन की कार्य प्रतिभा के आकलन से चूकते नहीं हैं। उनका आकलन इस तथ्य पर निर्भर है कि उसने कितनी भक्तिन शरीर-समर्पण के लिए तैयार की है। इस असार संसार में ऐसे व्यक्ति भी हैं, जो इस प्रकार के समर्पण को अनैतिक मानते हैं। स्वामीजी का दुर्भाग्य है कि उनके बनाए मूल्यों से सब सहमत नहीं हैं? वह जानते हैं कि दुनिया में विवादियों की कमी नहीं है। कुछ ऐसे ही विवादी पुलिस में शिकायत दर्ज करवा देते हैं। उनकी शिकायत में भुक्तभोगी भक्तिन भी अपने साथ किए गए अनाचारों का योगदान देती हैं और कई भक्तिनों के साथ चल रहे रँगरलियों के दौरान पुलिस छापा मार उन्हें गिरफ्तार कर लेती है।

हम इस दुर्घटना को समचार-पत्र और दूरदर्शन के परदे पर देखकर खौफ खाए हुए हैं। चोला बदलने के बाद यह निश्चित नहीं है कि हमारा पुनर्जन्म कहीं इस पापी स्वामी के रूप में न हो? अब अगर इसका चोला जेल के अंदर बदला तो भी यह अपनी सजा तो भोग ही लेगा पर न जाने कितने इसके साथियों ने वहाँ इसको टीप-थप्पड़ रसीद करके इसकी नश्वर काया से छेड़खानी की हो? क्या इसने कभी अपनी आत्मा से संवाद किया है? क्या उसने इसे इन घटिया हरकतों से बचने की सलाह दी थी या नहीं? क्या आत्मा केवल मानव जीवन-मूल्यों की मूकदर्शक मात्र है?

हम काफी चिंतन-मनन के बाद इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि हमें काया-परिर्वतन से परहेज नहीं है, बस ऐसे ढोंगी स्वामियों से परहेज है। यह भी संभव है कि हमें झींगुर, छिपकली या चूहे का चोला मिले। यों अपन चूहा बनने को कतई प्रस्तुत हैं। ऐसा चूहा जो प्रतीक है कि व्यवस्था के हाथी तक को वह तंग करने की बिसात रखता है। कभी उसकी सूँड़ को दाँत से कुतरता है, कभी दुम को। हाथी को भले महसूस हो कि यह कौन सी अनचाही खुजली है, जो उसे सता रही है? उसे क्या खबर कि यह सब चूहे का करतब है, जो अपनी लघुता से हाथी की विशालता की सत्ता को चुनौती देने में समर्थ है? हमें एक और विश्वास है कि आत्मा की चींटी जरूर इनसानों के कर्म-दुष्कर्म पर अपनी प्रतिक्रिया अवश्य देती होगी। पर चींटी या आत्मा की आवाज आदमी को कैसे सुनाई दे, जबकि वह अपने अहम की महानता के मुगालते में गुम है। उसके कानों को अपनी उपलब्धियों की सफलता के कोरस सुनाई देते हैं और वह आत्मा के अस्तित्व को कब का भूल चुका है?

ज्ञानी मानते हैं कि कोरोना से बचने का एक ही उपाय है कि आदमी भीड़ से अकेला रहे। यों हमारे कवि या बुद्धिजीवी भीड़ में अपने को हमेशा एकाकी महसूस करते हैं। कभी हमें यह भी खयाल आता है कि वह क्या करें जिनके सिर की छत, दिन हो या रात, केवल खुला आसमान है? न उनके पास झुग्गी है न झोंपड़ी? कोरोना से बचना है तो उनको भी यहीं करना है। यह शोध का विषय है कि इनमें से कितनों को कोरोना ने बख्श रखा है और क्यों?

भीड़ में एकाकी कवि को एक दिन गले में खराश महसूस हुई, छींकें भी आईं। पान की दुकान की टोल जबरन उन्हें अस्पताल ले जाकर ही मानी। वहाँ उन्हें 'आइसोलेशन' वॉर्ड में भर्ती कर दिया गया। न उन्हें दिन में चैन आया, न रात को। 'भीड़ का अकेलापन' उनके लिए बौद्धिक बनने का प्रयास भर था। एक 'स्टाइल' थी। एक 'पोज' था, स्वयं को सजीव साबित करने का। यदि कहीं यह सच होता तो यह वास्तविक अकेलापन उन्हें रह-रहकर काटने न दौड़ता। उन्हें याद आया कि जब वह मंच पर कविता के स्थान पर चुटकले सुनाते और श्रोता ताली बजाते तो उसकी गूँज इस एकाकी अवस्था में कानों में गूँज कर उन्हें जीवित होने का अहसास कराती रही, वरना यकीनन वह किसी और अनजानी दुनिया में थे। उनके कानों में जैसे अचानक पत्नी की गुहार गूँजी। क्या घर में खाने को रसद-राशन है कि नहीं? तब यकायक विस्तर तजकर उठे और दूसरों की नजरें बचाकर फूट लिए। बाहर, उन्हें वहाँ खड़ी चौकन्नी पुलिस ने धर दबाया। कवि जी को अनुभूति हुई कि पुलिस का इकलौता कमाऊ क्षेत्र शरीफों को धर दबोचना है। गुंडों-बदमाशों से वह डरती-बचती है। उनकी कुल जमापूँजी जो जेब से बरामद हुई, वह एक दस रुपल्ली का नोट था। वह तत्काल जेब में हाथ डालने वाले की जेब में सिधार गया। पुलिसवाले उन्हें फिर अस्पताल भेजने को तत्पर थे कि वह रो पड़े। एक पुलिस वाले का दिल पसीजा। "क्यों वहाँ क्या है, जो इतने टसुए बहा रहे हो?" उन्हें इसके उत्तर में स्कूल का पढ़ा पाठ याद आया कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। पर सर! अस्पताल वाले अकेला करके हमें जानवर बनाने पर उतारू हैं। हम कवि हैं। हम केवल सृजन के पलों में ही अकेले रह पाते हैं वरना भावों का टोटा पड़ जाए। पुलिस वाले रिरियाती आवाज में उनकी काव्य भेंट से इतने 'बोर' हुए कि जीप पर बिठलाकर उन्हें घर छोड़ आए।

देखने में आया है कि वायरस की आपदा हो या प्राकृतिक कोप के क्षण, उनसे देश में भ्रष्ट लोगों की बन आती है। भले ही आटा, दाल, सब्जी इफरात से उपलब्ध हों, उसकी कीमत बढ़ना वैसी ही एक अनिवार्यता है, जैसे दिन के बाद रात होना। कोराना में हाथ धोने के महत्त्व और सैनिटाइजर के उपयोग पर बाजार से सैनिटाइजर ऐसा गायब है जैसे वर्दी से संवेदनशीलता। वह तो गनीमत है कि कोरोना वायरस की फिलहाल कोई दवा नहीं है वरना उसका हश्र भी यही होता। या तो नकली दवा बाजार में आती या दस गुना कीमत बढ़ाकर। ऊपरवाला ही जानता है कि हमारे यहाँ हम आपदा को और विकट बनाने पर हम इतने आमादा और उत्सुक क्यों रहते हैं? यह शोचनीय दशा कब तक चलेगी? इनमें से

सरकार किस-किस पर पहरा करे, बाजार के भ्रष्टाचार पर या अस्पतालों को और वैंटिलेटर दिलवाने पर? क्या बाजार या हमारे दुकानदारों में इतनी इनसानियत भी नहीं बची है कि दूसरे इनसानों से हर तरह की हरकतों से कमाई करने से न चूकें? क्यों कीमतों को गगनचुंबी बनाने से बाज न आए? क्या उनका इरादा हर जरूरतमंद इनसान के शोषण से उसकी जान लेना है? कौन कहे, इनसान के अंदर कितने रावणों का वास है कि उसे हर हाल में केवल अपने स्वार्थ का ध्यान आता है? राम ने सोने की लंका के अधिपति का संहार किया था, पर सच्चाई यह है कि वह भी हर साल जलाए गए बुत के वाबजूद आज भी जीवित है। त्रासद यह है कि आज रावण तो उपलब्ध है बस राम नहीं हैं। यह किसी क्षेत्र विशेष तक सीमित नहीं है। यह दुर्दशा हर क्षेत्र की है। शिक्षा, समाज सेवा हो या सियासत, कुछ अपवाद भले हों, पर हर स्थान पर रावण-राज्य है। राम-राज्य इस समय एक आदर्श स्थिति है। ऐसा सपना, जिसे दिखाकर चुनाव में सफलता संभव है। यही इकलौता कारण है, जिसके कारण लोग अब भी रामराज्य की बात करते हैं। नहीं तो सोने की लंका ही वह स्वप्न है, जिसे सच करने को जीवन-मूल्यों को ताख पर रखकर, भौतिकता के पर्याय कुछ भ्रष्ट जुटे हैं, जैसे दवाओं में मिलावट करने वाले या उनके डुप्लीकेट बनाने वाले। यह ऐसे खटमल हैं, जो जिसकी शरण पाते हैं, उसी का खून चूसते हैं।

कोरोना के कई आयाम हैं। एक उजागर करता है कि कौन देश का ऐसा हितैषी है, जो रात दिन एक करके वायरस के दुष्प्रभाव को कम से कम करने में लगा है। दूसरे वह हैं, जो आंदोलन के नाम पर नेता बनने में। महिलाओं को दुष्प्रचार से भड़काकर। एक आयाम बीमारों की रक्षा करने का है, दूसरा इसका संक्रमण रोकने का। दोनों में डॉक्टरों की अहम और महत्त्वपूर्ण भूमिका है। उन्हें सम्मान और आभार देना पूरे राष्ट्र का कर्तव्य है। कुछ खास नस्ल के बुद्धिजीवियों को उनके सम्मान में ताली और थाली पीटने पर भी एतराज है। यह ऐसी हस्तियाँ हैं, जिन्होंने स्वयं कुछ नहीं किया है, सिवाय करने वालों को रोकने के। सत्ता और अधिकार के यह पुश्तैनी हकदार हैं। इनकी एक ही टेक है—"हम कुरसी पर होते तो कोरोना होने ही नहीं देते।" ऐसे मानसिक कोरोना से ग्रसित लोगों का कोई कर ही क्या सकता है?

यों कोरोना का एक पाठ भी है। वह राजा और रंक में फर्क नहीं करता है। सब समान रूप से उसके शिकार हैं। फिर प्रजातंत्र में खानदानी विरासत को क्यों महत्त्व दिया जाए? जनता और नेता बराबर क्यों न हों? खाँटी नेता भी तो आम आदमी के सेवक ही हैं।

साअ

९/५, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

कोरोना काल ने सबको तकनीक सिखा दी

• बालेंदु शर्मा दाधीच

कोरोना वायरस का मौजूदा संकट सोशल डिस्टेंसिंग और सोशल मैसेजिंग के उभार का भी दौर है। वर्तमान परिस्थितियों में दोनों ही अपरिहार्य बन गए हैं। उनका असर हमारे घर, दफ्तर, कारोबार, अर्थव्यवस्था, सामाजिक जीवन, शिक्षा और यहाँ तक कि साहित्य-संस्कृति तक पर पड़ा है। हममें से ज्यादातर लोग अनायास ही इनके इतने निकट आए, लेकिन अब ऐसा लगता है कि यह संबंध लंबे समय के लिए बना है। सोशल मैसेजिंग को महज चैट के रूप में देखने की बजाय डिजिटल संपर्क के प्रतीक के रूप में देखा जा सकता है, जो अपने व्यापक अर्थों में बहुत सारी दूसरी घटनाओं को समेट लेता है, जैसे—इंटरनेट आधारित सहकर्म (कोलेबरेशन), डिजिटल मनोरंजन, आभासी बैठकें, डिजिटल कारोबार और आभासी शिक्षा आदि।

कोरोना वायरस के त्रासद दौर में जो सकारात्मक बातें दिखाई दी हैं, उनमें से एक है—हम सबका तकनीक के अधिक करीब जाना, उसकी क्षमताओं से परिचित होना और उसका इस तरह इस्तेमाल करना कि अपने कामकाज को कुछ हद तक सामान्य ढंग से चलाया जा सके। तकनीक, विशेषकर इंटरनेट और क्लाउड की शक्ति नहीं होती, तो इस महामारी से निपटना निजी तथा राष्ट्रीय स्तर पर कई गुना ज्यादा मुश्किल होता। एक पुरानी कहावत है कि अगर आप तीन सप्ताह तक किसी खास अंदाज में काम करते हैं या किसी खास चीज का प्रयोग करते हैं तो वह आपकी आदत बन जाती है। तकनीक का हमारी आदत में तब्दील हो जाना वैश्वीकरण और तकनीकी दबदबे के मौजूदा दौर में एक सकारात्मक घटना है। उसी तरह जैसे कि इस पर पूरी तरह से निर्भर हो जाना या इसकी लत में लग जाना एक नकारात्मक घटना भी है। कोरोना वायरस से बचाव के प्रयासों में तकनीक का एक सहयोगी बनकर सामने आना भी एक ऐसा अनुभव है, जो भारत के इतिहास में पहले कभी इतने परिमाण में नहीं देखा गया। तकनीक ने न सिर्फ सबको एक-दूसरे से जुड़े रहने में मदद की, बल्कि तेज गति से लोगों तक सूचनाएँ पहुँचाने, बहुत बड़े पैमाने पर चल रही गतिविधियों प्रबंधन करने और यहाँ तक कि संभावित रोगियों पर नजर रखने में भी हाथ बँटाया।

राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित सुप्रसिद्ध तकनीकविद्, लेखक तथा पूर्व संपादक। हिंदी और तकनीक के संबंधों पर सुदीर्घ शोध, चिंतन, विकास कार्य तथा लेखन। दो पुस्तकें 'तकनीकी सुलझनें' और 'दिव्यांगों के लिए तकनीक' खासी चर्चित हैं। संप्रति सूचना प्रौद्योगिकी संस्थान माइक्रोसॉफ्ट में निदेशक (भारतीय भाषाएँ तथा सुगम्यता)

काम चलता रहा

लॉकडाउन ने अचानक हमें इस बात का अहसास कराया कि डिजिटल दुनिया में तो पहले से ही वह सब मौजूद है, जो हमारे घर, दफ्तर, मनोरंजन, संपर्क, शिक्षा की बुनियादी जरूरतें पूरी करने के लिए चाहिए। सच कहें तो बात इनसे भी बहुत आगे बढ़ चुकी है। अगर दुनिया के अरबों लोग महीनों अपने घरों में चुपचाप कैद रहते हुए अपने काम चलाते रहे, तो इसका बहुत बड़ा श्रेय टेक्नोलॉजी और उसके अनुप्रयोगों को जाता है—इंटरनेट, पी.सी., मोबाइल, ब्रॉडबैंड, 4जी, ओ.टी.टी., व्हाट्सएप, जूम, स्काइप, टीम्स, यू-ट्यूब, वीडियो कॉल, ऑफिस, क्रोमकास्ट···ऐसे कितने ही तकनीकी उत्पादों ने कमाल कर दिखाया। टेक्नोलॉजी लॉकडाउन के बाद भी हमारी जिंदगी में बनी रहनेवाली है। आपका मोबाइल फोन आगे भी वर्चुअल और वास्तविक के बीच में पुल का काम करता रहेगा।

कोलेबरेशन ऐप्स ने इस दौर में अपनी महत्ता का सबसे ज्यादा अहसास कराया। बहुत से कार्यालय, अधिकांश कारखाने, और लगभग सभी स्कूल-कॉलेज बंद हैं, लेकिन काम चलते रहना जरूरी है। ऐसे में जूम ऐप खासा लोकप्रिय हो गया, जो अलग-अलग लोकेशन पर मौजूद लोगों को एक साथ आकर सबके लाइव वीडियो देखते हुए चैट करने, मीटिंग करने, अपनी फाइलें शेयर करने का मौका देता है। ऑनलाइन कक्षाएँ लेने, ट्यूशन लेने और कार्यक्रम आयोजित करने का भी यह अच्छा जरिया बन गया। हालाँकि इस ऐप की सुरक्षा को लेकर कुछ गंभीर चिंताएँ भी उठी हैं। ऐसे में माइक्रोसॉफ्ट टीम्स बेहद सुरक्षित और शक्तिशाली ऐप के रूप में सामने आया, जो अपने प्रयोक्ता की निजता को सबसे ऊपर रखता है। गूगल हैंगआउट्स (मीट), स्काइप, गो टु वेबिनार, वेब एक्स

आदि भी लोकप्रिय हुए हैं। इनकी बदौलत लोगों का दफ्तरों का काम भी चलता रहा, सरकारी विभागों की बैठकें चलती रहीं और बच्चों की कक्षाएँ भी चलती रहीं। एक अच्छी बात यह भी है कि जहाँ माइक्रोसॉफ्ट टीम्स में हिंदी इंटरफेस (चेहरा-मोहरा, मेनू आदि) भी मौजूद है, वहीं इसमें संदेशों का अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद करने की सुविधा भी मौजूद है। इतना ही नहीं, यह हिंदी में मिले संदेशों को पढ़कर सुनाने में भी सक्षम है। अंग्रेजी तथा अनेक दूसरी भाषाओं में तो यह सुविधा है ही, हिंदी में भी है।

अलग-थलग पड़े लोगों के लिए मनोरंजन बुनियादी जरूरत थी, जहाँ ओवर द टॉप (ओ.टी.टी.) प्लेटफॉर्मों ने अहम भूमिका निभाई। ये वे प्लेटफॉर्म हैं, जो मोबाइल फोन पर चलते हैं और वीडियो धारावाहिकों, फिल्मों, खेलकूद आदि की स्ट्रीमिंग करते हैं। यह स्ट्रीमिंग लाइव (तत्कालीन) भी होती है और ऑन-डिमांड भी, यानी कि रिकॉर्ड किए हुए कार्यक्रमों को बाद में देखने की सुविधा भी। हॉटस्टार, नेटफ्लिक्स, अमेजॉन प्राइम, ऐप्पल टी.वी., सोनी लिव, जी फाइव, डिज्नी, वूट, ऑल्ट बालाजी जैसे प्लेटफॉर्म खूब इस्तेमाल किए गए और लोकप्रिय हुए। बंद सिनेमा हॉल के समय में इन प्लेटफॉर्मों पर हॉलीवुड-बॉलीवुड (और टॉलीवुड भी) की फिल्मों की कोई कमी नहीं थी। वेब सीरीज भी अब लोगों के लिए अनजानी चीज नहीं रही, जिन्हें वे आगे भी देखते रहेंगे। यू-ट्यूब बोरियत से बचाने का बड़ा माध्यम बनकर उभरा। मोबाइल और पी.सी. पर ऐसे खेल ज्यादा लोकप्रिय हो गए, जिन्हें कई लोग एक साथ खेल सकते हैं। दशकों बाद लूडो लौट आया—ऑनलाइन अवतार में। भारत में गेमिंग उतनी लोकप्रिय नहीं हुआ करती थी, लेकिन अब वह स्थिति नहीं रहेगी। इधर संगीत में भी ऑनलाइन माध्यमों का दखल बढ़ गया है। गाना और सावन जैसे प्रसिद्ध एप्लीकेशन तो पहले से ही डिजिटल माध्यमों पर उपलब्ध थे, अब नई सेवा 'स्पॉटिफाई' भी तेजी से लोकप्रिय हो रही है।

सब घर में अकेले तथा निष्क्रिय हैं तो सेहत का खयाल बेहद जरूरी है। प्रैक्टो, 1एमजी, नेटमेड्स, आस्क अपोलो और एमफाइन (mfine) आपके मोबाइल फोन के भीतर ही डॉक्टरी कंसल्टेशन, पैथोलॉजी लैब्स और केमिस्ट की सुविधा लेकर तैयार बैठे हैं। अपनी सेहत के साथ समझौता करने की जरूरत नहीं है, भले ही अस्पताल जाना संभव हो या न हो। इस दौर में फिटनेस बेहद जरूरी है, सो गूगल फिट, योग स्टूडियो, लाइफसम, ऑप्टिक, रण्टास्टिक जैसे ऐप्स इंस्टॉल कीजिए, सही ढंग से फिट रहने का तरीका सीखते रहिए और अपने फिटनेस प्लान को ट्रैक करते रहिए।

मेलजोल के तरीके बदले

स्मार्टफोन पर ज्यादातर कॉल ऐप्स के जरिए किए जाने लगे हैं—अनायास ही। व्हाट्सएप संवाद का मुख्य जरिया बन गया है—न सिर्फ टेक्स्ट चैट के लिए, बल्कि फोन कॉल के लिए भी। और वह भी दोनों तरह के—ऑडियो तथा वीडियो। यों वीडियो कॉल के लिए लोकप्रिय स्काइप भी हमारे बीच मौजूद है और उसकी अपनी विशेषताएँ हैं। व्हाट्सएप ने ग्रुप कॉलिंग में आठ लोगों को जोड़ने की सुविधा दे दी है। टेलीग्राम, काइजाला, हाइक, लाइन और वीचैट भी अपनी जगह बनाए हुए हैं। आनेवाले दिनों में फोन कॉल, एस.एम.एस., चैट, इंटरनेट कॉल और वीडियो कॉल एक-दूसरे के साथ घुल-मिल जाने वाले हैं। ऊपर से इ-मेल सुविधा तो है ही, जहाँ पर जी-मेल के साथ-साथ अब आउटलुक भी लोकप्रिय है। रीडिफ और याहू भी मैदान में डटे हुए हैं। इन सभी के मोबाइल ऐप्स उपलब्ध हैं।

सोशल मीडिया आपस में जुड़े रहने, अपनी बात शेयर करने और तनाव को घटाने का जरिया है, सो फेसबुक, लिंक्डइन, ट्विटर, इंस्टाग्राम और टिकटॉक की जरूरत बनी रहेगी। अगर आपके मोबाइल फोन में ये सब हैं, तो फिर आप न तो अपने दोस्तों से दूरी महसूस करेंगे और न ही बाहर की हलचल से कटा हुआ महसूस करेंगे।

सबका बैंक आना-जाना बंद था, मगर पेटीएम, मोबीक्विक, फोनपे, भीम जैसे पेमेंट ऐप संकटमोचन बन गए। अब ये आपके दैनिक जीवन का हिस्सा बने रहेंगे। इनके अलावा कई बैंकों के अपने ऐप्स भी इस्तेमाल होंगे, जैसे कि एस.बी.आई. का योनो। फिर ऑनलाइन बैंकिंग या नेटबैंकिंग ने भी अपनी जिम्मेदारी बदस्तूर निभाई है।

सब घर में अकेले तथा निष्क्रिय हैं तो सेहत का खयाल बेहद जरूरी है। प्रैक्टो, 1एमजी, नेटमेड्स, आस्क अपोलो और एमफाइन (mfine) आपके मोबाइल फोन के भीतर ही डॉक्टरी कंसल्टेशन, पैथोलॉजी लैब्स और केमिस्ट की सुविधा लेकर तैयार बैठे हैं। अपनी सेहत के साथ समझौता करने की जरूरत नहीं है, भले ही अस्पताल जाना संभव हो या न हो। इस दौर में फिटनेस बेहद जरूरी है, सो गूगल फिट, योग स्टूडियो, लाइफसम, ऑप्टिक, रण्टास्टिक जैसे ऐप्स इंस्टॉल कीजिए, सही ढंग से फिट रहने का तरीका सीखते रहिए और अपने फिटनेस प्लान को ट्रैक करते रहिए।

और अंत में, घर के सामान मँगवाने के लिए बाहर जाने की आदत शायद अब कम हो जाए। लेकिन सच कहा जाए तो जरूरत भी क्या है? किराने के सामान से लेकर दूध और कपड़ों से लेकर इलेक्ट्रॉनिक्स तक का ऑर्डर देने के लिए अच्छे ऐप्स की कमी थोड़े है। ग्रोफर्स, बिग बास्केट, मिंत्रा, फ्लिपकार्ट, अमेजॉन हैं ही। अगर ये सब मँगवाने के बाद भी खाना घर पर खाने का मन नहीं है तो स्विगी और जोमाटो जैसे मोबाइल ऐप्स की सेवाओं का लाभ उठाइए और रेस्तराँ का भोजन घर मँगवाइए।

तसवीर का दूसरा पहलू

लेकिन सारे घटनाक्रम का दूसरा पहलू भी होता है और वह यहाँ भी है। माना कि घर तक सीमित रहनेवाले लोगों को तमाम तरह की सुविधाएँ घर बैठे उपलब्ध हो रही हैं, लेकिन देश का हर व्यक्ति ग्राहक तो नहीं है। इनमें से बहुत से लोग विक्रेता भी हैं और सेवा-प्रदाता भी। सबकुछ ठप्प पड़ जाने, अर्थव्यवस्था के ठहर जाने से अनगिनत लोगों की आजीविका

खतरे में पड़ गई है। एक ओर जहाँ बड़े रिटेल संस्थान और मोबाइल ऐप आधारित सप्लायर वर्तमान परिस्थितियों में लाभ की स्थिति में हैं, वहीं पारंपरिक कारोबारी तथा सेवा-प्रदाता की स्थिति दयनीय होती जा रही है। गली-गली, मोहल्ले-मोहल्ले में चीजें बेचने या अपनी सेवाएँ देनेवाले लोग बहुत बड़े आर्थिक संकट से गुजर रहे हैं। तसवीर का दूसरा पहलू यह है कि उनकी अनुपस्थिति समाज के एक बड़े वर्ग को प्रभावित भी नहीं कर रही, जिसकी माँग डिजिटल माध्यमों से पूरी हो जाती है।

यहाँ पर कुछ अन्य पहलू भी विचारणीय हैं। प्रौद्योगिकी अपने आप में एक लोकतांत्रिक और समावेशी किस्म की ताकत है, लेकिन कोरोना वायरस के संकट ने उसकी सीमाओं को भी उघाड़कर रख दिया है और सवाल उठता है कि क्या सचमुच? माना कि प्रौद्योगिकी अपने तौर पर सूचनाओं को बाधित नहीं करती और सबको सशक्त बनाने की क्षमता रखती है, लेकिन उसकी यह शक्ति बहुत से बाहरी पहलुओं पर निर्भर है। यह बात पहले कभी इस शिद्दत के साथ महसूस नहीं की गई, जैसी कि इस बार। एक उदाहरण देखिए। दिल्ली की एक बड़ी सोसायटी में अब छोटे कामगारों (माली, धोबी, कूड़ा उठानेवाला, काम करनेवाली बाइयाँ, ड्राइवर आदि) को काम शुरू करने की इजाजत देने पर विचार हुआ। इन लोगों पर जो बहुत सारी (और जरूरी) सीमाएँ तथा पाबंदियाँ लगाई गईं (फेस मास्क, सैनिटाइजर, सोशल डिस्टेंसिंग आदि), उनमें एक जगह पर आकर बात अटक गई। और वह थी—सबके मोबाइल फोन में 'आरोग्य सेतु' मोबाइल ऐप की मौजूदगी।

आरोग्य सेतु ऐप आपको संकेत देता है कि आपके आसपास कोई कोरोना वायरस प्रभावित व्यक्ति तो नहीं है। इसी तरह से यदि वह ऐप रखनेवाले किसी व्यक्ति को संक्रमण हो जाता है तो यह ऐप सरकारी एजेंसियों को सूचित रखने का भी एक अच्छा जरिया है। दोनों पक्षों के लिए उसकी उपयोगिता है। लेकिन वह तीसरे पक्ष के लिए भी जरूरी है, जैसा कि उपर्युक्त सोसायटी के मामले में स्पष्ट होता है। वहाँ पर बात तब अटक गई, जब पता चला कि ज्यादातर छोटे कामगारों के पास स्मार्टफोन नहीं, बल्कि बेहद सस्ता मोबाइल फोन है, जिस पर एंड्रोइड एप्लीकेशंस नहीं चलते। अब तकनीक की सीमा सामने आ गई। ये लोग स्मार्टफोन के अभाव में खुद भी असुरक्षित हैं और उनके संपर्क में आनेवाले दूसरे लोग भी। तब कैसे कहा जाए कि तकनीक की ताकत समावेशी, निष्पक्ष और लोकतांत्रिक है?

मसले और भी हैं। सोशल मीडिया ने सूचनाएँ पहुँचाईं और लोगों को संकट काल में एक-दूसरे से जोड़े रखा। सामाजिक संबंध घनिष्ठ हुए और लोग एक-दूसरे को तसल्ली देते रहे। लेकिन इन्हीं माध्यमों पर गलत सूचनाएँ, फेक न्यूज और इकतरफा दुष्प्रचार ने भी जोर पकड़ा। लोगों के बीच भय और नफरत फैलानेवालों को तो अच्छा मौका मिला, क्योंकि इस दौरान लोगों के पास अतिरिक्त समय की मौजूदगी ने आधारहीन खबरों की आग में घी का काम किया। औसतन ३.४७ घंटे प्रति सप्ताह स्मार्टफोनों का इस्तेमाल किया गया है। उसमें भी १९ फीसदी समय चैट को गया है, १५ फीसदी सोशल नेटवर्किंग को, १४ फीसदी वीडियो स्ट्रीमिंग को और ६ फीसदी ब्राउजिंग को।

शिक्षा-तंत्र में विरोधाभास

ऐसे लाखों छात्र लॉकडाउन के दौर में ऑनलाइन शिक्षा के दायरे से बाहर ही रह गए, जिनके पास स्मार्टफोन या पर्सनल कंप्यूटर नहीं है। ऐसे बहुत से लोग कोलेबरेशन या सहकर्म के दायरे से बाहर रह गए, जिनके घर पर एक ठीकठाक कंप्यूटर नहीं है या फिर इंटरनेट कनेक्टिविटी का अच्छा प्लान (ब्रॉडबैंड या ४जी) नहीं है। जहाँ शहरी इलाकों की बड़ी आबादी का काम तकनीकी माध्यमों की मदद से चलता रहा, वहीं ग्रामीण और अविकसित इलाकों में बहुत से लोगों को पता भी नहीं चला कि ऐसा भी कोई रास्ता निकाल लिया गया था। पता चल भी जाता तो वे बिजली की अनुपलब्धता की वजह से, डिजिटल उपकरण के अभाव में या फिर तकनीकी दक्षता के अभाव में शहरी बच्चों से पिछड़ ही जाते। उसके बाद अगर आप भाषा की चुनौती तथा गरीबी से जुड़े मसले जोड़ दें तो ऐसा लगेगा कि इस दौर में डिजिटल डिवाइड पटी नहीं है, बल्कि थोड़ी और बढ़ गई है। तकनीक समृद्ध लोग आगे निकल गए हैं और तकनीक वंचित पीछे छूट रहे है।

मसले और भी हैं। सोशल मीडिया ने सूचनाएँ पहुँचाईं और लोगों को संकट काल में एक-दूसरे से जोड़े रखा। सामाजिक संबंध घनिष्ठ हुए और लोग एक-दूसरे को तसल्ली देते रहे। लेकिन इन्हीं माध्यमों पर गलत सूचनाएँ, फेक न्यूज और इकतरफा दुष्प्रचार ने भी जोर पकड़ा। लोगों के बीच भय और नफरत फैलानेवालों को तो अच्छा मौका मिला, क्योंकि इस दौरान लोगों के पास अतिरिक्त समय की मौजूदगी ने आधारहीन खबरों की आग में घी का काम किया। औसतन ३.४७ घंटे प्रति सप्ताह स्मार्टफोनों का इस्तेमाल किया गया है। उसमें भी १९ फीसदी समय चैट को गया है, १५ फीसदी सोशल नेटवर्किंग को, १४ फीसदी वीडियो स्ट्रीमिंग को और ६ फीसदी ब्राउजिंग को। अगर दूसरे महीन मुद्दों को फिलहाल अनदेखा भी कर दिया जाए, तो स्मार्टफोनों पर खर्च होनेवाला कम-से-कम ५४ फीसदी समय ऐसी गतिविधियों में गया है, जिनके जरिए गलत और गुमराह करनेवाली सूचनाएँ इंटरनेटीय दुनिया में यात्रा करती हैं। इतना ही नहीं, साइबर ठगों को भी कोरोना त्रासदी ने एक मौका उपलब्ध करा दिया, जिन्होंने तकनीक की दुधारी तलवार का इस्तेमाल सीधे-सादे लोगों को ठगने में किया। बहुत से लोगों को इन ठगों ने तथाकथित सरकारी आर्थिक सहायता ट्रांसफर करने के नाम से संपर्क किया, तो बहुतों को सस्ती दरों पर बीमा मुहैया कराने के नाम पर।

५०४, पार्क रॉयल
जी.एस.-८०, सेक्टर-५६
गुड़गाँव-१२२०११ (हरियाणा)

कोरोना पर पाँच लघुकथाएँ

• उमेश कुमार चौरसिया

फर्ज-१

कोरोना वायरस के कारण चिकित्सकों के लिए कई बाध्यताएँ लागू हो गईं। जो चिकित्सक अस्पताल में कोरोना मरीजों का उपचार कर रहे थे, उन्हें एक होटल में ही रहना पड़ रहा था।

उस दिन डॉ. रोहन की नौ वर्ष की बेटी का जन्मदिन था। घर पर जाना तो संभव नहीं था, पर बिटिया ने जिद कर ली कि पापा नहीं आएँगे तो वह बर्थडे नहीं मनाएगी। बेटी का मन रखने के लिए डॉ. रोहन किसी तरह समय निकालकर देर शाम घर पहुँचे, लेकिन घर के भीतर जा नहीं सकते थे।

घर में बिटिया केक काटकर अपना जन्मदिन मना रही थी और वे दरवाजे के सामने खड़े होकर बाहर से ही उसे देखकर खुश होते रहे।

फर्ज-२

कोरोना महामारी के कारण देश भर में लॉकडाउन लग गया। कानून और व्यवस्था की जिम्मेदारी सदैव की भाँति पुलिस पर आ गई। सभी की छुट्टियाँ रद्द कर दी गईं, किसी को घर जाने की अनुमति नहीं थी। बड़ी संख्या में पुलिसवाले गलियों और चौराहों पर तैनात हो गए, ताकि लोग घरों से बाहर न निकलें और महामारी से सुरक्षित रहें।

सिपाही बलदेव की ड्यूटी नगर के प्रमुख बाजार में लगी थी। तीन दिन से घर पर बात नहीं कर पाया था, इसलिए वहीं से घर पर फोन लगाया। पत्नी से बात हुई, माता-पिता का हाल पूछा, इतने में पाँच वर्ष का बेटा आ गया। कहने लगा, "पापा, घर कब आओगे?"

बलदेव क्या जवाब देता, टाल गया, "जल्दी ही आऊँगा, बेटा।"

बेटे ने अनुनय की, "अभी आ जाओ ना पापा, मम्मी ने आज छोले-भटूरे बनाए हैं, सूजी का हलवा भी···।"

पत्नी के हाथ के खाने का स्वाद याद कर बलदेव के मुँह में पानी आ गया। तभी साथी ने पुकारा, "अरे बलदेव! जल्दी आ जा, खाने का पैकेट आ गया है।" और बलदेव वहीं सड़क किनारे बैठकर अखबार में लिपटी चपाती और आलू की सब्जी खाने लगा।

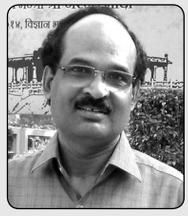

भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय से पंजीकृत नाट्य लेखक व निदेशक, पैंतीस पुस्तकें प्रकाशित। समीक्षा, लघुकथा, व्यंग्य, लघुनाटक, कविता, गीत व समसामयिक लेख विविध राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर प्रकाशित तथा दूरदर्शन व आकाशवाणी से प्रसारित। अनेक सम्मानों से विभूषित।

फर्ज-३

शहर में कोरोना संक्रमण बुरी तरह फैल रहा था। लॉकडाउन के कारण दिहाड़ी मजदूरों को काम मिलना बंद हो गया। कोरोना के डर ने उन्हें पलायन के लिए विवश कर दिया। बड़ी संख्या में मजदूर अपने घरों की ओर पैदल ही निकल पड़े। पुलिस ने रोक लिया और रैनबसेरे में ले जाकर ठहरा दिया।

सभी का कोरोना टेस्ट हुआ, कई मजदूर पॉजीटिव पाए गए, उन्हें तुरंत अस्पताल में भरती कराया गया। कोरोना के डर से रैनबसेरे में ठहरे सभी मजदूर भयभीत थे।

उस रैनबसेरे में सफाई का काम करता था रमजू। वह वहीं रहता और सुबह-शाम सफाई किया करता था। एक प्रौढ़ मजदूर ने उससे पूछा, "क्यों रे, इहाँ इत्ते बड़े रैनबसेरे की सफाई खातिर तू अकेला ही है कै?"

रमजू ने बताया, "हैं तो और भी, पर अभी बीमारी के डर से सभी काम छोड़ गए हैं।"

"तो क्या तुझे डर ना लगै इस मुए कोरूना से? भई हमकू तो भोत डर लगै है।"

मजदूर की बात सुन रमजू बोला, "डर तो हमको भी बहुत लगता है, घरवाले भी मना करते हैं, पर···।"

"पर पैसान की खातिर काम करत रही, है ना?" दूसरे मजदूर ने कहा तो रमजू एक क्षण चुप रह गया, फिर बोला, "तनख्वाह के लिए तो सभी करते हैं बाबू, पर इस वक्त सफाई की जरूरत ज्यादा है और यही हमारा फर्ज भी है।" और रमजू फिर से सफाई में जुट गया।

डर

परिजन एक वृद्ध को लेकर अस्पताल पहुँचे। बताया कि कई दिन से बुखार है और आज साँस लेने में भी कठिनाई हो रही है। उसे कोरोना होने की संभावना को देखते हुए चिकित्सकों ने तुरंत आइसोलेशन वार्ड में भरती कर उपचार आरंभ कर दिया। कोरोना टेस्ट हेतु सैंपल भी लिया गया। डरे हुए सभी परिजन वापस लौट गए। वैसे भी आइसोलेशन वार्ड में रुकने की अनुमति किसी को नहीं थी।

दूसरे दिन वृद्ध की स्थिति में कुछ सुधार दिखा। रिपोर्ट भी आ गई। रिपोर्ट में वह वृद्ध कोरोना नेगेटिव पाया गया। ऐसे में उन्हें वापस घर भेजने की कारवाई आरंभ हुई। चिकित्सकों ने फॉर्म पर दिए गए, नंबर पर परिजनों को फोन करने का प्रयत्न किया, लेकिन गलत नंबर होने के कारण नहीं लगा। कुछ कार्मिकों को बताए गए पते पर भेजा गया तो वह पता भी फर्जी निकला।

कोरोना के डर ने रिश्तों को कमजोर कर दिया था।

आँसू

कोरोना महामारी के कहर ने लोगों का जीवन दुष्कर बना दिया। व्यवसाय-नौकरी-धंधे सब बंद हो गए। ऐसे में सबसे बुरी स्थिति दिहाड़ी मजदूरों की हो गई। उनके लिए कहीं कोई काम नहीं था।

गोमती लोगों के यहाँ कपड़े धोकर अपना और दो छोटे बच्चों का गुजारा किया करती थी। उसका पति मकान बनानेवाला कारीगर था, जो एक वर्ष पूर्व निर्माणाधीन पाँच मंजिला भवन से गिरकर मर गया था।

कोरोना संक्रमण के डर से लोगों ने काम करनेवाली औरतों को घरों में बुलाना बंद कर दिया था। गोमती की आय बंद हो गई। घर में खाने को दाना नहीं बचा। बच्चे खाने की जिद करते तो चूल्हा जलाकर हाँडी में कुछ पत्थर डालकर उबालने को चढ़ा देती और कहती, "बच्चो, अभी तुम सो जाओ, जब खाना पक जाएगा तो तुम्हें उठाकर खिला दूँगी।" ऐसे बहाना करके रोज सुला देती।

एक दिन छोटे बेटा रात को नींद से जाग गया। देखा कि माँ और बड़ी बहन सो रही हैं। चूल्हे पर हाँड़ी वैसी ही चढ़ी हुई है। बच्चे ने हाँड़ी को खोलकर देखा तो पत्थर मिले। यह देख वह रोने लगा। गोमती जाग गई, बेटे के पास आई तो वह रोते हुए बोला, "तुम झूठ कहती हो माँ, हाँड़ी में तो पत्थर हैं, खाना कहाँ है? माँ, मुझे भूख लगी है।" गोमती कुछ न कह पाई, बस उसे अपनी गोद से चिपटा लिया और थपकी देकर सुलाने लगी। कुछ देर में बच्चे की सिसकियाँ तो कम होने लगीं, पर गोमती की आँखों से आँसू झर-झर बहते रहे।

सा/अ

सदस्य, विवेकानंद केंद्र हिंदी प्रकाशन समिति
बी-१०४, राधा विहार, हरिभाऊ उपाध्याय नगर-मुख्य,
अजमेर-३०५००४
दूरभाष : ९८२९४८२६०

दोहे

मित्र

• शरद नारायण खरे

मित्र वही जो नेह दे, सदा निभाए साथ।
हर मुश्किल में थाम ले, कभी न छोड़े हाथ।।

पथ दिखलाए सत्य का, आने न दे आँच।
रहता खुली किताब सा, लो कितना भी बाँच।।

मित्र है सूरज-चाँद सा, बिखराता आलोक।
हर पल रहकर साथ जो, जगमग करता लोक।।

कभी न करने दे गलत, राहें ले जो रोक।
वही मित्र मानो खरा, जो देता है टोक।।

बुरे काम से दूर रख, जो देता गुण-धर्म।
मित्र नाम ईमान का, नैतिकता का मर्म।।

मित्र न रखे छल-कपट, न ही कोई डाह।
तत्पर करने को 'शरद', वाह-वाह बस वाह।।

खुशबू का झोंका बने, मीठी झिरिया नीर।
मित्र रहे यदि संग तो, हो सकती न पीर।।

मित्र मिले सौभाग्य से, बिखराता जो हर्ष।
मिले मित्र का साथ तो, जीतोगे संघर्ष।।

भेदभाव को भूल जो, थामे रखता हाथ।
कृष्ण-सुदामा सा 'शरद', बालसखा का साथ।।

मित्र नहीं तो जिंदगी, देने लगती दर्द।
मित्र रोज ही झाड़ दे, भूलों की सब गर्द।।

सा/अ

विभागाध्यक्ष, इतिहास
शासकीय जे.एम.सी. महिला महाविद्यालय
मंडला-४८१६६१ (म.प्र.)
दूरभाष :९४२५४८४३८२

निजी अस्पतालों ने नहीं निभाई जिम्मेदारी

● **दीपक सेन**

सार्वजनिक क्षेत्र या निजी क्षेत्र? कोरोना महामारी के वक्त निजी अस्पतालों का कुरूप चेहरा उभरकर सामने आया है। यह बेहद भयावह और चेतावनी भरा है। निजी अस्पतालों ने अपनी सामाजिक जिम्मेदारी को कितना निभाया है, यह रोज अखबारों के जरिए पढ़ रहे हैं।

आइए नजर डालते है निजी अस्पतालों के आधारभूत ढाँचे पर। भारत में दो तिहाई बिस्तर निजी क्षेत्र के अस्पतालों के पास है, यानी निजी अस्पतालों के पास ६० फीसदी से अधिक बिस्तर हैं। निजी अस्पतालों के पास ८० प्रतिशत वेंटिलेटर है, जिसमें सिर्फ १० फीसदी को महामारी के दौरान उपयोग में लाया गया। पूरे देश में पाँच में से चार डॉक्टर निजी क्षेत्र के अस्पतालों ने कार्यरत हैं।

जहाँ एक तरफ सार्वजनिक क्षेत्र के अस्पताल, डॉक्टर, नर्स और अन्य स्वास्थ्यकर्मी सामने आकर कोरोना महामारी से लड़ रहे थे, वहीं, मुंबई के एक अस्पताल ने निजी अस्पताल की तरह देश के कई निजी अस्पतालों ने 'नो ओपीडी' और 'नो एडमिशन' का नोटिस चस्पा कर दिया।

आयुष्मान भारत-प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना और राष्ट्रीय स्वास्थ्य प्राधिकरण के मुख्य कार्यकारी अधिकारी डॉ. इंदु भूषण ने एक अखबार को बताया था कि प्रकोप से पहले ही निजी क्षेत्र में लगभग ७० प्रतिशत महत्त्वपूर्ण प्रक्रियाओं जैसे कि कीमोथेरेपी और डायलिसिस की हिस्सेदारी थी। मगर गैर-कोविड के मामलों का इलाज करनेवाले इन निजी प्रतिष्ठानों में से बहुतेरों ने कुछ राज्यों में बढ़ती लागतों और मरीजों की कम आवक का हवाला देते हुए अस्पताल बंद कर दिए।

भूषण ने आगे कहा, "मध्य प्रदेश जैसे राज्य इस वक्त स्वास्थ्यकर्मियों की समस्या से जूझ रहे हैं। और कुछेक राज्य ऐसे हैं जहाँ के निजी अस्पताल सहायता कर सकते हैं।" उन्होंने उम्मीद जताई, "यह वह समय है जब निजी क्षेत्र को कल्याणकारी दृष्टिकोण से सोचना चाहिए, न कि अधिक लाभ कमाने के दृष्टिकोण से।"

मगर वही ढाक के तीन पात! महाराष्ट्र में निजी क्षेत्र के अस्पतालों पर कोविड-१९ के मरीजों के इलाज पर प्रतिबंध नहीं लगाया गया था। लेकिन निजी क्षेत्र के अस्पतालों ने मरीजों को भरती करने से मना कर दिया या फिर पीपीई किट, मास्क और फेसशील्ड के तौर पर इलाज के लाखों रुपए वसूले गए। मुंबई में एक व्यक्ति की कोविड-१९ से मृत्यु हो गई और उसके परिवार को ९.६ लाख रुपए का बिल थमा दिया गया। इसमें तीन लाख रुपए पीपीई किट का खर्चा था।

पीटीआई, राष्ट्रीय सहारा और दैनिक जागरण में वरिष्ठ पत्रकार के रूप में कार्यरत रहे। वर्तमान में देहरादून के यूनिवर्सिटी ऑफ पेट्रोलियम ऐंड एनर्जी स्टडीज में बतौर गेस्ट फैकल्टी जुड़े हैं। इसके अलावा वृत्तचित्र निर्माण तथा विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं और वेबसाइट पर विविध विषयों पर लेखन।

इसी प्रकार देश की राजधानी नई दिल्ली के एक नामी अस्पताल ने ६० वर्षीय बुजुर्ग को ३० दिन भर्ती रखने के बाद १२२ पृष्ठों का १६,१४,५९६ रुपए का बिल थमा दिया। इसमें केवल पीपीई किट के लिए बुजुर्ग के परिवार से २.९ लाख रुपए वसूले गए।

बुजुर्ग मरीज की रिश्तेदार साइमा ने कहा, "मैं खुद एक डॉक्टर हूँ लेकिन मेरे लिए भी अपने चाचा को भरती करवाना मुश्किल था। जैसे ही हमने उन्हें आईसीयू वार्ड में भरती कराया, रजिस्ट्रेशन के वक्त अस्पताल ने ५ लाख रुपए की माँग की। एक हफ्ते बाद अस्पताल से हमें ३ लाख रुपए और जमा कराने के लिए कहा गया। हमें कुल १६ लाख रुपए से अधिक का बिल मिला, जिसे हमने ऋण लेकर चुकाया।"

सोचिए, अगर हम पेशे के से एक डॉक्टर के परिवार से इस प्रकार का व्यवहार कर सकते हैं तो फिर एक आम नागरिक की बिसात ही क्या।

देश के एक अन्य महानगर चेन्नई में भी ऐसे ही निजी अस्पताल ने एक मरीज के परिवार से पीपीई किट के खर्च के तौर पर ३३,०००

रुपए लिये। पूरे देश के हालत के बारे में चर्चा की जाए तो मोटी किताब तैयार की जा सकती है।

डिस्पोजेबल आइटम को बीमा पॉलिसी कवर नहीं करती है। अस्पतालों के बिलों में ५०% हिस्सा पीपीई किट, मास्क और ग्लव्स आदि साजो-सामान का होता है। इस मुश्किल दौर को निजी अस्पतालों ने 'अवसर' के तौर पर देखा और सामान्य दिनों में यह खर्च जो १० प्रतिशत होता था, उसे वैश्विक महामारी के दौर में निजी अस्पतालों ने पाँच गुना बढ़ा दिया।

कोविड के इलाज के बिल में आधी रकम एन-९५ मास्क, पीपीई किट, ग्लव्स आदि का खर्चा होता है। इसे देश भर के निजी अस्पताल ने मनमर्जी दर पर मरीजों से वसूला।

ये परिस्थितियाँ भारत सरकार की शुरुआत उस नीति के चलते पैदा हुई जिसमें निजी अस्पतालों को वैश्विक महामारी के वक्त इलाज करने या नहीं करने की स्वतंत्रता प्रदान कर दी। एक निजी चैनल के प्रस्तोता के लहजे में कहूँ तो राष्ट्र ऐसे मुश्किल वक्त में सरकार से यह जानना चाहता है कि क्या वैश्विक महामारी के वक्त में निजी अस्पतालों की मानवीय या नैतिक जिम्मेदारी नहीं बनती?

देश में बड़े शहरों के कई ऐसे दृष्टांत भी सामने आए जिसमें मरीजों के तिमारदारों द्वारा शिकायत किए जाने का जिक्र किया गया। इन शिकायतों पर प्रदेश की सरकारों ने क्या कदम उठाए, इसका पता अभी तक नहीं चल पाया।

हाँलाकि, फेडरेशन ऑफ इंडियन चैंबर्स ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्री (फिक्की) के अध्यक्ष संगीता रेड्डी का कहना है कि शुरुआती झिझक के बाद निजी क्षेत्र आगे आ रहा है। मगर उनका यह बयान निजी क्षेत्र को बचाने की कोशिश प्रतीत होता है।

डिस्पोजेबल आइटम को बीमा पॉलिसी कवर नहीं करती है। अस्पतालों के बिलों में ५०% हिस्सा पीपीई किट, मास्क और ग्लव्स आदि साजो-सामान का होता है। इस मुश्किल दौर को निजी अस्पतालों ने 'अवसर' के तौर पर देखा और सामान्य दिनों में यह खर्च जो १० प्रतिशत होता था, उसे वैश्विक महामारी के दौर में निजी अस्पतालों ने पाँच गुना बढ़ा दिया।

बहती गंगा में हाथ धोने में निजी लैब कहाँ पीछे रहने वाली थीं! पहले प्रधानमंत्री ने कहा कि टेस्ट मुफ्त होंगे। बाद में तय किया गया कि निजी लैब हर टेस्ट का ४,५०० रुपए लेंगी। यह कीमत पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफ्रीका के गरीब देशों से भी अधिक थी। हालाँकि निजी लैब द्वारा फायदा उठाने के बाद जून में इसे कुछ राज्यों में आधा कर दिया गया।

बहती गंगा में हाथ धोने में निजी लैब कहाँ पीछे रहने वाली थीं! पहले प्रधानमंत्री ने कहा कि टेस्ट मुफ्त होंगे। बाद में तय किया गया कि निजी लैब हर टेस्ट का ४,५०० रुपए लेंगी। यह कीमत पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफ्रीका के गरीब देशों से भी अधिक थी। हालाँकि निजी लैब द्वारा फायदा उठाने के बाद जून में इसे कुछ राज्यों में आधा कर दिया गया।

इधर, निजी स्कूलों द्वारा लॉकडाउन के दौरान फीस लेने का मामला जोर पकड़ रहा है। मगर केंद्र और राज्य सरकारों ने 'कोरोना काल का मौन व्रत' ले रखा है। अस्पतालों और निजी स्कूलों के लिए जमीन सस्ते दामों में मिलती है, ताकि एक निश्चित संख्या में गरीब नागरिकों का भी हित हो सके। मैंने आज तक किसी अस्पताल में गरीबों का इलाज होते नहीं देखा और न ही निजी स्कूलों में किसी गरीब के बच्चे को पढ़ते देखा। अधिकतर निजी अस्पताल और स्कूल हमारे बड़े राजनेताओं और व्यावसायियों के होते हैं। इसलिए ये मनमानी करते हैं और इनके मामलों को दबा दिया जाता है।

वापस विषय पर लौटते हैं। इस वक्त हमारे सामने चिकित्सा के दो मॉडल हैं। पहला मॉडल क्यूबा का है जो इस वैश्विक महामारी से निपटने में विश्वगुरु और विश्वशक्ति से अधिक सक्षम नजर आया, क्योंकि इस देश का चिकित्सा क्षेत्र सरकारी हाथों में हैं। यहाँ के चिकित्साकर्मियों ने दूसरे देशों में जाकर भी अपनी सेवाएँ दीं।

दूसरा मॉडल पश्चिमी देशों का हैं, जो रैंकिग में भले ही नंबर १० में आते हो, मगर कोरोना के सामने बुरी तरह चरमरा गए। इसका सबसे बड़ा कारण चिकित्सा क्षेत्र का निजी हाथों में होना था।

अब फुटबॉल भारत सरकार के पाले में हैं। सरकार को निर्णय करना है कि वह क्यूबा का मॉडल अपनाकर अस्पतालों को सार्वजनिक क्षेत्र के अंतर्गत रखना चाहती है अथवा निजी क्षेत्र की भागीदारी को बढ़ावा देकर अपने नागरिकों की जान संकट में डालना चाहती है।

कितने अफसोस की बात है कि आजादी के ७० साल बाद भी हम अपने नागरिकों के लिए स्वास्थ्य और शिक्षा जैसे मूलभूत अधिकार नहीं दे पाए हैं। केवल शिक्षा का अधिकार संविधान में जोड़ देने से बच्चों को शिक्षा हासिल नहीं हो जाती है। कुछ ऐसी ही हालात चिकित्सा के क्षेत्र के हैं।

मेरा व्यक्तिगत तौर पर मानना है कि देश के हर राज्य में एक एम्स होना चाहिए और मंडल स्तर पर एक पीजीआई स्तर का अस्पताल होना चाहिए। सभी नई दिल्ली के एम्स से जुड़े होने चाहिए। इससे आम नागरिक को बेहतर चिकित्सा सुविधा मिल सकेगी।

साथ ही वैश्विक महामारी के वक्त देश का साथ नहीं देने वाले अस्पतालों का लाइसेंस रद्द किया जाए। इसके अलावा निजी अस्पतालों की संख्या नियंत्रित की जाए और इन्हें किसी तरह की छूट नहीं दी जाए।

साअ

८०४, नीलपदम-२ अपार्टमेंट
८०४, सेक्टर-४, वैशाली,
गाजियाबाद-२०१०१०

शुद्ध श्वेत पन्ने में

सुप्रसिद्ध लेखक एवं अनुवादक। कन्नड़-हिंदी में परस्पर अनुवाद की ६० पुस्तकें प्रकाशित। साहित्य अकादेमी का अनुवाद पुरस्कार, कर्नाटक साहित्य अनुवाद अकादेमी पुरस्कार, कमला गोयनका अनुवाद पुरस्कार, गोरूर पुरस्कार, विश्वेश्वरैया साहित्य पुरस्कार आदि पुरस्कारों से पुरस्कृत।

माँ-बेटी

मूल : **चंद्रिका हेगडे**
अनुवाद : **डी.एन. श्रीनाथ**

मैं, लगता है हमेशा कि
वह हूँ
हम नहीं अलग-अलग
उसकी बातचीत, आचार-विचार
सबकुछ मेरे ही जैसे

इधर जब से यौवन की देहरी पर रखा है पाँव
दीख रही है हू-ब-हू
मुझ जैसे ही।
सोचा जा सकता है मुझ ही जैसा
अगर देखते ही रहे
लगता है कि अपनी खोई हुई जवानी
फिर देख रही हूँ
इसलिए तो
वह बहुत पसंद है मुझे!
मगर उसे
मैं पसंद हूँ कि
मालूम नहीं!
अब रोज प्रार्थना कर रही हूँ।
'वह मुझे देखती रहे तो उसे
बस क्या जिंदगी इतना ही…'
यह उसे न लगे।

बिक्री के लिए हैं

मूल : **एच.एस. बोल्माड़ी**
अनुवाद : **डी.एन. श्रीनाथ**

बिक्री के लिए हैं
आधी लिखी हुई तसवीर
आधा बनाया हुआ घर
आधा देखा हुआ सपना…
जो चाहे खरीद सकता है
बिक्री के लिए हैं
आधी लिखी हुई डायरी
आधा मन…
आधी उम्र।

× × ×

शुद्ध श्वेत पन्ने में
कभी खींचा हुआ बहुवर्ण चित्र
अब जहाँ-तहाँ फीका हुआ है
थोड़ा धब्बा लगा है…
थोड़ा गंदा हुआ है।
घुन खाकर बचा हुआ आधा चित्र
बिक्री के लिए है,
जिसे कला का ज्ञान है, खरीद सकता है
नहीं तो फेंक सकता है।

× × ×

बिना छत के अकेले घर में
पीठ के बल लेटकर
चाँद के चारों ओर प्रदक्षण करनेवाले
तारों को गिनते हुए
एक अच्छे कल के इंतजार में
बाँधा हुआ आधा सपना
बिक्री के लिए है
सपने देखनेवाले खरीद सकते हैं
मन नहीं माना तो भूल सकते हैं।

× × ×

किसी की दिनचर्या को
अपना ही मानकर
उसी चिंता में दिन-रात बिताकर
कराहते हुए, लुढ़कते हुए
अपने को ही खोजकर
मेरा लिखा, मेरे बिना का

आधी दिनचर्या के पन्ने
बिक्री के लिए हैं...
खरीद सकते हैं लेखक
इच्छा नहीं हुई तो जला सकते हैं।

× × ×

भोग लालसा में पिघल गया है
आधी उम्र
नशे की दिशा में खो गया है
आधा मन
बिना मन के मन में
बिना उम्र की उम्र में
बेच रहा हूँ अपने आपको···
जिनके मन में प्यार है, खरीद सकते हैं
नीति चूक गई तो मार सकते हैं!

पाप

मूल : **एच.एस. अनुपमा**
अनुवाद : **डी.एन. श्रीनाथ**

हे प्रभु,
साँस लेनेवाले रोबोटों की
सृष्टि करो मत
अगर सृष्टि की भी
उसके छोटे से सिर में
दिमाग रखना नहीं चाहिए
अगर रखा तो भी
पंख फैलाकर उल्लासित होनेवाले मन को
अंकुरित मत होने दो
अंकुरित होने पर भी
दिल की नीड़
हर पल प्रस्फुरण न हो
प्रस्फुरण होने पर भी
तनी हुई रीढ़ की हड्डी
सीधा मत खड़ा होना चिहिए
आँख कान नाक न हो
होने पर भी
चमकनेवाले खाल-पत्तर को
स्पर्श का ज्ञान न हो
हाथ पैर कान खाल
दिमाग दिल मन
रीढ़ की हड्डी···
चाहिए या न चाहिए, पूछे बिना रख दिए
मुँह देकर
आवाज देना भूल क्यों गए?

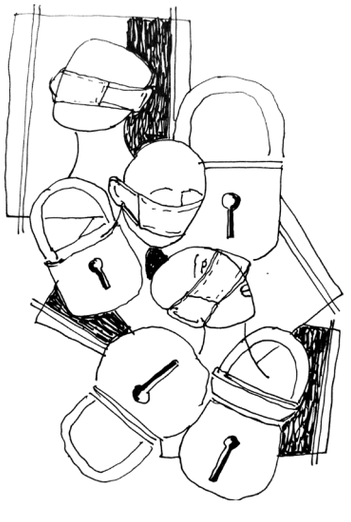

गति का पाठ जो पढ़ाया
पंख देना क्यों भूल गए?

हे प्रभु!
तेरे पाप को साफ किया नहीं जा सकता
भूल के गुनाह की सजा
माफ नहीं हो सकती
फिर भी
पेट में एक छोटी
थैली रखकर
ब्रह्मांड के बीज प्रसव के लिए
छोड़ दिया न?
तुम्हें क्षमा किए हैं हम
जाओ···

नक्काशी करने गया···

मूल : **वसंतकुमार पेर्ला**
अनुवाद : **डी.एन. श्रीनाथ**

नक्काशी करने गया
नक्काशी करते-करते बैठ गया वहीं
पहले सिर
फिर आँखें, नाक, कान, मुँह
गरदन, बाँह, पेट, नाभि, जाँघ, पैर
आखिर में चरण
सिर उठाकर खड़ा होना चाहिए
उस आधार के लिए पीठ
इस प्रकार करते वक्त

पूछी प्रतिमा ने
कर क्या रहे हो?
पल भर के लिए मैं अवाक्
मानो पिता से पूछा बेटा सवाल
बोली प्रतिमा—
नहीं बना रहे हो तुम मुझे
मैं पहले थी
अब भी हूँ
रहूँगी कल भी
तुम बना रहे हो अपने को
सावधान,
एक-एक प्रहार का करो सावधानी से!

नवनीत, द्वितीय क्रॉस, अन्नाजी राव ले आउट
प्रथम स्टेज, विनोबा नगर, शिमोगा-५७७२०४ (कर्नाटक)
दूरभाष : ०९६११८७३३१०

कोरोना का कालखंड तथा प्रकृति का निखार

● अंचल गुप्ता

विश्व भर में कोरोना संक्रमण एक ऐसी पहेली बना हुआ है, जिसके न स्रोत का पता है, न ही इलाज का। पूर्ण विकसित एवं विकासशील देश भी इसके समक्ष बेबस जान पड़ रहे हैं। चीन के वुहान प्रांत से प्रसारित संक्रमण सबके लिए एक अनबूझ पहेली सा बना हुआ है। भारत में इसका प्रारंभ केरल प्रांत में फरवरी २०२० में हुआ। देश में संक्रमण के प्रसार को रोकने के लिए एकमात्र विकल्प लॉकडाउन को लागू किया गया। जिसके चलते सभी आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक तथा व्यावसायिक गतिविधियों पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया गया। इसके अधिकांश परिणाम नकारात्मक रहे, परंतु सभी मानवीय गतिविधियाँ रुक जाने से एक सकारात्मक असर भी दृष्टिगत हुआ, जिसमें प्रकृति स्वच्छ, प्रदूषण रहित, साफ एवं निर्मल दिखाई दी। कहने की आवश्यकता नहीं कि हमने विकास एवं आधुनिकता के नाम पर प्रकृति का अंधाधुंध दोहन किया। जैसे पेड़ों का अनावश्यक कटान, जलस्रोत में जहरीले रसायनों को डालना तथा वातावरण में जहरीली गैसों का उत्सर्जन आदि। देशभर में २३ मार्च को लॉकडाउन की घोषणा से जैसे ही कल-कारखानों के साथ सभी प्रकार के यातायात व व्यक्तिगत वाहनों के पहिए थमे तो प्रकृति ने खुलकर साँस ली। दिल्ली सहित प्रत्येक शहर के प्रदूषण का ग्राफ नीचे आ गया। यह बात हमें सोचने पर मजबूर करती है कि अब प्रकृति व पर्यावरण स्वच्छता की ओर समय रहते ध्यान देने की आवश्यकता है। ऐसा करके न केवल हम धरती माँ और प्रकृति को जीवनदान दे पाएँगे, बल्कि देश के उस चार हजार अरब रुपए की भी बचत कर पाएँगे, जो कि प्रतिवर्ष सरकार के द्वारा स्वच्छता कार्यक्रमों पर खर्च किया जाता है। हमें स्वयं जागरूक होकर दूसरों को भी जगाना होगा, क्योंकि यह समय की माँग है।

गोकुलदास हिंदू कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मुरादाबाद के समाजशास्त्र विभाग में एसोसियट प्रोफेसर के पद पर विगत बीस वर्षों से कार्यरत। २५ से अधिक शोध-पत्र तथा आलेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। ५० से अधिक संगोष्ठियों व कार्यशालाओं में शोध-पत्रों का वाचन एवं विषय विशेषज्ञ के रूप में सहभागिता। २०० से अधिक कविताओं की रचना भी।

चीन के शहर वुहान की प्रयोगशाला में जनमे वायरस ने कोरोना काल में हमारी दुनिया को पूर्णतया बदल दिया है। इस त्रासदी में विश्व भर के लाखों लोग बीमार पड़े, लाखों लोग ठीक भी हुए और लाखों मृत्यु का ग्रास भी बने। इस वायरस का संक्रमण विश्व भर में इतना तीव्र था, इससे बचाव के लिए सभी देशों के पास लॉकडाउन से बेहतर कोई विकल्प नहीं था। इसका एक कारण यह भी था कि न तो इस वायरस के स्रोत का पता था, न ही लक्षण स्थिर थे। इलाज और दवा की भी कोई सटीक जानकारी नहीं थी और वैक्सिन का सफर भी कोसों दूर था। इसलिए सबसे कारगर एवं सुरक्षित उपाय लॉकडाउन का सहारा ही विश्व भर में लिया गया। भारत में भी संक्रमितों की बढ़ती संख्या को देखकर सरकार के द्वारा अन्य देशों की तरह लॉकडाउन के दौरान रेल मेट्रो, हवाई, रेल यात्रा, थिएटर, जिम, मॉल, बार, होटल-रेस्टोरेंट, स्कूल-कॉलेज, यहाँ तक कि जहाँ पर लोगों के एकत्र होने की न्यूनतम संभावनाएँ थीं, सभी को पूरी तरह से बंद कर दिया गया। यहाँ तक कि लोगों की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जिम्मेदारी को भी प्रशासन ने अपने सिर ले लिया। सभी प्रकार के वाहन, यातायात, कारखाने बंद हो जाने से देश की आर्थिक व्यवस्था पटरी से उतर गई। बावजूद इन सब दुश्वारियों के लॉकडाउन के दिनों का पर्यावरण तथा प्रकृति के पक्ष में ऐसा सकारात्मक परिणाम आया, जिसकी किसी ने कभी कल्पना भी नहीं की होगी। रेल, बस, गाड़ी, कारखानों के पहिए जाम हो जाने से पर्यावरण का पूरा परिदृश्य ही बदल गया। दिल्ली और नोएडा जैसे महानगर, जो स्मॉग और प्रदूषण के लिए सदैव चर्चा में रहते हैं, वहाँ बादलों के मंजर तथा घरों के आसपास परिंदों की चहक सुनाई देने लगी। सुनसान सड़कों के किनारे लगे पौधों में बहार आ गई थी। कुल मिलाकर प्रकृति अत्यंत मनोहारी दृश्य प्रस्तुत कर रही थी।

कहने की आवश्यकता नहीं कि सरकार जो हजारों-करोड़ों रुपए खर्च करके भी जिस यमुना को साफ नहीं कर पाई, वह महान् कार्य कोरोना काल के लॉकडाउन ने कर दिया था। कल-कारखाने तथा यातायात की आवाजाही पूर्णतया रुकने से कार्बन का उत्सर्जन न्यून हो चला था। देश ही नहीं, विदेशों में भी मंजर बदला सा दिखाई दे रहा था। अमेरिका के शहर न्यूयॉर्क में पिछले साल की तुलना में प्रदूषण ५० प्रतिशत तक नीचे

आ गया। चीन के पर्यावरण मंत्रालय के द्वारा जारी किए गए आँकड़ों के अनुसार वहाँ न केवल कार्बन उत्सर्जन में २५ फीसदी की गिरावट देखने को मिली, अपितु इसके ३३७ शहरों की हवा की गुणवत्ता में भी ११.४ फीसदी का सुधार भी हुआ था। यूरोप की सैटेलाइट तसवीरें भी बता रही थीं कि उत्तरी इटली से नाइट्रोजन डाइ-ऑक्साइड का उत्सर्जन कम हो रहा था। स्वीडन के एक विशेषज्ञ के मुताबिक दुनिया के कुल कार्बन उत्सर्जन का २३ फीसदी परिवहन से निकलता है। इनमें से भी निजी गाड़ियाँ और हवाई जहाज की वजह से दुनिया भर में ७२ फीसदी कार्बन उत्पन्न होता है। पूर्ण बंदी के कारण कार्यस्थल व बाजार की आवाजाही पूर्णतया बंद होने से प्रदूषण अपने न्यूनतम स्तर पर था।

ऐसा प्रतीत हो रहा था कि कोरोना महामारी के रूप में प्रकृति अपना कोई संदेश हम तक पहुँचाना चाहती है कि जिस इनसान ने प्रकृति का अनावश्यक दोहन और शोषण कर स्वयं को सबसे बड़ा विजेता मान लिया था, वही आज एक सूक्ष्म वायरस के आगे लाचार और बेबस है। हमें पुन: स्मरण करना होगा कि जिस प्रकृति का सम्मान करने की शिक्षा हमें हमारे धर्म-शास्त्र देते हैं, उस शिक्षा को कहीं-न-कहीं हम भूल गए थे। मानव ने मानवता को भुलाकर, समानता के भाव को कहीं खो दिया, जबकि प्रकृति हमें समानता का संदेश देती है। उसके सामने जाति, धर्म व अन्य क्षेत्र सब बराबर हैं। प्रकृति में जिस प्रकार सूरज, चाँद, सितारे अपनी रोशनी और प्रकाश देने में किसी के साथ भी कोई भेदभाव नहीं करते, कोरोना वायरस भी प्रकृति का संदेश था, जो सबको बिना जाति, आयु, अमीर, गरीब आदि किसी भेदभाव संक्रमित कर रहा था। हमने विकास की अंधी दौड़ में भुला दिया कि धरती पर जीवन का आरंभ और जीवन को चलाए रखने का काम प्रकृति की बड़ी पेचीदा प्रक्रिया है। सृष्टि में जीव, वनस्पति, जीवाणु, कीड़े-मकोड़े सब जीवन प्रक्रिया को चलाए रखने में अपना अपना योगदान करते हैं। सभी जीवधारियों के जीवन के लिए प्रकृति में शुद्ध वायु और जल के साथ-साथ अनेक प्रकार के जीव-जंतु व वनस्पतियों में संतुलन का होना भी बहुत आवश्यक है। हमें 'वसुधैव कुटुंबकम्' का परिपालन करते हुए संपूर्ण विश्व को एक ही परिवार समझकर आगे बढ़ना होगा। केवल मनुष्य ही नहीं, पेड़-पौधे व जीव-जंतुओं की सुरक्षा भी करनी होगी, क्योंकि हमारे पोषण तथा पर्यावरण को संतुलित करने में उनका भी अभूतपूर्व योगदान है। प्रकृति मानव व सभी जीवों के मध्य तारतम्य बनाकर जैव-विविधता के जरिए स्वचालित व्यवस्था से पृथ्वी पर संतुलन बनाए रखती है।

जीवों के मध्य पाई जानेवाली विभिन्नता जैव-विविधता के नाम से जानी जाती है। जैव-विविधता के बिना पृथ्वी पर मानव जीवन लगभग असंभव है। इसी से हमें भोजन, कपड़ा, लकड़ी तथा फसलें आदि प्राप्त होती हैं। जैव-विविधता पर्यावरण से प्रदूषण के निस्तारण में भी हमारी मदद करती है। यही कार्बन डाइऑक्साइड के उन प्रमुख तत्त्वों को अवशोषित करती है, जो कि वैश्विक तपन के लिए सर्वाधिक उत्तरदायी हैं। इसी के संतुलन से भूमि में जलीय-चक्र गतिमान रहने के कारण भूमिगत जल स्तर बना रहता है। जैव-विविधता के द्वारा ही पौधे तथा जीव-जंतु एक-दूसरे के साथ-साथ खाद्य शृंखला से जुड़े रहते हैं। यदि एक भी प्रजाति का विलुप्तीकरण होता है तो ये दूसरे के जीवन को प्रभावित कर परितंत्र को कमजोर करता है। पृथ्वी का यह जैविक खजाना लगभग ४०० करोड़ वर्ष पुराना है; परंतु वर्तमान में मनुष्य की लालची प्रवृत्ति ने इस अक्षय धन के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न कर दिया है। विश्व भर में लगभग साठ हजार पौधों की तथा दो हजार जीव-जंतुओं की प्रजातियाँ प्राय: लुप्त होने के कगार पर हैं। इस जैव-विविधता के ह्रास के लिए मुख्य रूप से पर्यावरण प्रदूषण, वन्य-जीवों का शिकार तथा वनों का अंधाधुंध कटान आदि प्रमुख रूप से उत्तरदायी हैं।

कोरोना संक्रमण ने मानव के स्वयं को सर्वोच्च मानने के उस विश्वास को परास्त कर दिया है, जिसमें वह सोचता है कि वह सभी प्राकृतिक तथा सामाजिक संकटों का हल खोज सकता है। जबकि प्रकृति ने समय-समय पर मानव से अधिक शक्तिशाली होने का परिचय देकर उसके इस दावे तथा सोच को खोखला साबित किया है। उदाहरण के लिए, १८वीं सदी में प्लेग, १९वीं शताब्दी में हैजा, २०वीं शताब्दी में स्पेनिश फ्लू और २१वीं शताब्दी में सार्स, स्वाइन फ्लू और अब कोरोना, ये सब प्रकृति की चुनौतियों की एक झलक मात्र हैं। इस पर भी मानव ने सुधरने की ओर करवट नहीं ली तो इससे भी बदतर परिणाम झेलने होंगे। २०१९ की समाप्ति पर कोरोना की दस्तक ने समूचे विश्व को हिलाकर रख दिया। तमाम प्रयासों के बावजूद भी कोई इसका उपचार ज्ञात नहीं कर सका। सूत्रों से ज्ञात हुआ कि कोविड-१९ चीन के वुहान शहर में जंगली चमगादड़ों के संपर्क से खाद्य बाजारों और तत्पश्चात् घरों और लोगों में पहुँचा और फिर इस संक्रमण ने तेजी से पूरे विश्व को अपनी चपेट में ले लिया। इन सभी वायरस का कहर मानव का प्राकृतिक जीवन में अत्यधिक हस्तक्षेप का परिणाम है। यदि पूर्व की बात करें तो जंगली जानवर व इनसानों के मध्य एक आवश्यक दूरी हुआ करती थी। पशु-पक्षी बिना किसी की दखलंदाजी के अपनी निजता के साथ जंगलों में निवास करते थे। परंतु मानव ने कभी विकास, कभी व्यापार, तो कभी मनोरंजन के नाम पर उनके और अपने बीच की मौजूदा दूरी को ही समाप्त कर दिया। इसके परिणामस्वरूप न केवल बहुत से पशु-पक्षियों की प्रजातियाँ न केवल विलुप्त होने के कगार पर हैं, बल्कि इनसे प्रसारित महामारियों ने तो दुनिया का अस्तित्व ही खतरे में डाल दिया है।

हमने जैव-विविधता को मिटाने के क्रम में हमने खाद्य और अखाद्य के बीच का अंतर मिटा दिया। हमें समझना होगा कि इबोला और निपाह जैसी ७० फीसदी महामारी का स्रोत वन्यजीव ही हैं। इबोला के कारण दो वर्ष तक पूरा अफ्रीका महाद्वीप खतरे में रहा। विश्व भर के पर्यावरण विशेषज्ञों ने कोरोना वायरस से फैली महामारी को प्रकृति के उस संदेश की तरह देखा, जो इनसान को उसके कृत्यों के प्रति आगाह कर रहा है। संयुक्त राष्ट्र की पर्यावरण प्रमुख इंगर एंडरसन का मानना है कि मानवता प्राकृतिक दुनिया पर कई तरह के दबाव डाल रही है, जिसका परिणाम

महामारी व प्राकृतिक आपदाओं के रूप में सामने आ रहा है। विभिन्न देश के जंगलों में लगनेवाली आग, वैश्विक ताप से टूटते गरमी के रिकॉर्ड, टिड्डी दलों के बढ़ते हमले, कहीं अत्यधिक वर्षा या अति का सूखा सहित तमाम ऐसी दुर्घटनाओं से प्रकृति हमें बार बार सावधान करने का संकेत दे रही है। यदि अब भी हम सब इस महत्त्वपूर्ण ग्रह का ध्यान रखने में सफल नहीं होते हैं तो यह तय है कि हमारा भी पृथ्वी पर सुरक्षित रहना संभव नहीं है।

प्रकृति से जुड़े विशेषज्ञों का मानना है कि इन आपदाओं को रोकने के लिए हमें गरम होती धरती को भी रोकने की आवश्यकता है। साथ ही अपनी खनन, खाद्य और आवास जैसी तमाम इनसानी जरूरतों को पूरा करने के लिए वनों के अतिक्रमण पर पूरी तरह से रोक लगाने की त्वरित आवश्यकता है; क्योंकि यही गतिविधियाँ वन्य-जीवों को इनसानों के संपर्क में आने को विवश करती हैं। प्रतिवर्ष हम २२ अप्रैल को 'धरती दिवस' मनाते हैं। ऐसे में इस दिवस को मनाने की सार्थकता भी इसी में है कि हम सब संकल्प लें कि हम न केवल प्रकृति को उसके असली रूप में सँवारने का प्रयास करेंगे, अपितु धरती के शृंगार उसकी जैव-विविधता को भी बरकरार रखेंगे। आज पूरी दुनिया कोरोना की वैश्विक महामारी से जूझ रही है। साथ ही यह चेतावनी हमें प्रकृति की ओर लौटने को विवश कर रही है। प्रतिवर्ष पक्षियों से लेकर जिराफ तक हजारों जानवरों की प्रजातियों की संख्या कम होती जा रही हैं। भारत में वर्तमान में करीब १४० जीव-जंतु संकटग्रस्त अवस्था में हैं। आँकड़े बताते हैं कि जहाँ १८वीं सदी तक प्रत्येक ५५ वर्षों में एक वन्य पशु की प्रजाति लुप्त होती रही है। वहीं १८वीं से २०वीं सदी के बीच प्रत्येक १८ माह में एक वन्य प्राणी की प्रजाति नष्ट हो रही है। पारिस्थितिकी तंत्र में प्रत्येक प्राणी अर्थात् मानव व जीव-जंतु की खाद्य शृंखला और जैव-विविधता की दृष्टि से विशेष महत्त्व होता है। क्योंकि इसी पारिस्थितिकी तंत्र और खाद्य-शृंखला पर मनुष्य का अस्तित्व टिका है। स्मरण रहे, अंग्रेजों द्वारा भारत पर किए गए शासन काल में उनके द्वारा निर्दोष प्राणियों पर किए गए शिकार की कहानियाँ भले ही प्रचलित हों, परंतु उनका संरक्षण करने की पहल भी उन्होंने ही की थी। १९०७ में पहली बार सर माइकल कीन ने पातली दून के वनों को प्राणी अभयारण्य बनाए जाने का प्रस्ताव रखा था। १९३४ में गवर्नर सर मालकॉम हैली ने कालागढ़ के आसपास के वनों को कानूनी संरक्षण देते हुए राष्ट्रीय प्राणी उद्यान बनाने की बात कही। हैली ने जिम कॉर्बेट से परामर्श करते हुए इसकी सीमाएँ निर्धारित कीं और १९३५ में 'यूनाइटेड प्रोविंस नेशनल पार्क ऐक्ट' पारित हुआ। इसके साथ ही यह भारत का पहला राष्ट्रीय वन्य प्राणी उद्यान ८ अगस्त, १९३६ को अस्तित्व में आया। यह हैली के प्रयत्नों से बना था, इसलिए इसका नाम 'हैली नेशनल पार्क' रखा गया। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद उत्तर प्रदेश सरकार ने पहले इसे 'रामगंगा नेशनल पार्क' और बाद में जिम कॉर्बेट की मृत्यु के पश्चात् उनकी याद में इसका नाम 'कॉर्बेट नेशनल पार्क' रख दिया। हमें गर्व है कि यह विश्वविख्यात राष्ट्रीय उद्यान उत्तराखंड में है।

स्मरण रहे कि हमारा अस्तित्व प्रकृति से है, न कि प्रकृति का हमसे। जब तक हम इस सत्य को स्वीकार नहीं कर लेते, तब तक न तो हम उसके लिए संवेदनशील हो पाएँगे और न ही स्वयं को सुधार पाएँगे। इसके लिए वैश्विक समाज को एकजुट होकर काम करने की जरूरत है। पृथ्वी पूरे ब्रह्मांड की जननी तथा प्रकृति हमारी पालनहार है। इनसे छेड़छाड़ के दुष्परिणाम आज कोरोना जैसी बीमारियों के रूप में हमारे सामने आ रहे हैं। पिछले दो दशकों से हमने भोजन सहित तमाम आवश्यकता को पूरा करने के लिए वन्य-जीवों को साध्य मान लिया, जिसके परिणामस्वरूप महामारियाँ निरंतर इनसान के अस्तित्व पर आघात कर रही हैं। कोरोना काल के चलते सारी इनसानी गतिविधियाँ थम जाने से प्रकृति का आश्चर्यचकित करता नया रूप देखने को मिला है। मानवजनित प्रदूषण के कम होने से आसमान में तारे समेत तमाम ग्रह तथा पहाड़ आसानी से देखे जा सकते थे। दशकों से नदियों को साफ करने में विफल हुई मुहिम बिना किसी प्रयास के रंग लाती दिखाई दे रही थी। इन महामारियों ने सिद्ध कर दिया है कि हम जितने भी वैज्ञानिक आविष्कार कर लें, परंतु प्रकृति को जीत नहीं सकते। हमे आज भी प्रकृति की उतनी ही आवश्यकता है, जितनी सैकड़ों साल पहले थी। कोराना के चलते लॉकडाउन ने हमें यह दिखा दिया कि प्रकृति तथा पर्यावरण को सबसे अधिक हम प्रदूषित करते हैं। इन दिनों प्रकृति की एक सुनहरी तसवीर दिखाई दी। नदियों में २० से ३० प्रतिशत पानी की शुद्धता हुई है। यद्यपि यह प्रतिशत अभी बहुत कम है, क्योंकि उद्योगों का तरल कचरा तो आना बंद हो गया है, परंतु कस्बों और शहरों का सीवर लगातार इन्हें अभी भी प्रदूषित कर रहा है। यह परिदृश्य हमें यह दिखाता है कि एक तालाबंदी का छोटा सा अंतराल, जो प्रकृति और पृथ्वी को इतना सुखद अनुभव दे सकता है, तो क्यों न हम लॉकडाउन खुलने के बाद भी ये सब सावधानियाँ बरतें तो प्राकृतिक संसाधनों को फिर से अपने रूप में लाया जा सकता है। आवश्यक है कि हम कोरोना काल को सदैव याद रखें। इस एकांतवास ने हमारी अब तक की विकास यात्रा पर चिंतन-मनन का एक आदर्श अवसर भी हमको प्रदान किया है। इस महामारी ने

स्मरण रहे कि हमारा अस्तित्व प्रकृति से है, न कि प्रकृति का हमसे। जब तक हम इस सत्य को स्वीकार नहीं कर लेते, तब तक न तो हम उसके लिए संवेदनशील हो पाएँगे और न ही स्वयं को सुधार पाएँगे। इसके लिए वैश्विक समाज को एकजुट होकर काम करने की जरूरत है। पृथ्वी पूरे ब्रह्मांड की जननी तथा प्रकृति हमारी पालनहार है। इनसे छेड़छाड़ के दुष्परिणाम आज कोरोना जैसी बीमारियों के रूप में हमारे सामने आ रहे हैं। पिछले दो दशकों से हमने भोजन सहित तमाम आवश्यकता को पूरा करने के लिए वन्य-जीवों को साध्य मान लिया, जिसके परिणामस्वरूप महामारियाँ निरंतर इनसान के अस्तित्व पर आघात कर रही हैं।

हमें प्रत्येक प्रकार की स्वच्छता की ओर जागरूक किया है, जो कि हमारे स्वास्थ्य की एक आवश्यक शर्त है।

निष्कर्षत: हमारे प्राचीन वैदिक साहित्य में सभी जीवित प्राणियों को बराबर सम्मान देने के उदाहरण सदैव से वर्णित हैं। ऋग्वेद की ऋचाओं में सभी के कल्याण की प्रार्थना की गई है। प्रकृति में हमारी बड़ी-से-बड़ी बीमारी को दूर करने की औषधियाँ मौजूद हैं। हमारे शास्त्रों में वर्णित भारतीय आध्यात्मिक जीवन-शैली ही विश्व को वैश्विक ताप जैसे पर्यावरण जनित संकटों से पार करा सकती है। प्रकृति माँ की भाँति समस्त प्राणियों के कल्याण करने हेतु सदैव तत्पर रहती है, परंतु मानव ने मात्र अपने हित को सर्वोपरि रखकर अपनी माँ को रुग्ण बना दिया। एक रोगी माँ के बच्चे कैसे स्वस्थ हो सकते हैं? अत: उपचारस्वरूप हमें अपनी जड़ों की ओर लौटना होगा। मानव को अपने अहंकार से ऊपर उठकर सृष्टि के सम्मिलित हित के संबंध में विचार करना होगा। स्मरण रहे कि मानव तथा प्रकृति के मध्य समन्वय तथा सह-अस्तित्व का भाग समाहित है। इसलिए हमारे पूर्वजों ने ऐसे रीति-रिवाज, नियम, परंपराओं तथा जीवन-शैली को अपनाया, जो प्रकृति के शोषण तथा दोहन न करके उसके अनुकूल हों। आज वैश्विक स्तर पर संयमित व सुखी जीवन के लिए तो आयुर्वेद, प्राकृतिक, चिकित्सा, योग-ध्यान तथा प्राणायाम को अनुकरणीय मान लिया गया है। कोरोना जैसे वैश्विक संकटों से मुक्ति प्राप्त करने के लिए प्रकृति अनुकूल जीवन-शैली को अपनाना भी आवश्यक है, जिसमें सह-अस्तित्व का भाव पूर्व से ही समाहित है।

ध्यान रहे कि कोरोना काल की समाप्ति पर भी हमें प्रकृति के प्रति सकारात्मक भाव को जीवित रखना होगा; क्योंकि संपूर्ण जगत् में मनुष्य ही वह समर्थ प्राणी है, जो सभी की देखभाल कर सकता है। कोरोना संकट ने हमें यह सिखाया है कि हमें अपने साथ-साथ दूसरों की भी चिंता करनी है। यदि हम स्वयं को ही सुरक्षित रखने के बारे में सोचेंगे, तो यह संक्रमण दूसरा व्यक्ति हमें दे सकता है। इसीलिए जागरूकता बढ़ाने के लिए दूसरों के बचाव के लिए हम सबको मिलकर प्रयास करने होंगे, चाहे वे हमारे पड़ोसी हों, हमारे साथ काम करनेवाले या हमें सेवाएँ देनेवाले हों। दान और परोपकार की सीख हम प्रकृति से ले सकते हैं। सूर्य, चंद्रमा, आकाश, पृथ्वी, पेड़-पौधे आदि सभी निर्विकार भाव से मानव कल्याण में लगे रहते हैं। दान और परोपकार प्रकृति के कण-कण में समाया हुआ है, जिस तरह वृक्ष अपने फल स्वयं नहीं खाते, नदियाँ परोपकार के लिए शीतल जल देती हैं, उसी प्रकार मनुष्य को भी समाज में समानता बनाने के लिए दान और सहयोग करना चाहिए। प्रकृति हमें स्मरण कराना चाहती है कि अकेले व्यक्ति का कोई महत्त्व नहीं होता। उसके जीवन की जरूरतें पारस्परिक निर्भरता से ही पूर्ण होती हैं, इसलिए यह आवश्यक है कि हम पूरी विनम्रता के साथ समानता और पारस्परिक निर्भरता के जीवन-मूल्यों को स्वीकार करें। कोरोना जैसी वैश्विक चुनौतियों का सामना करने तथा बेहतर भविष्य के निर्माण में यह सबक हमारे लिए नितांत उपयोगी सिद्ध होगा।

एसो.प्रोफेसर, समाजशास्त्र
गोकुलदास हिंदू कन्या महाविद्यालय,
मुरादाबाद (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४१०६७९९५५

लघुकथा

भाग्य

● **पुष्पेश कुमार पुष्प**

सुबह का समय था। बच्चे कचड़े बीन रहे थे। तभी आशुतोष बाबू अपने हृष्ट-पुष्ट कुत्ते को पुचकारते हुए घर से बाहर निकले। आशुतोष बाबू प्रतिदिन सुबह के समय अपने कुत्ते के गले में पट्टा बांधे सैर को निकले। बच्चों की फौज इस आकर्षक कुत्ते के पीछे हो लिया। वे कचड़े बीनने का काम छोड़ उसके पीछे-पीछे चल रहे थे।

आशुतोष बाबू सैर के बाद शहर के चौराहे पर उपस्थित एक होटल में गए। कुत्ते के नाश्ते का समय हो गया था। आशुतोष बाबू के कुरसी पर बैठते ही वह कुत्ता भी वहीं जमीन पर बैठ गया। आशुतोष बाबू ने होटल के नौकर को आवाज देकर बुलाया, "अरे रामू, हमारे बच्चे के लिए नाश्ते की व्यवस्था करो।"

"जी मालिक क्या दूँ?" रामू ने कहा।

"इसके लिए दूध और बिस्किट। मेरे लिए एक कप चाय लाना।" आशुतोष बाबू ने कुत्ते को पुचकारते हुए कहा।

रामू ने आशुतोष बाबू के आदेशानुसार दूध और बिस्किट कुत्ते के सामने रख दिया। कुत्ता बड़े चाव से नाश्ते का लुत्फ उठा रहा था।

बच्चे ललायित नजरों से देख रहे थे। बच्चे अब नजदीक आ रहे थे कि शायद एक-दो बिस्किट उन्हें भी मिल जाए।

लेकिन उनके निकट आते ही आशुतोष बाबू गरज उठे, "हरामी के पिल्ले दूर हट। बिस्किट चुराना चाहता है।"

बच्चे अपने काम पर लौटते हुए सोच रहे थे, "काश! वे भी आशुतोष बाबू के कुत्ते होते तो··· ? और वे अपने भाग्य को कोसते हुए कचड़े बीनने मे लग गए।

विनीता भवन,
निकट-बैंक ऑफ इंडिया
काजीचक, सवेरा सिनेमा चौक,
बाढ़-८०३२१३ (बिहार)
दूरभाष : ०९१३५०१४९०१

कोरोना से डरो ना

● पुष्पा सिन्हा

'कोरोना से ना डरो,
यह हमें सीख सिखाने आया है।'

कोरोना एक नए किस्म का वायरस है, जो जीवित शरीर में ही जीवित रहता है, वरना निर्जीव वस्तु में उसका अस्तित्व कुछ घंटों तक ही सीमित रहता है। यह विषाणु अत्यंत सूक्ष्म होता है, जो सिर्फ इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप से ही देखा जा सकता है। यह एक ऐसा विषाणु है, जो चीन देश के वुहान शहर में पहली बार पशु से मानव शरीर में आया और संक्रमित व्यक्ति से दूसरे व्यक्तियों में तेजी से फैलता गया। ऐसा अनुमान लगाया जा रहा है कि यह विषाणु चमगादड़ से मानव शरीर में आया और फिर संपर्क में आनेवाले व्यक्ति समुदाय में फैलता गया, सभी को संक्रमित करता गया।

जब तक लोग कोरोना विषाणु का पूरा मामला समझ पाते, तब तक यह समुदाय में हजारों लोगों को संक्रमित कर चुका था। अत: इस विषाणु की आक्रमकता को देखते हुए स्वास्थ्य विभाग की तरफ एक एडवाइजरी जारी की जाने लगी कि स्वच्छता पर विशेष ध्यान रखते हुए संक्रमित व्यक्ति से दूर रहें। साथ ही यह भी एडवाइजरी जारी की कि किसी भी व्यक्ति को बुखार, खाँसी, नजला, जुखाम व साँस लेने में तकलीफ होने पर डॉक्टर की सलाह लें और अपने आपको दूसरों से दूर रखें, ताकि दूसरों में इस विषाणु का संक्रमण न हो।

अब ऐसे हालात में न डरकर बीमारी के संक्रमण से बचाव के लिए सावधानियाँ बरतते हुए, कोरोना का रोना न रोकर, गहन अध्ययन और चिंतन करना चाहिए कि क्या कोरोना का कहर हमें कुछ सिखाने के लिए आया है? ऐसे हालात में मेरा मानना है कि 'हाँ! कोरोना हमें कई बातों का ध्यान व कदर करने के लिए जागरूक बनाने आया है।'

पहली बात तो यह लगती है कि कोरोना हमें और हमारे वातावरण को स्वच्छ रखने की सीख देने आया है। खाना खाने के पहले हाथ धोना, घर का बना ताजा भोजन खाना और बाहरी दुनिया में बिना मतलब भ्रमण न कर अपने घर-परिवार में रहकर अपने लोगों के करीब आने की शिक्षा देना चाह रहा है। स्वच्छता का यही मंत्र हमारे राष्ट्रपिता 'महात्मा गांधी' ने भी देशवासियों को दिया था। उनके सिद्धांत के मुताबिक, 'स्वच्छता मनुष्य का एक नैसर्गिक गुण है। जहाँ स्वच्छता है, वहाँ भगवान् का वास होता है। तब ऐसे में हमें हर तरह से स्वच्छ रहना चाहिए, जिससे कि हमारा तन, मन और पर्यावरण भी स्वच्छ रहे'।

'महिलानामा' उपन्यास के लिए पुरस्कृत। विभिन्न विषयों पर लगभग बीस पुस्तकें प्रकाशित, जिनमें 'ह्यूमन राइट्स फॉर चिल्ड्रेन', 'भारत के न्यायाधीश की जीवनी, मानवाधिकार की असीम सरहदें, बारहमासा, तिरंगा तले, नाटक–इच्छामृत्यु व कविता-संग्रह–'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' प्रमुख। 'आधी-आबादी' 'वूमेन अचीवर्स अवार्ड' से पुरस्कृत तथा 'डॉ. महाराज कृष्ण जैन स्मृति सम्मान' से समादृत।

हमें बाजार से घर का सामान खरीदकर लाने के लिए प्लास्टिक की थैलियों का स्वत: त्याग कर कपड़ा, खादी या जूट का थैला उपयोग में लाना चाहिए। इससे हम घर, परिवेश और देश को स्वच्छ रखकर देशप्रेमी कहलाने के भी हकदार बनते हैं। इससे हमारा आत्मबल बढ़ता है, जो सफलता की औषधि है। दूसरी बात यह है कि कोरोना से उन्हीं लोगों की मृत्यु हो रही है, जिनको पहले से कोई गंभीर बीमारी है, या शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता कमजोर है, जिन लोगों के शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता मजबूत है वे कोरोना के संक्रमण से भी कुछ दवाइयाँ लेकर और परहेज करके, कुछ दिनों के बाद कोरोना को मात देकर स्वस्थ हो रहे हैं। तब ऐसी हालात में हमें यह सोचना होगा कि हमेशा पौष्टिक और हलका भोजन करना चाहिए, जिससे हम स्वस्थ रहते हुए शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ा सकें। इससे हमें कोई भी बीमारी जल्दी नहीं लगेगी। हमें भोजन में अनाज के साथ हरी सब्जियाँ, फल और अंकुरित खाद्य भी खाने चाहिए।

तीसरी बात यह भी है कि कोरोना हमें यह भी सिखाने आया है

कि हम अपने स्वार्थ, लालच व अधिक-से-अधिक धन और सामान जुटाने की होड़ में अपने पर्यावरण व प्रकृति का अंधाधुंध दोहन कर उसे नुकसान पहुँचा रहे हैं। इसका खामियाजा अंतत: हमें ही भुगतना पड़ रहा है। आज पेड़ों और वनों की तेजी से कटाई हो रही है, जिससे शहरीकरण और औद्योगीकरण हो रहा है। इस विकास की अंधी दौड़ में हरित क्षेत्र व वन क्षेत्र कम होते जा रहे हैं और उलटे मनुष्य की आबादी बढ़ती जा रही है। इसका दुष्प्रभाव यह हुआ कि हमारे वन्य जीव-जंतु का जीवन खतरे में पड़ गया है और साथ ही पर्यावरण में असंतुलन हो गया है। जल, वायु व मिट्टी प्रदूषित होती जा रही है। वायुमंडल में गैसीय अनुपात बिगड़ने के कारण 'जलवायु परिवर्तन' एक गंभीर खतरा बन गया है।

अत: कोरोना की मार हमें सिखाने आई है कि हम अपनी लगातार बढ़ती आबादी पर लगाम लगाएँ और अपने पर्यावरण व आदतों को सुधारें।

कोरोना वायरस से हमें ज्यादा डरने की जरूरत नहीं है। अगर जरूरत है तो परहेज व सावधानियों के द्वारा उसे रोकथाम करने की। दूसरी बात यह भी है कि इस वायरस द्वारा फैले महामारी को हर दृष्टिकोण से विश्लेषण करने का समय है। सबसे पहले यदि हम आध्यात्मिक विश्लेषण करें तो समझ में आता है कि प्रकृति हमारी देवी है। हमने उनसे मनमानी कर बहुत छेड़छाड़ की है और साथ ही हमने उसे अपने वश में करने की कोशिश की है, जो बिल्कुल गलत है।

यदि हम आर्थिक विश्लेषण करें, तो पाते हैं कि हम मानव अपनी ख्वाहिशों की सीमा अत्यधिक बढ़ा दी है। हम अपने सुविधा व आराम की वस्तुएँ इकट्ठा करने के लिए होड़ लगा दी है। इससे पृथ्वी पर घोर असंतुलन पैदा हो गया है। लगता है कि पृथ्वी माता को पक्षाघात हो गया है। लेकिन क्या हम सोच पा रहे हैं कि अंतत: इसी का परिणाम तो नहीं है कोरोना वायरस! जो हम मानव को ही लील रहा है?

यदि सामाजिक विश्लेषण करें तो ऐसा ज्ञात होता है कि हमारे समाज में भी बड़ा असंतुलन हो रहा है। कोई अत्यधिक धन के कारण परेशानियों व बीमारियों से ग्रसित है, तो कोई धन की कमी के कारण परेशान व चिंतित है। इस प्रकार समाज में अन्याय व अत्याचार हो रहा है।

अत: कोरोना के माध्यम से कोई दिव्यशक्ति हमें यह सीख देने आई है कि क्या पता, इस वायरस के भय में जिंदगी का कोई अद्‌भुत सच छुपा हो। कोरोना वायरस के माध्यम से हमें उस सच को जानकर, भूल सुधारकर हम अपना भविष्य उज्ज्वल बना सकते हैं।

अत: कुछ दिनों के लिए ही सही, बेबस होकर ही सही, भयभीत होकर ही सही, हम अपनी पृथ्वी और पर्यावरण के बारे में सोचें और अपनी केंचुली उतार फेंकें, जो व्यर्थ है, असत्य है, निरुपयोगी है, निष्फल है और अंत में मानवता के खिलाफ है।

कोरोना हमारा केंचुली निकालने है आया,
उसे हमारा मूर्खतापूर्ण व्यवहार नहीं है भाया।

१६७ प्रगति अपार्टमेंट
पश्चिम विहार, नई दिल्ली-११००६३
दूरभाष : ९३१२७१६४११

गजल

दो गजलें

• अश्वघोष

: एक :

जिंदगी की प्यास भी है
मौत का अहसास भी है

वो मुझे आवाज देगा
ये मुझे विश्वास भी है

वो मेरे दिल के अभी तक
दूर भी है, पास भी है

विस्मरण के साथ में ही
स्मरण की आस भी है

अब अँधेरों के दिलों में
ज्योति का आभास भी है

: दो :

जिंदगी से डर गए सपने
नींद में ही मर गए सपने

देखकर बाजार की सूरत
जेब में ही भर गए सपने

आँगनों के बीच में सहसा
हसरतों को धर गए सपने

बहुत खाली थी जगह मुझमें
हर जगह में भर गए सपने

फिर मुझे नीचा दिखाने को
पार मुझको कर गए सपने

७, अलकनंदा एन्क्लेव
जनरल महादेव सिंह रोड,
देहरादून-२४८००१ (उत्तराखंड)
दूरभाष : ९८९७७००२६७

आध्यात्मिक गायक : पंडित जसराज

● अश्विनीकुमार दुबे

रूहानी तबीयत के गायक पंडित जसराज नहीं रहे। उनके दिवंगत होने का समाचार सबसे पहले मैंने फेसबुक पर उसी दिन देखा। सहसा भरोसा नहीं हुआ। इंदौर में पंडितजी के अनन्य शिष्य गौतम काले को मैंने स्मरण किया। उन्होंने भरे गले से कहा, "हाँ, समाचार सही है। गुरुजी अमेरिका में थे। वहीं उन्होंने अंतिम साँस ली।"

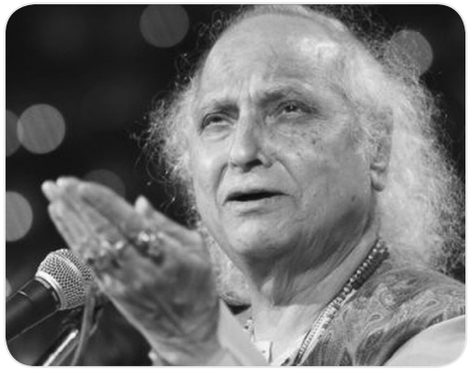

क्षण भर में बहुत सारी स्मृतियाँ मनो-मस्तिष्क में कौंध गईं। पन्ना (म.प्र.) मेरी जन्मस्थली है। सबसे पहले मैंने पंडितजी को वहीं देखा था। इसके पहले वर्षों से मैं उन्हें सुनता आ रहा था। उनके अधिकांश कैसेट मेरे पास उपलब्ध हैं। मैं उनका खासा प्रशंसक हूँ। अत्र-तत्र मित्र मंडली में मैं अकसर उनकी चर्चाएँ किया करता था। पन्ना में उन्हें रू-ब-रू देखने और सुनने का अवसर मिला।

पन्ना में एक प्रसिद्ध मंदिर है, स्वामी प्राणनाथ का। यह श्रीकृष्ण भक्ति परंपरा का एक अद्‌भुत मंदिर है। पंडित जसराज यहाँ आए थे और यहाँ उन्होंने अपना कार्यक्रम प्रस्तुत किया था। वहाँ उनके द्वारा गाया हुआ भक्त रैदास का भजन 'प्रभुजी तुम चंदन हम पानी···' आज भी मेरे कानों में गूँजता है। तब दूरदर्शन न आया था। बड़े कलाकारों को कार्यक्रमों में सुना जा सकता था या उन्हें आकाशवाणी कार्यक्रमों में सुना जा सकता था। हाँ, रिकार्ड और कैसेट घरों में बजाए जाते थे। उस समय उपलब्ध पंडित जी के सारे कैसेट मैंने खरीद रखे थे। सुबह-सुबह उन्हें सुनना एक अद्‌भुत अनुभव हुआ करता है।

इसके बाद कई कार्यक्रमों में मैंने उन्हें देखा, सुना और अभिभूत हुआ। अब वे इस दुनिया में नहीं हैं तो उनकी कितनी बातें याद हो आती हैं। वे भगवान श्रीकृष्ण के अनन्य उपासक थे। अकसर कहा करते—"मुझमें मैं नहीं, कोई और गाता है।"

पंडितजी हवेली संगीत के पुनर्स्थापक माने जाते हैं। वल्लभ संप्रदाय में भाव की पूजा है, अर्थात् यह माना जाता है कि मंदिर में ठाकुरजी स-शरीर उपस्थित हैं। जब श्रीकृष्ण स-शरीर हैं, तब उनकी सेवा को ही पूजा कहा गया है। इसमें प्रात: जागरण से लेकर रात्रि पोढावनी तक की सारी लीलाएँ संपन्न की जाती हैं। आज भी वल्लभ संप्रदाय, पुष्टि मार्ग एवं राधा-वल्लभ संप्रदाय में इसी प्रकार सेवा-पूजा होती आ रही है। पाँच सौ वर्ष पूर्व भक्त सूरदास इन लीला गीतों का वृंदावन में गायन करते थे। यह गायन शैली हवेली सगीत के नाम से जानी जाती है। अष्टछाप के भक्त कवियों और गायकों ने इसे आगे बढ़ाया। इस परंपरा के अप्रतिम गायक हैं—पंडित जसराज।

वल्लभ संप्रदाय में अष्टपहर की सेवा-पूजा है। इस प्रकार हवेली संगीत में अष्टपहर का लीला गायन है। पंडित जसराज का एक महत्त्वपूर्ण कैसेट मेरे पास है, जिसमें उन्होंने पहर के अनुसार रागों का चयन कर लीला गीत गाए हैं। यथा प्रात: माँ यशोदा द्वारा लाल को जगाने से दिन की शुरुआत है—'पोढ़े श्याम जननि गुन गावत···', 'जागो मेरे लाल और सब बालक घर-घर से कैसे बनि आवत···' फिर लाल को कुल्ला कराना, नहलाना-धुलाना है। गीत है—'शीतल जल तातो कर राखत·· अग-अगोंध पोंछ पहनावत·· अब बाल भोग की लीला है। हर मंदिर में भगवान को भोग लगाया जाता है। इस अवसर पर भोग-गीत गाने की प्रथा है। पंडित जसराज ने उस कैसेट में जो भोग गीत गाया है, उतना प्रभावशाली और मधुर भोग गीत मुझे दूसरा याद नहीं है। गीत है—'जेवत कान्ह नंद जू की कन्हियाँ। कछुक खात, कछु धरनि गिरावत यह सुख कहत न बनिया···।' इस गीत को सुनते हुए आपको लगता है कि आप भी वहीं बैठे हुए हैं, जहाँ कान्हा नंद जू की गोद में बैठकर कलेवा कर रहे हैं। सूरदास को भी ऐसा ही लगा था, यह पद गाते हुए। अंत में उन्होंने कह ही दिया—'खा-पीकर जब अचवन कीन्हों माँगत सूर जुठनियाँ···।' कलेवा करके श्याम मधुवन में ग्वाल-बालों संग गऊएँ चराने जा रहे हैं। जंगल में खेलते हुए तरह-तरह की लीलाएँ हैं··· 'खेलन में को काको गुसइयाँ'··· गोधूलि की वेला में गाँव वापस लौट रहे हैं कन्हैया। माथे पर पसीना और धूल-कण चमक रहे हैं। इसका मनोहारी वर्णन है। फिर रात्रि का भोग, आरती, तत्पश्चात् पोढावनी अर्थात् माँ यशोदा उन्हें लोरी गाकर सुला रही हैं। यह पूरा सेवा-पूजा का क्रम है, जिसे पंडित जसराज ने अत्यंत भाव-विभोर होकर गाया है।

कृष्ण का पूरा जीवन अद्‌भुत लीलाओं से भरा हुआ है। जीवन के सारे आयाम उनमें एक साथ फलित हैं। वे रसिक शिरोमणि हैं। मधुर बाँसुरी बजाते हैं। गोपी वल्लभ हैं। राधिका रमण हैं। नृत्य शिरोमणि हैं। काल के

भाल पर नृत्य करते हैं। रास रचाते हैं। वहीं वियोग शृंगार भी अपार है। उद्धव प्रसंग विप्रलंभ की पराकाष्ठा है। फिर गीता ज्ञान है और महाभारत में कुशल राजनीतिज्ञ भी हैं श्रीकृष्ण। कवियों, गायकों, नृत्यकारों, शिल्पकारों, चित्रकारों आदि को सर्वाधिक प्रेरणा श्रीकृष्ण की लीलाओं से मिलती है। पंडित जसराज तो श्रीकृष्ण लीला के, हवेली संगीत परंपरा के अद्वितीय गायक हैं। जहाँ एक ओर वे कृष्ण वंदना करते हुए नहीं अघाते वहीं राधा की वंदना करने में भी वे पीछे नहीं हैं—'राधा जू मोपे आज ढरो', 'निज चाकर-चाकर की सेवा मोहे प्रदान करो···' और 'लाल गोपाल गुलाल हमारी आखिन में झन डारो जू···' आदि।

पंडित जसराज मेवाती घराने के प्रसिद्ध गायक माने जाते हैं। इसके अलावा ग्वालियर, पटियाला और इंदौर घराने की झलक उनके गायन में स्पष्ट दिखाई देती है। मुख्य शिक्षा तो हर कलाकार को अपने घर-परिवार से मिलती है। उनके पिता पंडित मोतीराम कश्मीर राजघराने के प्रसिद्ध गायक रहे हैं। आपने पहले तबले की, फिर गायन की शिक्षा अपने भाइयों से प्राप्त की। पंडितजी ने एक साक्षात्कार में अपने परिवार के विषय में विस्तार से बताया है। उनके पिता मोतीराम एवं चाचा जोतीराम को उनके मामा नत्थूलाल ने सात वर्षों तक गायन की शिक्षा दी। फिर वे गुजर गए। शिक्षा अधूरी रह गई। गुरु शरीर में न हों, अशरीरी हो जाएँ, तब भी उन्हें अपने शिष्य की फिक्र रहती है। पंडित जसराज भाव-विभोर होकर बताया था कि उनके पिता और चाचा के मामा पंडित नत्थूलालजी ने उन्हें आगे की शिक्षा अपने सूक्ष्म शरीर से प्रदान की। कभी सपने में। कभी पिता की जिह्वा पर विराज कर। यह सिलसिला पंडित जसराज और उनके पिता मोतीरामजी के बीच भी चलता रहा। जसराजजी बताते हैं कि उनके पिता नियमित सपने में आते थे और उन्हें कान्हड़े के अलग-अलग प्रकार सिखाते थे। एच.एम.वी. का एक रिकॉर्ड, जिसमें जसराजजी ने नौ प्रकार के कान्हड़े गाए हैं, ये उन्होंने अपने पिता से सपने में ही सीखे। खासकर गुजी कान्हड़ा उनके पिता ने उन्हें सपने में ही आकर विस्तार से सिखाया था, ऐसा पंडितजी ने स्वयं एक साक्षात्कार में गुंदेचा बंधुओं को बताया था।

पंडितजी अपनी पूजा 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' से प्रारंभ करते थे और अपने आराध्य के श्रीचरणों में समर्पित होकर गाते हैं—'भरोसो दृढ़ इन चरनन केरो और उपाय नहीं या कलि में जासो होत निबेरो।' पंडित हरिप्रसाद चौरसिया के साथ उनकी जुगलबंदी 'वृंदावन' में राग केदार, राग अहीर भैरव और राग मिश्र मीलू में कृष्ण उपासना के भजन सुनते ही श्रोता किसी और लोक में पहुँच जाता है।

अहमदाबाद के पास एक जगह है—सानंद। यहाँ के महाराज शास्त्रीय संगीत के खासे जानकार और गुणी गायकों की कद्र करने वाले व्यक्ति थे। पंडितजी अपने भाइयों के साथ लगभग पाँच साल उनके यहाँ रहे। राज दरबार में संगीत सभाओं के अलावा संगीत चर्चाएँ भी हुआ करती थीं। जसराजजी को ऐसी चर्चाओं में कोई रुचि न थी। एक दिन महाराज ने उन्हें समझाया कि अभ्यास के अलावा बहुत कुछ गुणीजनों के साथ बैठकर, उनसे चर्चा करते हुए भी सीखा जा सकता है। इसके पश्चात् जसराज संगीत चर्चाओं में बैठने लगे। दरबारी की गंधार कैसी होती है? उसमें झूला कहाँ चलता है? मियाँ की मल्हार और दरबारी कान्हड़ा

सुपरिचित व्यंग्य-लेखक एवं उपन्यासकार। 'घूँघट के पट खोल', 'शहर बंद है', 'अटैची संस्कृति', 'अपने-अपने लोकतंत्र', 'फ्रेम से बड़ी तसवीर', 'कदंब का पेड़' सहित दस व्यंग्य-संग्रह, 'जाने-अनजाने दुःख' (उपन्यास), 'एक और प्रेमकथा' (कहानी-संग्रह)। उत्कृष्ट लेखन के लिए भारतेंदु पुरस्कार, अखिल भारतीय अंबिका प्रसाद दिव्य पुरस्कार प्राप्त।

की विशेषताएँ क्या हैं? ऐसी बहुत-सी बातें उन्होंने संगीत चर्चाओं में बैठते हुए ही जानी और उन्हें आत्मसात किया। पंडित जसराज ने शुरू में तबला सीखा और उसमें वे पूरी तरह पारंगत हुए। एक कार्यक्रम में उन्होंने सुप्रसिद्ध सितारवादक पंडित रविशंकर के साथ तबले पर संगत की थी। बाद में उनकी गायन में गहरी दिलचस्पी हुई और वे प्रसिद्ध गायक बने। उनका पहला कार्यक्रम सन् 1952 में महाराजा त्रिभुवन वीर विक्रम सिंह के समक्ष नेपाल में हुआ। इसके पश्चात् उनकी ख्याति फैलती चली गई। स्वामी हरिदास संगीत सम्मेलन और सदारंग संगीत सम्मेलन से होते हुए देश के सभी महत्त्वपूर्ण संगीत सम्मेलनों में उन्होंने अपना गायन प्रस्तुत किया। तो देश की हदें पार करके विदेशों में भी उनके स्वर गरजाने लगे थे। अमेरिका और ब्रिटेन सहित कई देशों में उनकी संगीत सभाएँ समय-समय पर आयोजित की जाती रहीं।

उन्हें संगीत नाटक अकादेमी का सम्मान, पद्मश्री और पद्म विभूषण का सम्मान भारत सरकार द्वारा प्रदान किया गया। इसके अलावा कई राष्ट्रीय और प्रादेशिक पुरस्कारों से समय-समय पर सम्मानित किया गया।

उनका अभी कुछ वर्षों पूर्व उज्जैन सिंहस्थ कुंभ मेले में उन्हें अंतिम बार सुनने का मौका मिला था। वैसे तो पंडित जसराज ने कृष्ण भक्ति परंपरा के ज्यादा गीत गाए हैं। अष्टछाप के कवियों के भजन गाने में उनका कोई सानी नहीं। वहीं उन्होंने माँ शक्तिरूपा की भी आराधना की है। अडाना में उनकी बंदिश 'माता कालिका' अद्वितीय है। माँ दुर्गा की स्तुति में उनके गाए कई भजन बहुत प्रसिद्ध हैं।

पंडितजी अपनी पूजा 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' से प्रारंभ करते थे और अपने आराध्य के श्रीचरणों में समर्पित होकर गाते हैं—'भरोसो दृढ़ इन चरनन केरो और उपाय नहीं या कलि में जासो होत निबेरो।' पंडित हरिप्रसाद चौरसिया के साथ उनकी जुगलबंदी 'वृंदावन' में राग केदार, राग अहीर भैरव और राग मिश्र मीलू में कृष्ण उपासना के भजन सुनते ही श्रोता किसी और लोक में पहुँच जाता है।

जैसा कि मैंने ऊपर कहा कि हवेली संगीत को पुनर्स्थापित करने

में पंडितजी का महत्त्वपूर्ण योगदान है। वल्लभ संप्रदाय के मंदिर देश भर में हैं। अब विदेशों में भी निर्मित हो गए हैं। इन मंदिरों की पूजा-पद्धति संगीतमय है। यहाँ सुबह से लेकर देर रात्रि तक लीला गायन द्वारा ही ठाकुरजी की पूजा की जाती है। गुजरात प्रदेश की महान् विभूति स्वामी प्राणनाथ ने देशभर में कृष्ण भक्ति का प्रचार-प्रसार किया। इस परंपरा के प्रणामी मंदिरों में भी इसी तरह गीत-संगीतमय पूजा-पाठ होता है। कृष्ण भक्ति की इस पूरी परंपरा को पंडित जसराज ने आत्मसात किया है। कृष्ण भक्ति से जुड़े हुए बहुत त्योहार हैं; कृष्ण जन्माष्टमी, राधा अष्टमी, शरद पूर्णिमा, वसंत पंचमी, होलिकोत्सव और गोवर्धन पूजा के अलावा भी कई पर्व हैं, कृष्णलीलाओं को याद करने के लिए। इन सभी पर केंद्रित पद पंडितजी ने अपनी सुमुधर वाणी में गाए हैं। इन पदों की रिकॉर्डिंग आज भी देश भर के कृष्ण मंदिरों में सुनी जा सकती है।

बातचीत करते हुए वे बहुत भाव-विभोर हो जाते थे। उनके आलोचक भी कम नहीं थे। वे कहा करते, कोई मुझे आकर बताए कि मेरे गायन में यहाँ ये कमी है तो मैं उसे जरूर सुधारूँगा। और कई मौकों पर उन्होंने गुणीजनों की सलाह मानकर अपनी गायकी में सुधार भी किया है। इंटरनेशनल एस्ट्रोनोमिकल यूनियन ने सौरमंडल में २००६ में खोजे गए एक ग्रह का नाम उनके नाम पर रखा है।

पंडित जसराज अब अशरीरी हैं, परंतु हैं। हम उन्हें हृदय से बुलाएँगे तो वे हमें सिखाने जरूर आएँगे, ऐसा उनका वादा है। उन्हें याद करते हुए सादर नमन।

३७६-बी, आर-सेक्टर,
महालक्ष्मी नगर, इंदौर-१०
दूरभाष : ९४२५१६७००३

लघुकथा

वृद्धवस्था का बोझ

● गोपालकृष्ण शर्मा 'मृदुल'

मेरे पड़ोसी बिहारीलालजी मेरे साथ ही सेवानिवृत्त हुए थे। उनका पुत्र ऑस्ट्रेलिया में नौकरी कर रहा है। उनकी पत्नी की मृत्यु भी चार-पाँच वर्ष पूर्व हो गई थी। वृद्धावस्था और एकाककीपन से घबराकर वह विगत एक वर्ष से अपने बेटी-दामाद के साथ रहने लगे हैं। उनके बेटी-दामाद इसी शहर में सरकारी नौकरी कर रहे हैं।

उनकी बेटी सुषमा और मेरी बेटी अनुपमा पक्की सहेलियाँ हैं। सुषमा जब कभी अपने पिता के बंद घर को देखने आती है, तो मेरे घर यह जानकारी करने अवश्य आती है कि अनुपमा के क्या समाचार हैं और वह भविष्य में कब मायके आएगी। और जब कभी अनुपमा हमारे घर आती है तो सुषमा उससे मिलने अवश्य आती है।

अभी परसों सुषमा अपने पिता के बंद घर को देखने आई तो लौअते समय मेरे घर भी आई। मेरी बहू के बहुत आग्रह पर वह चाय पीने के लिए राजी हो गई।

चाय पीते हुए मेरी बहू ने सुषमा से पूछा, ''दीदी! अंकलजी के क्या हाल हैं?''

''उनके हाल तो बिल्कुल ठीक हैं, बस! वे हम लोगों को ही बेहाल किए हुए हुए हैं।'' सुषमा हँसते हुए बोली।

कैसे? "बहू" ने आश्चर्य से पूछा।

"अरे! कैसे क्या? सुबह चार बजे से ही खटर-पटर चालू कर देते हैं। ऊपर से सीताराम-राधेश्याम का उच्च स्वर में पाठ शुरू कर देते हैं। छह बजे तक नहा-धोकर पूजा-पाठ में लग जाते हैं और सात बजे से पूर्व ही पूजा समाप्त कर नाश्ते के लिए डायनिंग टेबल पर आकर बैठ जाते हैं, जैसे इन्हें तत्काल नौकरी पर जाना है। एक तो सुबह-सुबह हम लोगों की नींद खराब कर देते हैं, फिर हम बच्चों का टिफिन तैयार करें, उन्हें स्कूल भेजें या अपने दोनों लोगों के लिए टिफिन तैयार करें या पहले इनके लिए नाश्ता तैयार करें। खैर, किसी तरह भाग-दौड़ कर सारा काम निपटाते हैं।

"पापाजी नाश्ता करके अखबार पढ़ते हैं, मगर तभी उन्हें नींद आने लगती है और वह हमारी दिनचर्या को अव्यवस्थित कर खर्राटे भरने लगते हैं।'' सुषमा ने हँसते हुए शिकायतों का पिटारा खोला—

"ऊपर से यह नहीं खाएँगे, वह नहीं खाएँगे नुकसान करेगा। हर चीज में मीन-मेख। अब सबके लिए अलग-अलग खाना तो बन नहीं सकता। अरे भाई! सबकुछ खाओ-पियो। खुद भी मौज से जियो और हमें भी जीने दो। अब जो होना है, वह तो एक-न-एक दिन होकर ही रहेगा।'' सुषमा का असंतोष उसके शब्दों से फूट रहा था।

मैं चुपचाप अपने कमरे में लेटा उन दोनों की बातें सुन रहा था। मुझे लगा कि सुषमा जो कुछ भी बिहारीलालजी के लिए कह रही है, वह सब तो मेरे ऊपर भी शत प्रतिशत सही उतरता है, भले ही मेरी बहू घर की मान-मर्यादा का ध्यान रखते हुए अपने मुँह से यह सब कह नहीं रही है।

मैंने मन-ही-मन यह निर्णय लिया कि मैं अपना शेष जीवन परिजनों की सुविधा का ध्यान रखते हुए ही बिताऊँगा तथा अपनी वृद्धावस्था का बोझ अपने परिजनों पर नहीं डालूँगा।

५६९ क/१०८/२, स्नेह नगर
आलमबाग, लखनऊ-२२६००५ (उ.प्र.)
दूरभाष : ८३१८६७४१८८

उत्तर-कोरोना और नूतन अवसरों का उभार

● विशेष गुप्ता

कोविड-१९ महामारी का देश में जो विस्तार हुआ है, उससे जुड़े जीवन संघर्ष का यहाँ एक बड़ा इतिहास लिखा जा रहा है। वर्तमान की यह पीढ़ी इस महामारी से बदलती दुनिया के इतिहास को अपनी खुली आँखों से देख भी रही है। यह सच है कि इस पीढ़ी ने ऐसी संपूर्ण बंदी और शारीरिक दूरी के माध्यम से कोरोना के संक्रमण से बचाव का अनुभव पहली बार ही किया है। लेकिन इस युवा पीढ़ी ने कोरोना की इस विषम परिस्थिति से सामंजस्य करते हुए जिस धैर्य और सहनशीलता का परिचय दिया है, वह प्रशंसा के योग्य है। तकरीबन तीन माह के लॉकडाउन और अब अनलॉक की प्रक्रिया के बाद लगने लगा है कि कोरोना का उत्तर-कालखंड देश और दुनिया में बड़े बदलावों की एक पूरी कड़ी लेकर आ रहा है। इस समय दुनिया की तीस फीसदी और भारत की सवा अरब आबादी पूर्ण बंदी में रही है। गौरतलब है कि लोगों से शारीरिक दूरी बनाकर कोरोना को मात देने की तरफ बढ़ने में उन सबकी बड़ी भूमिका रही है, जिन्होंने बंदी में रहकर इस संपूर्ण बंदी की विषम परिस्थिति को सहा है। इसमें कोई संदेह नहीं कि लोगों ने घरों पर रहकर काम के साथ-साथ अनेक अवसरों और चुनौतियों से रूबरू होकर भविष्य के बदलाव की आहट को चुपचाप सुना है।

लॉकडाउन के बीच अपने-अपने घरों में कैद लोगों की निगाहें देश-दुनिया की खबर के साथ-साथ टी.वी. चैनलों और कंप्यूटर व लैपटॉप के डिजिटल माउस पर आकर ठहर गई थीं। शिक्षण संस्थाएँ भले ही बंद रही हों, मगर इस बीच शिक्षा-शिक्षण की हानि न हों, इसलिए सरकार के साथ-साथ अधिकांश शिक्षण संस्थाओं ने भी अपनी ऑनलाइन कक्षाएँ शुरू कर दी थीं, जो अभी तक जारी हैं। इस ऑनलाइन शिक्षण में समाज के कमजोर व गरीब छात्रों के लिए कुछ मोबाइल और इंटरनेट से जुड़ी दुश्वारियाँ जरूर पेश आईं और अभी भी आ रही हैं, मगर उनका निदान भी लगातार जारी है। यहाँ यह भी गौरतलब है कि इस कोरोना के कालखंड में डिजिटल वर्किंग और लर्निंग का जो दौर शुरू हो रहा है, उससे निकट भविष्य के दैनिक कामकाज में निश्चित ही डिजिटल तकनीक में प्रवेश और तेज होगा। इसी संदर्भ में आपको ध्यान होगा कि १९९० के दशक में देश में उदार अर्थव्यवस्था के वैश्वीकरण और संपूर्ण दुनिया के ग्लोबल विलेज बन जाने की चर्चा बहुत तेजी से उभरी थी। तब अनेक प्रकार की चिंताएँ भी उभरकर सामने आई थीं और अनेक प्रकार के संदेह भी अभिव्यक्त किए गए थे। परंतु कोविड-१९ के वैश्विक स्वरूप और इस संक्रमण के गाँवों की देहरी तक पहुँच जाने से तीन दशकों के बाद अब लगता है, वाकई यह दुनिया पलक झपकते ही विश्व का एक छोटा सा हिस्सा बन गई है।

वर्तमान में उत्तर प्रदेश के बाल अधिकार संरक्षण आयोग के अध्यक्ष। तीन हजार से अधिक अकादमिक लेख देश के अनेक राष्ट्रीय समाचार-पत्रों में प्रकाशित हैं। १५ शोध प्रबंधों का निर्देशन करने के साथ दो दर्जन से अधिक शोधपत्र राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय जर्नल्स में प्रकाशित।

कोरोना महामारी के वैश्विक आकार ग्रहण करने के बाद, पाँच दशक पहले १९६४ में कनाडा के प्रसिद्ध दार्शनिक मार्शल मैकलुहान के कहे हुए शब्द आज बहुत याद आते हैं कि संस्कृति की सीमाएँ समाप्त हो रही हैं और पूरी दुनिया अब एक ग्लोबल विलेज बन रही है। निस्संदेह इस कोरोना संक्रमण ने यह अहसास अच्छी तरह से करा दिया है। ढाई दशक पहले १९९७ में ब्रिटेन के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री फ्रैंसिस कैर्नकोर्स ने अपनी पुस्तक 'दि डेथ ऑफ डिस्टेंस' में कहा था कि दुनिया में अब दूरियों का अंत हो गया है। इन विद्वानों को शायद उस समय यह आभास भी नहीं रहा होगा कि दुनिया में किसी समय ऐसी कोई महामारी भी आएगी, जो वैश्विक दुनिया के लोगों को घरों में कैद कर देगी। आज कोविड-१९ ने जिस तरह इस वायरस के संक्रमण का वैश्वीकरण किया है, उससे आनेवाले समय में शर्तिया दुनिया अब पहले जैसी नहीं रह जाएगी। कड़वा सच यह है कि वैश्विक स्तर पर जिस तरह अनेक प्रकार के जैवकीय शोध हो रहे हैं, उतनी ही तेजी से आज पूरी दुनिया की मानवता पर खतरे के बादल मँडरा रहे हैं। यही कारण है कि ऐसी महामारी के तेजी से पलटवार करने की संभावनाएँ भी प्रबल हो गई हैं; बल्कि यहाँ इस सच को कहने में कोई हिचक नहीं होनी चाहिए कि वैश्विक स्तर पर जिस तरह दुनिया के देशों में हथियारों की होड़ और सामरिक प्रतिस्पर्धा बढ़ रही है, उससे

विश्व के देशों में प्रत्यक्ष युद्ध की संभावनाएँ क्षीण हो रही हैं। दुनिया के विकसित देश यह सच अच्छी तरह जान चुके हैं कि प्रत्यक्ष युद्ध में जो बहुआयामी नुकसान देश को होता है, उसकी भरपाई करने में दशकों लग जाते हैं। ऊपर से हजारों सैनिक उस युद्ध की भेंट चढ़ जाते हैं, वह मानव संसाधन का नुकसान अलग है। इसलिए लगता है कि विश्व के विभिन्न देशों के बीच युद्ध अब इसी प्रकार के हालिया शीत युद्धों के रूप में ही सामने आएँगे।

दरअसल कोरोना के संक्रमण से जुड़ी इस महामारी को शीत युद्ध का ही रूप कहना समीचीन होगा। कोरोना के इस संक्रमण से जुड़े इसी वजह से वैश्विक दुनिया के लोगों के साथ-साथ अब सरकारों को भी ऐसी आकस्मिक आपदा से निपटने के मानवीय, तकनीकी और चिकित्सीय प्रबंध पूर्व में ही करने होंगे। यहाँ यह एक विचारणीय प्रश्न है कि चीन के वुहान से चली इस बीमारी को चार हजार किलोमीटर भारत पहुँचने में तीन माह का समय लगा, परंतु चीन के आठ सौ किलोमीटर तक के शहर बिल्कुल सुरक्षित रहे हैं? लेकिन हमारे देश में इसके आते ही कोहराम मच गया। इसके संक्रमण से देश का पूरा जीवन अवरुद्ध हो गया। लोग घरों में कैद होने को मजबूर हो गए। देश-दुनिया की अर्थव्यवस्था में भारी सहयोग देनेवाले करोड़ों श्रमिक अपने देश में बाहरी बन गए। तमाम लोगों के सामने रोजी-रोटी का संकट खड़ा हो गया। तमाम लोगों की नौकरी छूट गई। अनेक लोगों को जान से हाथ धोना पड़ा। लोगों के कारोबार ठप्प हो गए। संपूर्ण शिक्षा व्यवस्था की रीढ़ टूट गई। राजनीति के साथ संपूर्ण विधिक व्यवस्था तक अवरुद्ध होकर रह गई। लेकिन इतना जरूर रहा कि देश में लोकतांत्रिक व्यवस्था में पूरा भरोसा और अपने नेतृत्व पर अटूट विश्वास के चलते पूरा देश लॉकडाउन में रहने को तैयार हो गया। देश को चाहे कितनी भी परेशानी उठानी पड़ी हो, बच्चों से लेकर वृद्धजनों और महिलाओं तक ने कोरोना की विषम परिस्थितियों से पूरा समायोजन किया। भारतीय मानस की एकजुटता की यह संस्कृति आत्मिक रूप से प्रशंसनीय रही है। कहना न होगा कि भारत की इस फिजिकल डिस्टेंसिंग के संरक्षण के साथ लॉकडाउन से जुड़ी पद्धति की पूरी दुनिया में काफी प्रशंसा हुई है। दूसरी ओर अमेरिका, इटली, स्पेन और फ्रांस जैसे देशों की अपनी स्वच्छंद आजादी का एकल जीवन और खुद के विकसित होने का दंभ उन्हें कोरोना का भारी संक्रमण झेलने को मजबूर कर रहा है।

प्रकृति सापेक्ष स्वास्थ्य और जीवन के महत्त्व से जुड़ी बात, जो देश की आजादी के सात दशक बीत जाने के बाद देश की शिक्षा नहीं समझा पाई, उसको कोरोना के संक्रमण ने तीन माह में ही समझा दिया। यही कोरोना की चुनौती से निकला एक बहुत बड़ा अवसर रहा है। कोरोना के बाद निश्चित ही इन सभी अवयवों के संरक्षण की चुनौती भी देश के साथ-साथ हम सभी के सामने भी रहेगी। कोरोना के संक्रमण के बाद जब हम सामान्य जिंदगी जीने की ओर बढ़ेंगे, तब हमें मानव और प्रकृति के बीच पैदा हुए इन दोस्ताना संबंधों के सम्मान की रक्षा भी करनी होगी।

जैसे संकेत मिल रहे हैं, उससे लगता है कि उत्तर कोरोना में आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक और राजनीतिक जगत् के साथ रोजमर्रा की जिंदगी में भी तेजी से तकनीकी बदलाव आएगा। मसलन देश की अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाने के लिए तेज और सख्त निर्णय लेने होंगे। दूसरे देश की शिक्षा व्यवस्था को पुन: संचालित करने के लिए ऑनलाइन शिक्षा-पद्धति का विस्तार करना होगा। इसका असर हम सभी को परिलक्षित भी होने लगा है। इसके अलावा वर्क फ्रॉम होम, मसलन संक्रमण के चलते अब घर पर ही रहकर अपने काम को अंजाम देने की संस्कृति का तीव्र विस्तार ही हमारा सबसे अच्छा बचाव का रास्ता होगा। रोजाना की जिंदगी में भीड़भाड़ से बचने के उपायों के साथ में स्वच्छता को जिंदगी का हिस्सा हमें बनाना ही पड़ेगा। स्कूल और कॉलेजों में भी प्रत्यक्ष कक्षा की पढ़ाई में भी बदलाव करना ही होगा। उदाहरण के तौर पर, शिक्षा की बात करें तो इस क्षेत्र में तो केंद्रीय मानव संसाधन मंत्री रमेश पोखरियाल ने लॉकडाउन की चुनौती को शैक्षिक अवसरों में बदलने के प्रयास तेज कर भी दिए हैं। उन्होंने शिक्षा के डिजिटल तलों तक छात्रों की पहुँच बढ़ाने के लिए इ-लर्निंग प्लेटफॉर्म्स और डिजिटल लाइब्रेरीज तथा एजुकेशनल चैनल्स को तैयार किया है। उनका कहना है कि २३ मार्च के बाद मंत्रालय के इ-लर्निंग प्लेटफॉर्म्स तक डेढ़ करोड़ से भी अधिक छात्र अपनी पहुँच बना चुके हैं। इसी बीच राष्ट्रीय ऑनलाइन शिक्षा मंच 'स्वयम्' छात्रों की पहुँच में पाँच गुना से अधिक की वृद्धि हुई है तथा ढाई लाख से अधिक बार इसका प्रयोग किया जा चुका है।

मंत्रालय का कहना है कि इस समय 'स्वयम्' मंच पर ५७४ पाठ्यक्रम और २६ लाख छात्र नामांकित हैं। इसके अलावा मंत्रालय के द्वारा तैयार किए गए ऑडियो-वीडियो लेक्चर और वर्चुअल कक्षाएँ छात्रों व शिक्षकों के लिए काफी उपयोगी सिद्ध हो रही हैं। शिक्षा के इस वर्चुअल मॉडल की शुरुआत के साथ ही लाखों लोगों के लिए वर्क फ्रॉम होम में अब घर ही दफ्तर बन गया है। वैश्विक बाजार के स्वाद को दरकिनार करके घर की ही रसोई के बने भोजन ने एक बार फिर से आहार, औषधि और स्वदेशी क्लीनिक का सीधा परिचय करा दिया है। साथ-साथ खाने और आत्मसंयम की संस्कृति के विस्तार से पारिवारिक जीवन पहले की तुलना में और सुदृढ़ हुआ है। साथ ही इस लॉकडाउन में अभ्यास करते-करते दैनिक जीवन में स्वच्छता का पुनरावृत्त विकास हुआ है। केवल इतना ही नहीं, ऐसे समय में हमें अपने पास-पड़ोस को जानने व समझने का मौका भी मिला है। लोगों से पारस्परिक संवाद की संस्कृति विकसित हुई है। आँकड़े बताते हैं कि इस लॉकडाउन के कालखंड में आत्महत्या, सड़क दुर्घटना, हत्या और शारीरिक व्याधियों के मामले घटे हैं। नदियाँ साफ हो गई हैं। पर्यावरण प्रदूषण भी तुलनात्मक रूप से घटा है। प्रकृति

सापेक्ष स्वास्थ्य और जीवन के महत्त्व से जुड़ी बात, जो देश की आजादी के सात दशक बीत जाने के बाद देश की शिक्षा नहीं समझा पाई, उसको कोरोना के संक्रमण ने तीन माह में ही समझा दिया। यही कोरोना की चुनौती से निकला एक बहुत बड़ा अवसर रहा है। कोरोना के बाद निश्चित ही इन सभी अवयवों के संरक्षण की चुनौती भी देश के साथ-साथ हम सभी के सामने भी रहेगी। कोरोना के संक्रमण के बाद जब हम सामान्य जिंदगी जीने की ओर बढ़ेंगे, तब हमें मानव और प्रकृति के बीच पैदा हुए इन दोस्ताना संबंधों के सम्मान की रक्षा भी करनी होगी।

पिछले दिनों कोविड-१९ की प्रकृति और इससे जुड़ी वैश्विक जीवन-शैली को देखकर विश्व की कई संस्थाओं ने अपने सर्वेक्षण और शोध के आधार पर भारत को भी आगाह किया है। उन्होंने बताया है कि यहाँ इस महामारी को दोबारा फैलने से बचाने के लिए अभी एक-दो साल बहुत सावधानी रखनी होगी। यदि ऐसा होता है तो हम सभी को सामाजिक, शैक्षिक, कारोबारी, सांस्थानिक व कार्यालयी जीवन-पद्धति में बदलाव लाना लाजिमी होगा। आनेवाले समय में भले ही लॉकडाउन न हो, लेकिन फिर भी रोजाना की जिंदगी में शारीरिक दूरी बनाकर चलना ही होगा। समूह और झुंड अथवा भीड़ से बचाव, बाहर निकलने पर मास्क का उपयोग, बार-बार हाथ स्वच्छ करने की रीति-नीति, घरों और कार्यालयों में सैनिटाइजेशन, क्लब संस्कृति से बचाव, विवाह समारोह की सीमितता जैसे अनेक दैनंदिन जीवन को सीमाओं में बाँधना होगा। शिक्षा के क्षेत्र में इ-लर्निंग की शुरुआत हुई तो है, लेकिन वहाँ भी डिजिटल सुविधा को दीनदयाल उपाध्यायजी के 'अंत्योदय' के आधार पर विकसित करना होगा। उसकी पहुँच और डिजिटल शिक्षण-प्रशिक्षण, परीक्षा और मूल्यांकन की पद्धति का रूपांतरण भी करना होगा। इसी के साथ-साथ शिक्षकों को भी इस नई डिजिटल दुनिया के साथ खुद को भी नवाचारी बनाते हुए आगे आना होगा। कुछ दिन पहले प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदीजी ने भी सोशल मीडिया साइट पर युवाओं से संवाद करते समय कोरोना वायरस संक्रमण से उत्पन्न लोगों को अब अपनी जीवन-शैली और दिनचर्या के साथ-साथ डिजिटल कार्य संस्कृति अपनाने पर जोर दिया था। उनका कहना था कि लॉकडाउन में घर ने दफ्तर का और इंटरनेट ने मीटिंग रूम का स्थान ले लिया है। इसलिए ऐसे कोरोना काल के कठिन समय में हमें इससे केवल तालमेल बैठाने की तुलना में इस महामारी के बाद के दौर के लिए आगे आने को तैयार रहना चाहिए। उनका साफ संकेत था कि इस नए माहौल में ढल रहे लोगों को अपने तौर-तरीकों और कार्य-संस्कृति को नए सिरे से परिभाषित करना चाहिए। इसके लिए उन्होंने इस नए कार्य परिवेश के लिए अनुकूलता, कार्यदक्षता, समावेशी माहौल, अवसर और सार्वभैमिकता के आधार पर चलने पर जोर दिया था।

अब इतना जरूर है कि कोरोना वायरस संक्रमण से बाहर आने के बाद लोगों को अब अपनी जीवन-शैली और कार्य-संस्कृति को नए सिरे से ढालना होगा। दरअसल उत्तर कोरोना काल में हमारा एक नए जीवन दर्शन से परिचय होगा। बदलाव की इस प्रक्रिया में घरेलू जीवन-शैली, खानपान और रहन-सहन और सामाजिक संबंधों को निभाने में जहाँ हमें सनातन संस्कृति के परंपरागत मूल्यों और व्यवहार-शैली से समायोजन करना होगा, वहीं दूसरी ओर कामकाजी क्षेत्र में डिजिटल दुनिया से सामंजस्य भी बैठाना होगा। उत्तर कोरोना कालखंड में बदलाव की आहट बहुत तेज हो गई है। अब हमें डिजिटल दुनिया की ताकत और उससे संघर्ष करने के तौर-तरीके और उनके संदर्भों को समझना होगा। इसका सीधा सा अर्थ यह है कि उत्तर कोरोना के कालखंड में डिजिटल दुनिया के साथ जुड़नेवाले लोगों की ताकत और प्रगति की रफ्तार इस तकनीक से दूर रहनेवाले लोगों के मुकाबले बहुत अधिक होगी।

ध्यान रहे कि कोरोना के बाद के जीवन को एक नए ढंग से शुरू करने का नया कालखंड शुरू हो चुका है। इसके लिए हम खुद को जितना जल्दी तैयार कर लेंगे, उतना जल्दी ही हमारा नई परिस्थिति से समायोजन हो सकेगा, अन्यथा जीवन में पीछे छूटने का बहुत बड़ा मलाल हमें वर्षों तक सालता रहेगा। कोरोना संक्रमण का अवसान कब होगा, यह सच अभी भविष्य के गर्भ में है। हाँ, इतना जरूर है कि आनेवाले समय में कोरोना जैसे संक्रमण अब हमारी निजी जिंदगी का हिस्सा बनने जा रहे हैं। आप सभी नजदीक से अनुभव कर ही रहे हैं कि वैश्विक बाजार भी कोरोना जीवन-शैली में ढलकर कोरोना के बाजार को विस्तार दे रहा है। कोरोना से जुड़ी हर वस्तु बाजार में विक्रय के लिए उतर पड़ी है। यह कोरोना संक्रमण के बाद उभरती नई अर्थव्यवस्था है। इसलिए कोरोना का यह संक्रमण हमें एक नई वैश्विक जीवन-शैली प्रदान कर रहा है और संकेत दे रहा है कि कोरोना के संक्रमण से भयमुक्त होकर बचाव के साथ इसे अपनी जीवन-शैली का हिस्सा बनाकर अपना जीवन जिएँ। यही इक्कीसवीं सदी के अत्यधिक आधुनिक होने के दुष्परिणाम की चुनौती से निकलता अवसरयुक्त सुपरिणाम है।

सा
अ

२/१२५ बुद्धि विहार, दिल्ली रोड,
मुरादाबाद (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४१२२४५३०१

इस अंक के चित्रकार

संदीप राशिनकर

जाने-माने लेखक एवं चित्रकार। कई अखिल भारतीय कला प्रदर्शनियों में चित्रों का चयन व प्रदर्शन। राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं में हजारों चित्रों/रेखांकनों का प्रकाशन, अनेक प्रतिष्ठित प्रकाशनों की पुस्तकों के आवरण। भित्ति चित्रों (म्यूरल्स) के क्षेत्र में अनेक स्थानों/प्रतिष्ठानों पर भव्य म्यूरल्स का सृजन एवं अभिनव प्रयोगों से इस शैली में प्रतिष्ठित कार्य। कविताओं के अलावा कला एवं साहित्य-संस्कृति पर समीक्षात्मक लेखन/प्रकाशन।

संपर्क : ११-बी, राजेंद्र नगर, इंदौर-४५२०१२
दूरभाष : ९४२५३१४४२२

कोरोना-चिल्ला

• दिव्या माथुर

'वातायन-यूके' की संस्थापक, रॉयल सोसाइटी ऑफ आर्ट्स की फेलो। लंदन में आयोजित अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन-2000 की सांस्कृतिक अध्यक्ष। सात कविता-संग्रह, पाँच कहानी-संग्रह और एक उपन्यास 'शाम भर बातें', जो दिल्ली विश्वविद्यालय के बीए-ऑनर्स पाठ्यक्रम में शामिल एवं प्रकाशित। बहुत सी पुस्तकों पर स्नातकोत्तर शोध हो चुके हैं। नाटकों–'फ्यूचर-परफेक्ट' एवं 'ठुल्ला क्लिव' का सफल मंचन। कहानी, 'सॉप-सीढी' पर एक टेली-फिल्म।

तीन हफ्ते हो चुके हैं जॉन को घर छोड़े हुए। वह एक कैरावैन में किराए पर रह रहा है, और वहीं से वह दफ्तर का काम भी सँभाल रहा है। यदि वह काम न भी करे तो सरकार से उसे वेतन मिलता रहेगा, किंतु जॉन का स्वाभिमान उसे ऐसा नहीं करने दे रहा। वैसे भी पति-पत्नी में से एक को तो समय-असमय बाहर जाना ही पड़ेगा, यही सोचकर दोनों ने यह अप्रिय फैसला किया था, क्योंकि ताजा दूध, फल और सब्जियों के लिए हफ्ते में दो या तीन बार तो सुपरमार्केट जाना ही पड़ता था। फिर दो बढ़ते हुए छोटे बच्चों की जरूरतें क्या कम होती हैं! जॉन के 'न-न' करने पर भी जॉन की पत्नी सोफिया नियमित रूप से भोजन पैक कर घर के दरवाजे के बाहर रख देती है, जो जॉन रात को खाता है; सुबह का नाश्ता वह कैरावैन में ही कर लेता है। दोपहर को तो वह पहले भी सलाद या सूप ही खाता था; वैसे काम अधिक हो तो वह चाय पीना भी भूल जाता है। घर पर भी जब वह दफ्तर का काम किया करता था तो सोफिया को ही उसे याद कराना पड़ता था कि हर आधे घंटे के अंतराल पर उसे उठकर कुछ टहल लेना चाहिए। जब वह उसकी अनसुनी करता तो सोफिया अपने चार वर्ष का बेटे मैथ्यू को उसके पीछे लगा देती कि पापा से कहो कि उसे पार्क में घुमा लाएँ। बिना चूँ-चपड़ किए वह झट चल देता था। उन्हें जूते पहनते देखकर उनका पालतू कुत्ता माइलो भी दरवाजे पर जा खड़ा होता।

आजकल तो सुबह जब जॉन अपने परिवार से मिलने आता है तो मैथ्यू के जिद करने पर भी उसे पार्क में घुमाना तो दूर, वह उसे चूमता तक नहीं है। घूमने से अधिक मैथ्यू को पिता की हुड़क उठती है। हालाँकि कोविड-१९ से जानवर संक्रमित नहीं होते किंतु सोफिया माइलो को फिर भी बाहर नहीं जाने देती, क्योंकि वह मैथ्यू को दिन-रात चाटता रहता है, बाहर से वह कहीं संक्रमण न ले आए। छुटकी मिया अभी छह महीने की भी तो नहीं है, रात में कई बार जागकर सोफिया को उसे दूध पिलाना पड़ता है, जब से जॉन गया है, वह अच्छी नींद नहीं सोई है। दो छोटे बच्चों को अकेले सँभालते वह थक के चूर हो जाती है।

जॉन चूँकि घर में कदम भी नहीं रख सकता; सोफिया बच्चों को लेकर खिड़की में बैठ जाती है और जॉन बाहर से ही कुशल-क्षेम पूछता है तथा खरीदा हुआ सामान दरवाजे के बाहर ही छोड़ कर वह रोज कैरावैन में लौट जाता है। चूमना तो दूर, वह अपने बीवी-बच्चों को गले भी नहीं लगा सकता। हर रोज यही होता है। सोफिया के आँसू नहीं रुकते और जॉन उसको हिम्मत बँधाते स्वयं कमजोर हो जाता है, किंतु उसके आँसू केवल लौटते वक्त ही बहते हैं।

जॉन द्वारा लाए सौदे को सोफिया बारह घंटों तक घर के अंदर नहीं लाती। बच्चों के सो जाने के बाद, वह दस्ताने पहनकर सामान अंदर लाती है और एक-एक चीज को धोती पोंछती है, फिर अपने हाथों को देर तक पानी व साबुन से धोती है, फिर भी उसे लगा रहता है कि कहीं उससे कुछ छूट न गया हो!

जॉन की माँ मैरी और पिता एडवर्ड भी घर में कैद हैं, दोनों का रक्तचाप अनियमित रहता है। माँ को मधुमेह भी है, अत: उन्हें संक्रमण का अधिक खतरा है। स्वयंसेवक उन्हें दवाई और भोजन पहुँचा देते हैं। कभी-कभी जॉन भी उनसे मिल आता है। वे तरस जाते हैं पोता-पोती को देखने के लिए; कहाँ वे पूरा दिन उनके साथ गुजारते थे। एक-एक करके उनके बहुत से मित्रों की मृत्यु हो रही है। एन.एच.एस. ने हाथ खड़े कर दिए हैं। युवा लोगों को बचाना उनकी प्राथमिकता है और क्यों न हो! वे तो केवल शांति से मरना चाहते हैं, साँसों के लिए तड़पते हुए नहीं।

जॉन और मैरी के पड़ोसी अमर सिंह रिटायर्ड डॉक्टर हैं, उन्होंने अपनी सेवा नॉर्थविक पार्क हॉस्पिटल को देने का फैसला किया है। उनकी पत्नी अमृता दिन-रात मॉस्क बनाने में लगी हैं, मैरी के साथ वे कभी-कभी बच्चों से भी मिलने चली आती हैं। सोफिया ने उनके लिए दो कुरसियाँ आगे वाली बगिया में दो मीटर के फासले पर लगा दी हैं। यह अच्छा है कि उनकी रसोई खासी बड़ी है और सामने की पूरी दीवार शीशे की है। मैथ्यू रसोई की स्लैब्स पर बैठ जाता है तथा पक्षियों और सड़क से गुजरने वाले पड़ोसियों को देख कर खुश रहता है। वाहक-सीट में लेटी मिया हिलते-जुलते पेड़ों को अपलक निहारती है; सोफिया को भी पेड़ों के साथ समय गुजारना बहुत पसंद है।

"देखना सोफिया, यह चिल्ला है, चिल्ला!" अमृता, जो आधुनिक होते हुए भी अपनी संस्कृति और विरासत की दुहाई देती रहती हैं, तसल्ली देते हुए सोफिया को बता रही थीं, "जब बहुत ठंड पड़ती थी तो मेरी दादी कहती थीं कि यह चिल्ला चालीस दिन चलेगा और हम शांति से चालीस दिन बीतने का इंतजार करते थे। हमारे पास न तो हीटिंग का इंतजाम था, न ही ताजी सब्जियों और फलों का, पर हम घर में ही सैकड़ों तरह के पक्वान्न बनाकर बूढ़ों-बच्चों को प्रसन्न रखते थे। हर शाम को नाच-गाने, लोककथाएँ और तरह-तरह के साधारण खेल होते। हमने कभी किसी को निराश होते नहीं सुना था। आजकल देखो, एक महीना भी नहीं हुआ कि लोग मानसिक रूप से परेशान हैं। कल मैंने न्यूज में सुना कि घरेलू हिंसा बढ़ गई है।"

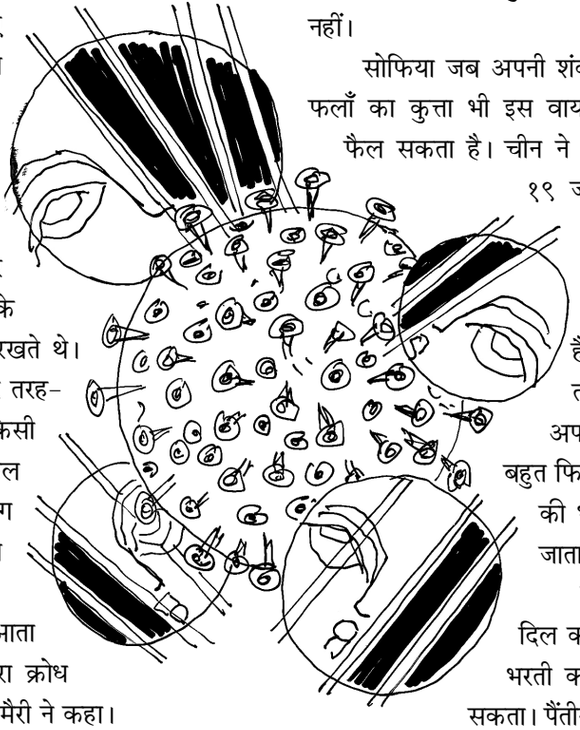

"मुझे तो उन बेचारे बच्चों पर तरस आता है, जिनके बेपरवाह माँ-बाप अपना सारा क्रोध इन्हीं मासूम बच्चों पर निकाल रहे होंगे।" मैरी ने कहा।

"हाँ, बॉरिस जॉनसन खुद अस्पताल में पड़ा है, अब देखो, देश को कौन सँभालता है?"

"यह सब चीनवालों की मेहरबानी है, चूहे, साँप, चमगादड़ क्या-क्या नहीं खाते ये लोग!"

"चाय बनाकर लाती हूँ," इसके पहले कि रोज की तरह अमृता का न्यूज-बुलेटिन शुरू हो जाता, सोफिया ने घबराकर विषय बदलने की गरज से कहा, "अभी उसके सैकड़ों काम बाकी हैं। कल का लाया हुआ सौदा अभी बाहर ही रखा हुआ है; उसे धोकर सँभालते और फिर रसोई को अच्छी तरह से साफ करने में उसे कम-से-कम डेढ़ घंटे चाहिए। इस बीच उसे दोनों बच्चों को रसोई से दूर रखना है। उसका तो भगवान् ही मालिक है।"

"नहीं-नहीं, हम अब चलते हैं, लंच का समय हो गया है न।" मैरी ने बहू की दशा भाँपते हुए कहा और उठ खड़ी हुई।

सोफिया सोचती है कि तीन हफ्ते नहीं निकल पा रहे, चालीस दिन में तो वह पागल हो जाएगी। उसे बाहर जाना है। लंबी सैर पर, जैसे कि वे रोज जाया करते थे। मिया को सजा-धजाकर प्रेम से लिटाकर जब वे घर से बाहर आते तो अड़ोसी-पड़ोसी रुक-रुककर उसे निहारते, 'हाउ क्यूट' आदि कहते। जॉन के कंधों पर चढ़े मैथ्यू की खुशी का भी कोई पारावार न होता। उनका प्यारा सा परिवार पूरे मोहल्ले की रौनक था। आज हर तरफ सन्नाटा है, लोगों की पार्कड कारें जंग खा रही हैं। सिर्फ और सिर्फ एंबुलेंस की आवाज इस खामोशी को तोड़ती है; दिल घबरा जाता है कि विषाणु की चपेट में अब कौन आया! सबको फिक्र लगी रहती है कि यह विषाणु एक बार पड़ोस में आ पहुँचा तो किसी की खैर नहीं।

सोफिया जब अपनी शंकाएँ जॉन के सम्मुख रखती है—फलाँ-फलाँ का कुत्ता भी इस वायरस से मर गया। संक्रमण हवा से भी फैल सकता है। चीन ने अपने आर्थिक लाभ के लिए कोविड-१९ जानबूझकर फैलाया है। भारत ने इलाज ढूँढ़ लिया है—तो वह बहुत नाराज हो जाता है। पहले तो वह बड़े धीरज से उसे समझाता था, पर अब वह झींख जाता है। वह यह भी जानती है कि सरकार की ताकीद के बावजूद लोग तरह-तरह की अफवाहें फैला रहे हैं, पर वह क्या करे? उसे बहुत फिक्र है, सिर्फ बच्चों का ही नहीं, स्वयं जॉन की भी, जो रोज शॉपिंग के लिए सुपरमार्केट जाता है, यदि उसे कुछ हो गया··· ?

फिर एक दिन आधी रात को एडवर्ड को दिल का भारी दौरा पड़ा और उसे हॉस्पिटल में भरती करना पड़ा। उससे मिलने नहीं जाया जा सकता। पैंतीस वर्षों में यह पहली बार है कि मैरी और एडवर्ड विलग हैं। अपने-अपने घरों में बंद वे अब केवल प्रार्थना ही कर सकते हैं। मैरी को समझ नहीं आ रहा कि वह क्या करे, भोजन पकाने का भी मन नहीं होता। बहुत भूख लगती है तो सूप का एक पैकेट खोलकर डबलरोटी के साथ गटक लेती है। पहले तो वे दोनों दोपहर और रात के भोजन के बारे में सलाह-मशविरा करते, पाक-विधियों की चर्चा करते, मीठे में क्या बनेगा और फिर प्यार भरा झगड़ा भी करते कि आज का खानसामा कौन होगा। एक पकाता तो दूसरा खाने की मेज को ऐसे सजाता कि जैसे कोई खास मेहमान भोजन पर आमंत्रित हो। साथ में वे लाल शराब पीते रहते। मैरी को ठीक से नींद नहीं आ रही कि कहीं अस्पताल से किए गए फोन की घंटी न सुन पाई तो··· ? आँख लगती है तो अचानक उठकर वह रसोई की ओर दौड़ लगाती है

कि आज तो वह सुबह की चाय बनाकर एडवर्ड को मात दे ही देगी। यकायक याद आता है कि अब क्या समय और असमय, वापस बिस्तर में जा लेटती है।

जब भी फोन बजता है तो सबका दिल बैठ जाता है। वे फोन कर नहीं सकते, अस्पताल इतने अस्त-व्यस्त हैं। डॉक्टर्स और नर्सें अपनी जान पर खेल कर रोगियों को बचाने में लगे हैं। बीबीसी समाचार के अनुसार देश में आज सबसे अधिक मौतें हुई हैं, जबकि संक्रमण अभी 'पीक' पर भी नहीं पहुँचा है। चिकित्सीय उपकरण अस्पतालों में समय पर नहीं पहुँच रहे हैं, वेंटीलेटर्स के अभाव में रोगियों की मृत्यु हो सकती है। सरकार गैर-सरकारी कंपनियों और अन्वेषकों से भी निवेदन कर चुकी है कि वे जल्दी-से-जल्दी वेंटीलेटर्स का निर्माण करें। टर्की से आने वाला शिपमेंट न जाने क्यों नहीं पहुँच पाया है? लोग निजि स्तर पर ऐपरंस, टोपियाँ और मॉस्क बना रहे हैं। आक्रोश सर्वत्र है कि सरकार को इन सबका इंतजाम बहुत पहले कर लेना चाहिए था। सोफिया और जॉन को मैरी की भी फिक्र है। वे चाहते हैं कि उसे अब उनके घर में शिफ्ट हो जाना चाहिए, किंतु वह नहीं मानती, मैथ्यू और मिया को खतरे में नहीं डाल सकती। डॉ. अमर सिंह ने मैरी से वादा किया है कि कल सुबह के वार्ड-राउंड के बाद वह मोबाइल पर जॉन से उनकी बात करवाने का प्रयत्न करेंगे, तब वह बहुत उत्तेजित हो उठी है।

सुबह के पाँच बजे मैरी को फोन पर सूचना दी जाती है कि एडवर्ड का मृत शरीर शव-गृह में सुरक्षित है।

"आप ठीक हैं न? किसी को फोन करवाना हो तो हमें बता दीजिए!" फोन पर नर्स पूछ रही है।

"नहीं, आप परेशान न हों। मैं खुद ही बेटे को फोन पर सूचना दे दूँगी। आप लोग तो बहुत व्यस्त होंगे, अपना ध्यान रखिए। थैंक यू वैरी मच!" काटो तो खून नहीं वाली स्थिति में थी मैरी। फोन कट जाने पर भी वह फोन को कान पर लगाए बड़ी देर तक खड़ी रही, उसे समझ नहीं आ रहा था कि यह सब सपने में घटा था या सचमुच! एडवर्ड उसे सदा के लिए छोड़ के जा चुका था।

"जॉन, आज सुबह तुम्हारे डैड की मृत्यु हो गई, उनका शव मॉर्चरी में भेज दिया गया है।" मैरी ने बड़ी सधी हुई आवाज में बेटे को फोन पर सूचित किया, किंतु जॉन झट पहचान गया कि माँ सकते में थी।

"माँ, अपना सामान बाँध लो, मैं तुम्हें लेने अभी आ रहा हूँ।" जॉन के भी आँसू बह निकले।

"नहीं बेटा, मैं बिल्कुल ठीक हूँ…" कहने के विपरीत वह बिलख-बिलखकर रोने लगीं। उनके दिल में दर्द का समंदर उफान पर था, "बेटा, मुझे एडवर्ड से बस एक बार मिलवा दे, मुझे उससे विदा लेनी है।"

"माँ, धीरज रखो, मैं पंद्रह मिनट में तुम्हारे पास पहुँच जाऊँगा, ओके, मॉम!"

एकाएक जॉन के हाथ-पाँव फूल गए, भारी कदमों से वह कार लेने के लिए घर की ओर भागा, जिसे वह घर के बाहर ही खड़ी रखता था कि उसकी गैरहाजिरी में सोफिया को बच्चों को लेकर कहीं अस्पताल न भागना पड़े।

सोफिया ने रसोई में से उसे देखा तो उसका दिल बैठ गया, जरूर कोई अनहोनी घटी थी। खिड़की में से जॉन ने उसे पिता की मृत्यु के बारे में बताया। एडवर्ड सोफिया को सगे पिता से भी अधिक प्यार करते थे। उसके भी आँसू थामे नहीं थम रहे थे। दोनों ने तय किया कि अब चाहे जो हो, पर माँ को उनके घर आ जाना चाहिए।

दोपहर होते-होते एडवर्ड की मृत्यु की खबर हर तरफ फैल गई है। संबंधियों और मित्रों के फोन आने लगे, सभी यही राय दे रहे थे कि मैरी को ऐसे समय में अकेला छोड़ना उचित नहीं। छुटकी मिया तक को एहसास हो गया है कि परिवार में कुछ सामान्य नहीं है। वह चिड़चिड़ा रही है, बेवजह रोए जा रही है; पर सिवा उसे अपने सीने से चिपटाने के सोफिया क्या कर सकती है! मैथ्यू को तो समझा दिया गया है कि उसके दादा की मृत्यु हो गई है और वह अब उनसे कभी नहीं मिल सकेगा। वह यकायक खामोश हो गया है, किसी बात के लिए जिद नहीं कर रहा। अपने शयन-कक्ष में लेटा वह चुपचाप अपनी पुस्तकें पलट रहा है। सोफिया ने उसे जब टीवी पर बच्चों के कई अतिरिक्त कार्यक्रम देखने की इजाजत दी तो भी वह खुशी से नाचा नहीं। सोफिया चाहती है कि वह रोज की तरह बात-बात पर जिद करे, ताकि समय कटे, दिनचर्या का कुछ तो एहसास हो।

घर पहुँचते ही मैरी ने अपना कोट-जूते आदि एक बैग में डालकर बाहर ही छोड़ दिए और सीधे गुसलखाने में घुस गई; एक घंटे तक रगड़-रगड़कर नहाई। एडवर्ड की शक्ल देखना तो दूर, उन्हें उसके शव को दूर से देखने तक की इजाजत नहीं दी गई थी और वे उलटे पाँव लौट आए थे।

सोफिया ने चैन की साँस ली, मैथ्यू को सँभालते मैरी का भी मन बहल जाएगा। सोकर उठा तो मैथ्यू को रसोई में से आती हुई दादी की आवाज सुनाई दी, वह रसोई की ओर लपका। दादी को देख उसे लगा कि जैसे उसे कोई बड़ी नेमत मिल गई हो। मैथ्यू को अपनी गोद में बैठाया तो मैरी को भी बड़ी राहत मिली। कम-से-कम उन दोनों के लिए कोरोना-चिल्ले की अवधि पूरी हो चुकी थी।

अनौपचारिक अंतिम-संस्कार के लिए केवल जॉन और मैरी को ही अनुमति दी गई थी। जॉन ने जूम पर कई संबंधियों और मित्रों को जोड़ लिया था।

83A Deacon Road
London NW2 5NN (UK)
दूरभाष : ०७७७०७७५३१४
Divyamathur1974@gmail.com

साहित्य में 'स्व' और 'पर'

● स्मिता मिश्र

'स्व' और 'पर' समाज के चिंतन के आधारबिंदु रहे हैं। यानी व्यक्ति से समष्टि की यात्रा भारतीय चिंतन पद्धति ही नहीं, भारतीय साहित्य के केंद्र में भी रही है। साहित्य में 'स्व' और 'पर' का बड़ा गहरा संबंध होता है। यदि दोनों में से एक अलग हो गया तो साहित्य की प्रभविष्णुता समाप्त हो जाएगी।

भारतीय चेतन में 'स्व' और 'पर' का भेद नहीं माना गया। यहाँ अनेक तरह से स्व और पर के एकता की पहचान की गई। कभी कहा गया 'वसुधैव कुटुंबकम्', कभी 'आत्मन: प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत' कहा गया। अर्थात् जो बात अपने को प्रतिकूल प्रतीत होती हो, उसका आचरण दूसरों के साथ न किया जाए। कभी कहा गया 'जोई पिंडे सोई ब्रह्मांडे।' लेकिन व्यवहार में भेद होता रहा। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कहा है कि निराकार सत्य ने अपने को साकार किया तो उसकी सत्ता त्रिगुणात्मक हो गई, यानी सत्-रज-तम—तीनों ही इस सृष्टि में पैदा हुए और वे अपना-अपना काम करते हैं। रज और तम—दोनों ही स्व और पर में भेद करते हैं। रज ऐश्वर्य में डूबकर, भोग-विलास में लिप्त होकर भेदभाव स्थापित करता है और तम के नाश के लिए बार-बार अवतार लेना पड़ता है; यानी कि व्यवहार में रज एवं तम तो अपने सिवा सबको अप्रिय मानता है और नाश करना चाहता है। सत् बार-बार स्व और पर के भेद को दूर करने के लिए प्रयत्नशील होता है।

मनुष्य के इतिहास में आम व्यक्ति का संघर्ष अनुपस्थित

इतिहास 'स्व' और 'पर' के भेद से भरा हुआ है। वह सत्, रज, तम, इन तीनों गुणों से युक्त मनुष्य के संबंधों और संघर्षों का दस्तावेज है। दरअसल इतिहास के रूप में जो चीज हमारे सामने है, उसमें आम आदमी की कथा नदारद है। वह तो विशिष्ट व्यक्तियों और राजाओं के आपसी संघर्षों की कथा है। जो बड़ी-बड़ी घटनाएँ घटित हुई हैं और उनसे जुड़े जो बड़े-बड़े नाम रहे हैं, इतिहास उन्हीं की कथा कहता है। कभी-कभी कोई राजा ऐसा भी हुआ, जो न्यायी हुआ और प्रजा के कष्ट को अपने कष्ट के रूप में अनुभव करता रहा तथा सबके लिए उत्तम शासन-व्यवस्था देने का प्रयत्न करता रहा। अधिकांश तो भोगी-विलासी ही हुए, राजसिक और तामसिक वृत्ति वाले ही हुए, जोकि—

जाकर तिरिया सुंदर देखी, तापर उठा लीन तलवार। (आल्हा खंड)

अर्थात् अपने स्वार्थ व अहं की तृप्ति के लिए ये लड़ते रहे और विदेशी आक्रांताओं को सहयोग देते रहे। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यास 'चारु चंद्रलेख' में इस यथार्थ का बहुत प्रभावशाली चित्रण किया गया है और कहा गया है कि हार-जीत प्रजा की नहीं, राजा की होती रही है।

मीडिया एवं साहित्य पर अनेक पुस्तकें प्रकाशित। अपने पिता रामदरश मिश्र के रचनाओं का १४ खंडों में प्रकाशित 'रचनावली' का संपादन किया। समाचार-पत्र 'स्पोर्ट्स क्रीड़ा' का संपादन। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया : 'बदलते आयाम' पुस्तक के लिए 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार' एवं अन्य पुरस्कार प्राप्त। संप्रति : एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, श्री गुरु तेग बहादुर खालसा कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय।

वर्तमान राजनीति में स्व और पर का भेद

आज की राजनीति एक नया मूल्य और चेतना लेकर आई। स्वाधीनता-संग्राम जैसी महान् घटना के भीतर उसका जन्म हुआ और वह विकसित हुई। कोई अमीर है, कोई गरीब है, कोई ऊँचा है, कोई नीच है, यह क्या बात हुई? इसे मिटाना है और इसके लिए स्वाधीनता की प्राप्ति जरूरी हुई। स्वाधीन भारत में उस लोकतंत्र की स्थापना हुई, जिसमें स्व और पर का भेद नहीं रहता, इसमें सभी का समान महत्त्व है, समानाधिकार है; किंतु व्यवहार में क्या! दलवाद, क्षेत्रवाद, जातिवाद, संप्रदायवाद ने 'स्व' और 'पर' के अभेद को रौंद दिया। नित्य अपने और पराए का तांडव हो रहा है। लेकिन साहित्य की बात अलग है—

उनकी जो बात है वह अहले सियासत जाने,
मेरा पैगाम मोहब्बत है जहाँ तक पहुँचे। (जिगर मुरादाबादी)

मुहब्बत 'स्व' और 'पर' के भेद को मिटाती है। यहाँ जितना ही

अधिक 'स्व' होता है, वह उतना ही अधिक 'पर' से जुड़ता है। यहाँ 'स्व' का अर्थ सबसे कटकर अकेला रह जाना नहीं होता, बल्कि 'पर' को 'स्व' में लगातार उतारकर 'पर' से घनीभूत रूप में जुड़ना होता है। तुलसीदास ने कहा है कि रघुनाथ-गाथा स्वांत: सुखाय लिख रहे हैं, लेकिन उनका स्वांत: सुख एक विशाल पर-सुख से जुड़ा हुआ है—

कीरति भणिति भूति भल सोई।
सुरसरि सम सबकर हित होई।। (बालकांड)

अर्थात् कीरत, साहित्य और धन, तभी सुंदर होते हैं, जब ये गंगा के समान सबका हित करते हैं।

आत्मभूत से सर्वभूत

साहित्य की प्रक्रिया क्या है? आचार्य रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में सर्वभूत को आत्मभूत करके सर्वभूत कराना। साहित्य में सर्वभूत को आत्मभूत किए बिना हम सर्वभूत को प्रस्तुत नहीं कर सकते। दुनिया में बहुत कुछ हो रहा है। हम अखबारों में पढ़ते हैं। विभिन्न प्रकार की पुस्तकों के आँकड़ों से पढ़ते हैं। क्या इस जानकारी के आधार पर साहित्य बन जाएगा? नहीं, वह साहित्य नहीं होगा, वह सामान्य सूचना होगी। साहित्य का कार्य सामान्य कथन से नहीं, बिंब-विधान से चलता है। बिंब व्यक्ति-विशेष और वस्तु-विशेष का होता है, यानी जब साहित्यकार किसी व्यक्ति, वस्तु, दृश्य आदि का गहरा अनुभव प्राप्त करके लिखता है, तब वह व्यक्ति, वस्तु या दृश्य अपने वर्ग का प्रतीक बनकर व्यापक हो जाता है। अर्थात् वर्ण्य-वस्तु साहित्यकार का जितना अधिक स्व बनेगी, उतनी ही अधिक 'पर' तक जाएगी, यानी व्यापक होगी। अनुभव में कवि का अपना वैशिष्ट्य भी लगा होता है। इसलिए उसके बिंबों में वर्ण्य-विषय की विशिष्टता तो होती ही है, उसकी दृष्टिमूलक विशिष्टता भी होती है। किसी समुद्र का चित्रण करना है तो एक पद्धति तो यह हो सकती है कि केवल पुस्तकों की जानकारी के आधार पर ही उसका दृश्य खड़ा कर दिया जाए या फिर अपने द्वारा देखे गए समुद्र के किसी हिस्से के अनुभव के आधार पर उसके दूसरे हिस्से का चित्रण कर लिया जाए। तो इन दोनों ही अवस्थाओं में समुद्र के उस हिस्से के प्रति ईमानदारी नहीं होगी। समुद्र देखे बिना समुद्र का चित्रण तो बिल्कुल ही प्रभावहीन होगा, किंतु यदि मुंबई के समुद्र के अनुभव के आधार पर कन्याकुमारी का चित्रण कर दिया जाएगा तो वह भी बहुत सही और प्रभावशाली नहीं होगा। पहाड़ों, नदियों, समुद्रों के अनेक स्थानों और समयों में अनेक रंग होते हैं। जब रचनाकार उनके विशिष्ट रूप को अपने अनुभव में उतारता है, तब रचना को सही सौंदर्य प्राप्त होता है। और नदी, पहाड़ या अन्य किसी दृश्य का विशेष रूप अपने वैशिष्ट्य के साथ कवि के सर्जक वैशिष्ट्य को प्राप्त करके एक अद्‌भुत दीप्ति से मंडित होगा ही और वह अपनी सच्चाई में अपने जैसे तमाम दृश्यों का प्रतिनिधि भी बन जाएगा। इसी को प्रेमचंद एकता में अनेकता और अनेकता में एकता कहते हैं।

'स्व', हृदय का 'लोक' हृदय में रूपांतरण

हमारे यहाँ साधारणीकरण की बात साहित्य में उठाई गई है। प्रत्येक व्यक्ति में दो हृदय होते हैं। एक 'स्व' हृदय और दूसरा 'लोक' हृदय। जब हमारा 'स्व' हृदय 'लोक' हृदय में रूपांतरित होता है, तभी वह रचना के काम का होता है। हम लगातार ढेर सारे अनुभव करते हैं। हमारा मन एक कबाड़खाना है। तमाम इंद्रिय, प्रतीतियाँ हमारे मन के कबाड़खाने में एकत्र होती रहती हैं। जब रचनाकार रचना करता है, तब उसकी मूल्यांकनकारी दृष्टि सजग होकर यह पहचानती रहती है कि इनमें से कौन सी इंद्रिय-प्रतीतियाँ हमारी निहायत अपनी हैं और कौन सी लोक-हृदय से जुड़ी हुई हैं, किनके चित्रण से हम अपने निजी सुख-दु:ख का प्रलाप पैदा करेंगे और किनके चित्रण से हमारा सुख-दु:ख पूरे मानव-समाज का सुख-दु:ख बन जाएगा। इसीलिए काव्यशास्त्रियों ने अनुभव और रचना के बीच समय की एक दूरी की आवश्यकता अनुभव की है। किसी इंद्रिय-बोध या अनुभव के आते ही न जाने उसमें कितना कुछ ऐसा होता है, जो हमारा निहायत अपना होता है, उससे किसी और का सरोकार नहीं होता। तो कुछ समय के बीत जाने के बाद जब हम इन अनुभवों को देखते हैं तो लगता है कि उनका व्यक्तिगत उफान बैठ गया है और जो शेष रह गया है, वह समाज से भी जुड़ता है। यानी वहाँ 'स्व' और 'पर' का भेद मिट जाता है, इसलिए अनुभवों को रचना में तत्काल उतारने से बचने की सलाह दी गई है। हाँ, कुछ लोगों की मूल्यांकनकारी दृष्टि इतनी सजग हो सकती है कि वह तत्काल के अनुभवों में से अत्यंत व्यक्तिवादी अंशों का निष्कासन कर सकती है।

'स्व' और 'पर' के संबंध की महत्ता कवि से अधिक कौन समझेगा! उसे दोनों के बीच का फासला बहुत दु:खी करता है।

लेटर बॉक्स में पड़ी हुईं चिट्ठियाँ
अनंत सुख-दु:ख वाली अनंत चिट्ठियाँ
लेकिन कोई किसी से नहीं बोलती
सभी अकेले-अकेले
अपनी मंजिल पर पहुँचने का इंतजार करती हैं
कैसा है यह एक साथ होना
दुसरे के साथ न हँसना, न रोना
क्या हम भी

क्या हम भी लेटर बॉक्स की चिट्ठियाँ हो गए हैं? (रामदरश मिश्र)

इस कविता में कवि ने 'स्व' और 'पर' के बीच उगते हुए फासले को लेटर बॉक्स में पड़ी हुईं चिट्ठियों के माध्यम से दरशाया है। लेटर बॉक्स में तमाम चिट्ठियाँ एक साथ पड़ी होती हैं; लेकिन किसी का किसी से संवाद नहीं होता। वे तो केवल अपने लक्ष्य तक पहुँच जाने की प्रतीक्षा करती हैं। कवि प्रश्न करता है कि इतनी चिट्ठियों के एक साथ होकर भी परस्पर संवादहीन होने का क्या सुख है? एक साथ होकर भी वे न हँस सकती हैं, न रो ही सकती हैं। हम मनुष्य भी एक साथ होकर भी संवादहीन हो गए हैं।

आंचलिकता से सार्वभौमिकता की प्राप्ति

स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् जो साहित्य चिंतन आया, उसने जिए हुए जीवन-सत्य पर बहुत बल दिया। फॉर्मूलों के आधार पर बहुत बड़े-बड़े राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय और सर्वकालिक विषयों का प्रभावहीन चित्रण का निषेध करते हुए उसने अपने जाने-पहचाने परिवेश के जीवन के प्रामाणिक विधान की आवश्यकता को रेखांकित किया और अपनी जमीन, अपने अंचल के महत्त्व को जोरदार ढंग से प्रस्तावित किया। इस क्रम में अनेक अंचलों के जीवन को लेकर बड़े महत्त्वपूर्ण उपन्यास और कहानियाँ लिखी गईं। ध्यान देने की बात है कि साहित्य में अपनी जमीन या अपना अंचल दूसरों की जमीन या अंचल का प्रतिरोधी नहीं होता। राजनीति में एक अंचल का नेता दूसरे अंचल के नेता का विरोध करता है और वहाँ आंचलिक होना एक गाली बन जाता है, लेकिन साहित्य में एक अंचल दूसरे अंचल का प्रतिनिधि बनकर आता है। आंचलिकता के बिना राष्ट्रीयता और राष्ट्रीयता के बिना कालातीत होना बेमानी है। काल में अंकित रचना ही कालातीत होती है। किसी अंचल में गहरे धँसी रचना ही राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय होती है। जहाँ राजनीति में आंचलिकता राष्ट्रीयता की विरोधी प्रतीत हो सकती है, वहीं साहित्य में आंचलिकता क्षेत्र, जाति, संप्रदाय आदि के भेद को भेद कर सार्वभौम हो जाती है। वह सबको अपनी लगती है।

अज्ञेय की यह कविता 'स्व' के माध्यम से 'पर' को या एक के माध्यम से अनेक को पहचानने की प्रभावशाली साक्षी है—

चेहरे थे असंख्य, आँखें थीं असंख्य
दर्द सभी में था, जीवन का दंश सभी ने जाना था।
पर दो, केवल दो, मेरे मन में कौंध गईं।
मैं नहीं जानता किसकी वे आँखें थीं
नहीं समझता फिर उनको देखूँगा।
किंतु उसी की कौंध, मुझे फिर-फिर दिखलाती है
चेहरे असंख्य, आँखें असंख्य, जिन सब में दर्द भरा है,
पर जिनको मैं पहले नहीं देख पाया था
वही परिचित दो आँखें ही चिर माध्यम हैं
सब आँखों से, सब दर्दों से चिरपरिचय का।

निष्कर्ष

सच्चा साहित्यकार 'पर' को अपने अनुभव में ले आता है और अपने अनुभव से स्पंदित कर समाज को प्रदान करता है । यदि 'पर' को 'स्व' में लाए बिना वर्णित कर दिया जाए तो वह एक ऊपरी कथन भर रह जाएगा और 'स्व' में 'पर' न आए तो स्व अपने ही भीतर के मनोविकारों को उद्घाटित करेगा और सामाजिक यथार्थ से उसका कोई संबंध ही नहीं रहेगा। जहाँ राजनीति में आंचलिकता राष्ट्रीयता की विरोधी प्रतीत हो सकती है, वहीं साहित्य में आंचलिकता क्षेत्र, जाति, संप्रदाय आदि के भेद को भेदकर सार्वभौम हो जाती है। वह सबको अपनी लगती है। जब साहित्यकार किसी व्यक्ति, वस्तु, दृश्य आदि का गहरा अनुभव प्राप्त करके लिखता है, तब वह व्यक्ति, वस्तु या दृश्य अपने वर्ग का प्रतीक बनकर व्यापक हो जाता है। अर्थात् यह कहा जा सकता है कि साहित्य 'पर' से 'पर' की यात्रा है, किंतु वाया 'स्व'।

साअ
हिंदी विभाग, श्रीगुरु तेग बहादुर खालसा कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय

लघुकथा

डर

● संगीता शर्मा

"नाव डगमगा रही है, सँभालो, डूब जाएगी!" एक आदमी चिल्लाया था। "बाबा, तुमसे पतवार नहीं सँभल रही है तो पतवार दूसरे नाविक को क्यों नहीं दे देते?"

"वर्षों से ये पतवार चला रहे हैं, इसलिए इन्हें अपने पर पूरा भरोसा है। अपने आगे ये दूसरे नाविक को अनाड़ी समझते हैं।" उस आदमी की बात सुनकर दूसरा नाविक बोला।

"वर्षों से पतवार सँभाल रहे हैं, इसलिए नाव चलाने में निपुण हैं। यह बात अतीत की हो गई," वह आदमी बोला, "पतवार चलाने के लिए शरीर में दम चाहिए और ये बूढ़े हो गए हैं।"

"बेटा, इन हाथों में अभी बहुत दम है।" बूढ़ा नाविक बोला था।

"बाबा, आप अपनी शान के लिए हम सबकी जान खतरे में क्यों डालना चाहते हैं?" वह आदमी फिर बोला, "आप पतवार दूसरे नाविक को थमा दें।"

"बेटा, मुझ पर भरोसा रखो, नाव डूबेगी नहीं।"

"बाबा, आप पर भरोसा रखने का मतलब है—डर-डरकर सफर करना," वह आदमी बोला, "डर मौत से ज्यादा खतरनाक होता है।"

साअ
१०३, रामस्वरूप कॉलोनी,
शाहगंज, आगरा-२८२०१०
दूरभाष : ९०४५०३५७७०

लॉकडाउन यादव का बाप

● मनीष कुमार मिश्रा

क्या मैं मरनेवाला हूँ या फिर यह एक भ्रम है? या फिर उस समय का मानसिक तनाव कि जिसमें सुबह से शाम बस मौत के आँकड़े परोसे जा रहे हैं? सारी दुनिया से काटकर सारी दुनिया से मौत के आँकड़े दिखाए जा रहे हैं। यह भी कि कैसे कब्रिस्तानों में जगह कम हो गई है, लोग अपने सगे-संबंधियों की लाशें नहीं ले रहे, अस्पताल की व्यवस्थाएँ चरमरा गई हैं और दुनिया अब तक की सबसे बड़ी आर्थिक मंदी से जूझ रही है। बाहर निकलने की सख्त मनाही है। खबरों के अनुसार इसकी चपेट में आए लोगों की संख्या एक करोड़ बारह लाख से ज्यादा हो चुकी है। अब तक इस महामारी से पाँच लाख इकतीस हजार से ज्यादा लोगों की मौत हो चुकी है। बाहर सन्नाटा है और सारा शोर सिमटकर मेरे अंदर फैल चुका है। इस शोर में कुछ सूझ नहीं रहा, बस लग रहा है कि मैं भी मरनेवाला हूँ। अगर यह सच है तो घर में कैद क्यों हूँ? कुछ जरूरी काम फौरन निपटा लेने होंगे, चाहे कुछ भी हो। इसके पहले कि मैं मर जाऊँ, ये काम तो निपटाने होंगे, लेकिन कैसे?…

रात के ठीक तीन बजे हैं। मैंने लैपटॉप ऑन कर दिया। भाईसाहब को इ-मेल के जरिए सारी डिटेल भेज देना ठीक समझा। थोड़ी झिझक भी महसूस हुई, लेकिन मुझे यह जरूरी लगा। बीमा, मेडिक्लेम और मकान के सारे कागज स्कैन कर भेज दिए। बैंक खाते और शेयर की जानकारी भी। उन्हें घुमा-फिरा के यह भी लिख दिया कि अगर मुझे कुछ होता है तो चिंता की कोई बात नहीं, सारे लोन का बीमा है। ऐसी ही बहुत सी चीजें, जो मुझे जरूरी लगीं, सब लिखकर भाईसाहब को इ-मेल पर भेज दिया। ऐसा लगा, जैसे मरने की पूर्व तैयारी में बहुत जरूरी काम हो गया। फिर लगा, जैसे कुछ और भी है, जो करना है। तीन साल हो गए निष्ठा से रिश्ता टूटे, कभी तो नहीं लगा कि उस घमंडी और मतलबी लड़की से बात करूँ। लेकिन आज, जबकि मैं मरनेवाला हूँ तो लगता है कि उसे भी एक इ-मेल भेज दूँ।

काँपती उँगलियों से उसे इ-मेल लिखना शुरू किया। मैंने जो लिखा था, वह सब ठीक से तो याद नहीं, पर मैंने उसके प्रति अपने बरताव के लिए माफी माँगी थी। यह भी लिखा था कि वह दुनिया की सबसे सुंदर लड़की है और उसे अपना खयाल रखना चाहिए। इ-मेल भेजकर मैंने उसका इ-मेल ब्लॉक कर दिया। उसका कोई जवाब नहीं पढ़ना चाहता था। अब उसकी कोई जरूरत ही नहीं महसूस हो रही थी। मुझे लगा कि मुझे निष्ठा की मनपसंद डार्क चॉकलेट भी एक आखिरी बार उसे जरूर भेजनी चाहिए। लेकिन ऑनलाइन खरीदारी की कोशिश नाकाम रही। अत: उस चॉकलेट की फोटो ही इ-मेल करने की सोची। पर इ-मेल ब्लॉक कर चुका था। इ-मेल अनब्लॉक करने की हिम्मत नहीं हुई। इतनी देर में अगर उसने भी कोई इ-मेल भेज दिया हो तो? यह सोच कलेजा मुँह में आ गया। साँसें तेज हो गईं। नहीं-नहीं, मैं नहीं पढ़ सकता उसका जवाब। अब, जबकि मैं मरनेवाला हूँ तो क्यों जानूँ कि वह मेरे बारे में क्या सोचती है? नहीं, बिल्कुल नहीं। मैंने लैपटॉप बंद कर दिया। सुबह के साढ़े पाँच हो रहे थे और सिर भारी। मैं बिस्तर पर लेट गया, इस उम्मीद में कि थोड़ी नींद आ जाए। लेकिन क्या मरनेवाले को भी नींद आती है? कहते हैं, मरने के बाद आदमी चिरनिद्रा में चला जाता है। मेरी जो मानसिक स्थिति है, उसमें तो लगता है कि मरने के बाद भी नींद नहीं आएगी।

निष्ठा याद आ रही थी। पिछले दिनों जब उसकी माँ की अचानक मौत की खबर सुनी तो दंग रह गया। उसे ढाढ़स बँधाते हुए एक इ-मेल भी लिखा था, जो भेजने की हिम्मत ही नहीं हुई। उस इ-मेल का ड्राफ्ट पढ़ने का मन हुआ। मोबाइल में ही पढ़ने लगा—

'प्रिय निष्ठा,

जानता हूँ कि यह साल तुम्हें बहुत उदास छोड़कर जा रहा है, लेकिन यह उदासी तुम उन लोगों के लिए छोड़ दो, जो सारे मौसम तुम्हारी आँखों से पाते हैं। जिनकी मुसकान तुम्हारी मुसकान के बाद खिलती है। जिनके लिए सुकून का अर्थ सिर्फ तुम हो। आगे बढ़ो, मुसकराओ कि जिंदगी तुम्हारी इसी मुसकराहट में साँस लेगी, नहीं तो साँस खुद जिंदगी पर बोझ

सहायक आचार्य हिंदी विभाग में कार्यरत। राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं/पुस्तकों इत्यादि में ६७ से अधिक शोध-आलेख प्रकाशित। १५० से अधिक राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठियों/वेबिनारों में सहभागिता। हिंदी और अंग्रेजी की लगभग १८ पुस्तकों का संपादन।
संप्रति : के.एम. अग्रवाल महाविद्यालय (महा.)

हो जाएगी।

ऐसा ही बहुत कुछ लिखकर उसे इ-मेल कर देना चाहता था। मैं आज उसे समझाने का प्रयास कर रहा था, जिसकी समझदारी का मैं खुद कायल रहा हूँ। जो हर मोड़ पर मुझे सही-गलत के बीच उचित रास्ता दिखाती रही है, उसे भला मैं क्या समझाऊँगा? फिर भी मैं ऐसा कर रहा था, क्योंकि माँ की यों अचानक मौत के बाद वह अकेली हो चुकी थी। शायद अभी वह इस बात के लिए मानसिक रूप से तैयार नहीं थी या फिर मैं कम-से-कम, यही समझ पा रहा था या कि उसे समझाने के बहाने मैं खुद को किसी बात के लिए तैयार कर रहा था, लेकिन उसे नहीं भेज पाया कुछ भी।

और आज उसे नहीं, खुद को बहुत कुछ समझाते हुए थक गया। पता नहीं, बड़े भइया भी इ-मेल देखकर क्या सोचें? यही सब सोचते कब नींद आ गई मालूम नहीं। इस तरह की नींद भी वैसे ही आती है, जैसे कोई खुशी दबे पाँव आकार ओझल हो जाए। आँख खुली तो शाम के साढ़े चार बज रहे थे। बाहर सूरज भी ढलान पर था। जैसे वह भी थककर लौट जाना चाह रहा हो। बिस्तर से सोफे पर लुढ़कते हुए महसूस हुआ कि भूख लगी है। भूख लगी तो थी ही, पर उसे टाल रहा था। पर भूख ऐसे टलती कहाँ है? कुछ और समझती भी कहाँ है? बस डटी रहती है, अधिक जिद्दी होते हुए। इसे टालने का एक ही तरीका था कि मैं इसे टालने का खयाल छोड़कर कुछ बनाऊँ और खा लूँ। मरता क्या न करता! मैगी जितने झटपट बनी, उतने ही शीघ्र उसका भक्षण करते हुए मैं कृतार्थ हुआ।

मैगी नूडल्स वालों को प्रॉफिट के साथ-साथ हम जैसे लोगों का आशीष भी मिलता है। सोचता हूँ, अगर यह नेस्ले कंपनी मैगी न बनाती तो हम जैसे लोग क्या बनाकर खाते? पिछले दिनों जब लेड की मात्रा को लेकर मैगी पर संकट के बादल छाए थे, तो हम जैसे लोगों का दर्द सोशल मीडिया पर खूब छलका। उधर मौका ताड़ते हुए बाबाजी ने आँख दबाकर अपना मैगी प्रोडक्ट लॉञ्च कर दिया। दावा था कि यह वाला पहलेवाले से बेहतर है। हमें क्या? भकोसने से मतलब! पर लोग बताते हैं कि पूरा मामला करोड़ों का था। यह स्वास्थ्य के लिए उचित-अनुचित वाला मामला अस्वास्थ कर तो था ही, इसकी पूरी बनावट में सरकारी मंशा भी शक के दायरे में रही। लेकिन अब सरकार ही माई-बाप है और माई-बाप को गरियाना ठीक नहीं होगा। फिर पता नहीं क्या सही क्या गलत? जितने समाचार चैनल, उतने ही खुलासे। इस देश को आज अधिक खतरा इस मीडिया से ही नजर आता है। लॉकडाउन पीरियड में यह मैंने अच्छे से महसूस किया। इनका बस चलता तो तीसरा महायुद्ध चीन के खिलाफ करा चुके होते। खैर, मुझे क्या?

जब भूख मिटी तो निष्ठा फिर याद आई। सोचा, निष्ठा मेरे लिए इतना कुछ करती थी। ऐसे दु:ख के समय में क्या मुझे उसके पास नहीं जाना चाहिए था? एक औपचारिकता ही सही, पर शायद उसे अच्छा लगता। फिर पुणे तीन घंटे का तो रास्ता है। सिर्फ लफ्फाजी करते हुए इ-मेल कर देना कहाँ तक ठीक है? वह भी तो नहीं भेज सका। उसे शायद उम्मीद भी हो कि मैं उसके पास जाऊँ, लेकिन नहीं जा सका। तीन साल बीत गए, कभी बात तक नहीं की निष्ठा से। आज जब लगता है कि मैं मरनेवाला हूँ तो अचानक निष्ठा बहुत याद आ रही है। जिसे कभी अपनी जिंदगी मानता था, आज उसकी तरफ मुड़ा भी तो तब, जबकि जीने को लेकर नाउम्मीद हो चुका हूँ। इतना स्वार्थी भी होना ठीक नहीं कि खुद से ही घृणा हो जाए।

इतने में मोबाइल के नोटिफिकेशन से पता चला कि भाईसाहब का इ-मेल आया है। साँसें तेज हो गईं। पता नहीं, भइया ने क्या लिखा होगा? डरते-डरते उनका इ-मेल खोलता हूँ। भाईसाहब का एक लंबा-चौड़ा इ-मेल मेरे सामने था। लगा, जैसे वे मेरी हताश मन:स्थिति को भाँप गए हों। पर सीधे-सीधे उन्होंने भी कुछ नहीं पूछा था। उन्होने कोई डाँट भी नहीं लगाई, लेकिन बहुत कुछ कह गए थे। मैं उनके कहे हुए के साथ-साथ उनके अनकहे को भी अच्छी तरह समझ रहा था। उनका इ-मेल एक वरिष्ठ प्राध्यापक का अपने सहयोगी या शोधछात्र को बहुत-कुछ समझाने जैसा ही था। वह इ-मेल कुछ इस तरह था—

प्रिय मनीष,

तुम्हारा इ-मेल मिला। महत्त्वपूर्ण दस्तावेजों को इस तरह साझा करना अच्छा आइडिया है। मैं भी ऐसा ही करूँगा। तुमसे कितना कुछ सीखने जैसा है!

इधर कोरोना की वजह से काफी चिंता रहती है। मेरा विश्वविद्यालय भी बंद है। घर से ही ऑनलाइन कक्षाएँ संचालित हो रही हैं। शुरू में थोड़ा अटपटा लगा, लेकिन अब सब कर लेता हूँ। वेबिनार भी खूब कर रहा हूँ। यह सब करते हुए महसूस कर रहा हूँ कि बहुत कुछ बदल गया है, अभी और भी बदलेगा। इस बदलाव के सकारात्मक और नकारात्मक पक्ष जो भी हों, इतना तो निश्चित है कि यह समय सिर्फ डरने का नहीं, अपितु लोहा लेने का भी है। जूझने और टकराने का समय, शून्य में खो जाने से पहले कितना कुछ है, जो हमें कर लेना है।

यह ठीक है कि जिस विश्व व्यवस्था की अंधी दौड़ में हम शामिल थे, उसके प्रति एक निराशा भाव जाग्रत् हुआ है। लेकिन इसी के परिणामस्वरूप ग्लोबल के बदले लोकल के महत्त्व को हम समझ सके, इसकी स्वीकार्यता बढ़ी। आत्मनिर्भरता को नए तरीके से समझने की पहल शुरू हुई। हमारी आत्मकेंद्रियता आत्मविस्तार के लिए प्रेरित हुई।

तकनीक का शैक्षणिक क्षेत्र में बोलबाला बढ़ा। ऑनलाइन व्याख्यानों,

वेबिनारों इत्यादि की बाढ़ सी आ गई। सोशल मीडिया पर गंभीर अकादमिक दखल बढ़े। अध्ययन अध्यापन से जुड़ी सामग्री बड़े पैमाने पर इंटरनेट पर उपलब्ध हो सकी। ऑनलाइन व्याख्यानों, कक्षाओं इत्यादि से जिम्मेदारी और पारदर्शिता दोनों बढ़ीं। घर से कार्य / work from home अधिक व्यापक और व्यावहारिक रूप में दिखाई पड़ा। तकनीक का बाजार अधिक संपन्न हुआ। रचनात्मक कार्यों में रुचि बढ़ी। कोरोना काल को लेकर अकादमिक शोध और चिंतन की नई परिपाटी शुरू हुई। ऑनलाइन शिक्षा नए विकल्प के रूप में अधिक संभावनाशील होकर प्रस्तुत हुई। अकादमिक गुटबाजी और लिफाफावाद की संस्कृति क्षीण हुई। अकादमिक आयोजनों में पूँजी का हिस्सा कम हुआ। पत्र-पत्रिकाओं के इ-संस्करण निकले, जो अधिकांश मुफ्त में उपलब्ध कराए गए। भारतीय भाषाओं के तकनीकी प्रचार-प्रसार को बल मिला। शिक्षकों के शिक्षण प्रशिक्षण का अकादमिक खर्च कम हुआ। सामाजिक भाषाविज्ञान की नई अवधारणाएँ शोध-पत्रों एवं आलेखों के माध्यम से प्रस्तुत हुईं। ऑनलाइन पुस्तकालयों का महत्त्व बढ़ा। पारिवारिक मनोविज्ञान और 'स्पेस सिद्धांतों' को लेकर नई अकादमिक चर्चाओं ने जोर पकड़ा। धार्मिक मान्यताओं, परंपराओं इत्यादि को कोरोना काल में नए संदर्भों के माध्यम से प्रस्तुत करने की पुरजोर कोशिश लगभग सभी धर्म और पंथों के लोगों ने की।

इतना ही नहीं भाई, कलाओं और संगीत के बड़े आयोजन ऑनलाइन किए गए। मोबाइल अपनी स्क्रीन से स्क्रीनवाद का प्रणेता बनकर उभरा। नेटफ्लिक्स, अमेजन प्राइम, जी फाइव, मैक्स प्लयेर, अल्ट बालाजी और डिजनी हॉट स्टार की वेब सिरीज सिनेमाई जादूगरी की वह दुनिया है, जो लॉकडाउन के बीच अधिक लोकप्रिय रही। सिनेमा और लोकप्रियता के अकादमिक अध्ययन को इन्होंने नई चुनौती दी। सिनेमा तो तुम्हारा प्रिय विषय रहा है, यह सब तुमने भी निश्चित ही महसूस किया होगा।

और सुनो, वैक्सीन के शोध और उत्पादन की क्षमता में क्रांतिकारी बदलाव के संकेत मिले। साफ-सफाई और स्वच्छता को लेकर जागरूकता न केवल बढ़ी, अपितु व्यवहार में भी परिवर्तित हुई। इस पर गंभीर लेखन कार्य भी बढ़ा। दूरस्थ शिक्षा संस्थानों एवं उनकी प्रणालियों का महत्त्व बढ़ा। प्रवासी भारतीय मजदूरों को लेकर भी साहित्य प्रचूर मात्रा में उपलब्ध हुआ। कोरोना काल का पर्यावरण एवं प्रदूषण पर प्रभाव को लेकर भी कई शोध-पत्र सामने आए, जिनकी व्यापक चर्चा भी हुई। नए तकनीकी जुगाड़ इजाद होने लगे, जिससे कम-से-कम खर्चे में अकादमिक गतिविधियों को संचालित किया जा सके या उनमें शामिल हुआ जा सके। फेसबुक, यू-ट्यूब जैसे सोशल मीडिया के लोकप्रिय माध्यम अकादमिक गतिविधियों के बड़े प्लेटफॉर्म बनकर उभरे। तकनीकी सुविधाएँ उपलब्ध करानेवाली बड़ी कंपनियों में स्पर्धा बढ़ी, जिसका फायदा अकादमिक जगत् को हुआ। ऑनलाइन लेन-देन की प्रवृत्ति बढ़ी, जिससे ऑनलाइन वित्तीय प्रबंधन और कॉमर्स को लेकर नए डेटा के साथ शोध कार्यों की अच्छी दखल देखने को मिली।

रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में आयुर्वेदिक नुस्खे खूब पढ़े गए और वैश्विक स्तर पर इन पर नए शोध कार्यों की संभावना को बल मिला। पारिवारिक और सामाजिक संबंधों पर कोरोना काल के प्रभाव को लेकर समाज विज्ञान में नई अकादमिक बहसों और मान्यताओं/संकल्पों इत्यादि की चर्चा जोर पकड़ने लगी। कई अनुपयोगी और बोझ बन चुकी सामाजिक मान्यताओं और परंपराओं का अंत हो गया, जिसे साहित्य की अनेक विधाओं के माध्यम से लेखकों, चिंतकों ने सामने भी लाया। शिक्षक और विद्यार्थी अधिक प्रयोगधर्मी हुए। तकनीक के माध्यम से 'टीचिंग टूल्स' का प्रयोग बढ़ा। शिक्षण-प्रशिक्षण सामग्री का 'इनपुट' और 'आउटपुट' दोनों बढ़ा। मौलिकता और कॉपीराइट को लेकर भी नए सिरे से अकादमिक गतिविधियों की शुरुआत हुई। शुद्धतावाद को किनारे करके तमाम भारतीय भाषाओं ने दूसरी भाषा के कई शब्दों को आत्मसात् किया। फिर इन शब्दों का भारतीयकरण होते हुए उसके कई रूप और अर्थ विकसित होने लगे।

गोपनीय समूह भाषाओं और समूहगत आपराधिक भाषाओं में कोरोना काल के कई शब्दों का उपयोग बढ़ा, जो अध्ययन और शोध की एक नई दिशा हो सकती है। सरकारी नीतियों और योजनाओं में आमूल-चूल परिवर्तन हुए, जो भविष्य की राजनीति और अर्थव्यवस्था के परिप्रेक्ष्य में किए गए। इनकी गंभीर और व्यापक चर्चा अर्थशास्त्र और वाणिज्य के क्षेत्र में शुरू हुई है।

वैश्विक राजनीति की दशा और दिशा दोनों में बड़े व्यापक बदलावों की चर्चा भी राजनीतिशास्त्र के नए अकादमिक विषय बने। भविष्य में शिक्षक और शिक्षण संस्थानों की स्थिति और उनकी भूमिका को लेकर भी गंभीर चर्चाएँ शुरू हुईं। देश में परीक्षा प्रणाली में सुधार और बदलाव दोनों को लेकर चर्चा तेज हुई। कोविड-१९ के विभिन्न पक्षों पर शोध के लिए सरकारी, गैर-सरकारी संगठनों/संस्थानों द्वारा आवेदन मँगाए गए। बड़े स्तर पर अकादमिक संस्थानों में आपसी तालमेल बढ़ा। अंतर्विषयी संगोष्ठियों एवं शोध कार्यों को अधिक मुखर होने का मौका मिला।

ऐसे ही अनेक बदलावों को मैंने महसूस किया। निश्चित ही यह सब तुमने भी महसूस किया होगा। तुम जीवन में हमेशा सकारात्मक रहे। बड़ी-से-बड़ी मुसीबत का तुमने साहस से सामना किया है। तुम्हारी अकादमिक गतिविधियों की जानकारी मुझे मिलती रहती है। हम सभी को तुम पर गर्व है। निश्चित तौर पर तुमने खूब कविताएँ और कहानियाँ लिखी और पढ़ी होंगी। शोध कार्यों और उनके विषयों के चयन में तो तुम्हारा जवाब नहीं। डटकर काम करो और खूब नाम करो। खुश रहो, आगे बढ़ो।'

भाईसाहब का इ-मेल पढ़कर रोना आ गया। इतनी सारी सकारात्मक बातें वे सिर्फ मेरी निराशा को दूर करने के लिए लिख गए, अन्यथा भाईसाहब कभी दो पंक्ति से अधिक नहीं लिखते। मुझे ग्लानि महसूस हुई। मैंने अनजाने में ही उन्हें दु:खी किया, मुझे पाप पड़ेगा। ऐसा नहीं है कि वे इस विकट परिस्थिति में भी जो सकारात्मकता दिखाना चाह रहे थे, उसे मैं नहीं समझ पा रहा था। समस्या यह थी कि दूसरा पक्ष मेरे ऊपर हावी हो गया था। लेकिन भाईसाहब की बातों से बल मिला और मैं कुछ और बातें सोचने लगा। सिर फिर भारी लगा तो सोचा, चाय के साथ सिर दर्द की एक

गोली खा लूँ। वैसे भी आज नींद का सारा टाइम टेबल गड़बड़ा गया था।

चाय बनाते-बनाते अचानक बाबूलाल की याद आ गई। महाविद्यालय में चपरासी बाबूलाल ने बताया था कि मोतिहारी, जहाँ कि उसका गाँव है, वहाँ औरतें नौ लड्डू के साथ कोरोना माई की पूजा कर रही हैं। उसकी बीबी ने भी पूजा की। गाँव के खेत में सारी औरतें नहा-धोकर कोरोना माई का गीत गाते हुए पहुँचती हैं और जमीन में थोड़ा गड्ढा बनाकर फूल, अक्षत और नौ लड्डू चढ़ाकर माई से रक्षा की प्रार्थना करती हैं। उस गाँव की अन्य औरतों की तरह बाबूलाल की पत्नी का भी पूरा विश्वास है कि इससे कोरोना माई का प्रकोप शांत हो जाएगा। यह विश्वास उस शाश्वत और सनातन की न्याय व्यवस्था पर विश्वास का भी प्रतीक है, जो हमें पश्चिमी समाज की तरह हिंसक होने से रोकता है। चूँकि विश्वास बना हुआ है, इसलिए यह समाज वर्तमान त्रासदी पर पश्चिम की तरह हिंसक नहीं हुआ है, अन्यथा रंगभेद के विरोध में पूरा अमेरिका किस तरह जला और संभ्रांत लोगों द्वारा लूटा गया, यह हम सभी ने देखा। इस घटना के स्मरण ने मुझे एक आंतरिक शक्ति और संतोष दिया। यह बहुत विशेष तरह की अनुभूति थी।

लोक विश्वास और आस्था की ऐसी तसवीरें कुछ पल सोचने के लिए मजबूर जरूर कर देती हैं। कोरोना का भी अंतत: माई बन जाना हमारी लंबी सांस्कृतिक एवं लोक-परंपरा का ही तो हिस्सा है। इसी परंपरा में हम शीतला माई, छठी माई, दुरदुरिया माई और संतोषी माता तक से परिचित हुए हैं। मुझे याद है कि माँ मुझे गोद में लिये कई किलोमीटर पैदल झाड़-फूँक कराने ले जाती थी। क्या माँ मूर्ख थी? नहीं, बिल्कुल नहीं। वह माँ थी, इसलिए वह ऐसा कर पाती थी। यह बात शहरों की कतिपय तथाकथित पढ़ी-लिखी और संभ्रांत उन माताओं को कभी समझ में नहीं आएगी, जो सिर्फ अपनी शारीरिक सुंदरता बनाए रखने के लिए अपने बच्चों को स्तनपान नहीं करातीं। यहाँ तक कि बच्चे को जन्म देने की पीड़ा से बचने के लिए 'किराए की कोख' तलाशती हैं। मुझे खुशी है कि मेरी माँ ऐसी नहीं थी। वह अनपढ़ जरूर थी, लेकिन ममता से भरी हुई थी।

चाय पक चुकी थी। सेराडॉन की गोली के साथ पहली चुस्की ली तो जहन में पलायन करते प्रवासी मजदूर भी अनायास ही आ गए। आखिर इसी त्रासदी में पूरे देश से पलायन करने को मजबूर मजदूर भी दिखाई दिए। हजारों किलोमीटर की लंबी यात्रा, भूखे-प्यासे और पुलिस की लठियों को खाते हुए लाखों लोगों ने पूरी की। इन्हीं यात्राओं के दौरान गर्भवती माताओं ने 'लॉकडाउन यादव', 'क्वारंटाइन', 'करोना' और 'सैनिटाइजर' नामक बच्चों को जन्म दिया। इन गुदड़ी के लालों को उनके माँ-बाप इन नामों के साथ याद रखना चाहते हैं। वे इस त्रासद समय को भी अपनी उत्सवधर्मिता का रंग देना चाहते हैं। यही बच्चे जब बड़े होंगे तो इन्हें पुकारने भर से वे अपने अतीत को कई-कई बार दुहराएँगे। हताशा और अभाव के बीच अपने पुरुषार्थ पर गर्व करते हुए सजल नैनों से खीस निपोरेंगे। आखिर 'लॉकडाउन यादव', 'क्वारंटाइन', 'करोना' और 'सैनिटाइजर' का बाप बनना सबके बूते का नहीं है। पश्चिम के तो बिल्कुल भी नहीं।

'लॉकडाउन' और 'करोना' का बाप अपने बड़े होते बच्चों को देखकर खुश होगा, तो उनकी किसी गलती पर डाँट लगाते हुए ठेठ अवधी में कहेगा, "करोना ससुर, तोहरे ढेर मस्ती चढ़े त लतियाई के कुल भूत उतार देब बच्चा! तोर बाप हई। जेतना कही ओतना सुनाकर···।" या कि वह कहेगा, "देख करोनवा, लॉकडाउन तोर बड़ा भाई है। ओकरा से अड़ी बाजी मत किया कर···।"

यह सब सोचते हुए मन थोड़ा हलका हुआ और नींद सी महसूस हुई। रात के बारह बज चुके हैं और अब तेज नींद आ रही थी। मोबाइल की घंटी बजी तो आँख खुल गई। सुबह के दस बज चुके थे। इतिहास विभाग के श्रीवास्तवजी का फोन आया था। उनकी माताजी का अलीगढ़ में देहांत हो गया। श्रीवास्तवजी अपने माँ-बाप के इकलौते पुत्र हैं। इस लॉकडाउन की वजह से वे माँ की अंतिम क्रिया में चाहकर भी नहीं पहुँच सकते थे। बेचारे सिर पटककर रह गए, कहीं कोई सुनवाई नहीं। वह दुकानवाले शुक्लाजी, उनका बेटा अमेरिका में था। अच्छा कमा रहा था। इधर नौकरी से हाथ धो बैठा, ऊपर से कोरोना की चपेट में आने से मौत से जूझ रहा है। माँ-बाप का रो-रोकर बुरा हाल है, लेकिन क्या करें? उसके पास भी नहीं जा सकते। मेरे दो विद्यार्थी इसी कोरोना की वजह से अब नहीं रहे। ऐसी खबरें सारी सकारात्मकता की ऐसी-की-तैसी कर देती हैं। कल जितना निश्चिंत हुआ था, आज सुबह की खबरों ने फिर उदास कर दिया।

इतने में फिर जहन में लॉकडाउन यादव का बाप आता है। वह लॉकडाउन से कह रहा है, "रोज-रोज तोहका न समझाउब। अब काम करइ में तई तनिकौ अड़ीबाजी करबे, त तोर हांथ गोड़ तोरि के बइठाई देब। जब तक भगवान् हाथ गोड़ सलामत रखले बाटें, तब तक काम करइ क बा, बस।" इस खयाल ने मुझे भी उत्साहित किया। और मैंने भी लॉकडाउन यादव के पिताजी की वह बात गाँठ बाँध ली कि "···जब तक भगवान् हाथ गोड़ सलामत रखले बाटें, तब तक काम करइ क बा, बस।"

साअ

हिंदी विभाग
के.एम. अग्रवाल महाविद्यालय, कल्याण (महाराष्ट्र)
दूरभाष : ९०८२५५६६८२

टीकों पर टिका कोरोना

● शुभ्रता मिश्रा

विश्व इन दिनों कोरोना महामारी की विभीषिका के दौर से गुजर रहा है। इस महामारी को फैलानेवाला सार्स-कोव-२ नामक विषाणु संक्रमण रोग फैलानेवाले कोरोना वायरस समूह के बिल्कुल नए सदस्य के रुप में जीवविज्ञानियों के समक्ष एक नई चुनौती बनकर आया है। इसकी पहचान सर्वप्रथम सन् २०१९ में वुहान, हूबेई, चीन में हुई थी, जहाँ से इसने कोरोना बीमारी को फैलाना आरंभ किया था और देखते-ही-देखते इस बीमारी ने एक वैश्विक महामारी का रुप ले लिया। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने कोरोना वायरस की महामारी को नया नाम कोविड-१९ दिया है। वर्ष २०२० के लगभग आठ महीनों में कोरोना वायरस रूपी अदृश्य सूक्ष्मजीवी महादानव ने दुनिया के लगभग ढाई करोड़ लोगों को शिकार ही नहीं किया है, वरन् लगभग आठ लाख लोगों को मौत की नींद सुला दिया है। अब यह बात पूरी तरह स्पष्ट हो गई है कि सार्स-कोव-२ विषाणु श्वसन तंत्र में संक्रमण उत्पन्न करता है और मानव से मानव में फैलता है। चूँकि यह एक नया विषाणु है, अत: मानव प्रतिरोध क्षमता इससे लड़ने में पूर्वप्रशिक्षित नहीं है। यही कारण है कि आज समस्त वैज्ञानिक बिरादरी इसके उपचार की दिशा में शोधरत है। इस हेतु किए जा रहे औषधीय प्रयासों की दो श्रेणियाँ हैं, जिसमें एक है इसकी दवा बनाना और दूसरा, इसका वैक्सीन या टीका तैयार करना।

कोविड-१९ की दवा फिलहाल सिर्फ इसी बीमारी के लिए उपलब्ध नहीं है, लेकिन रोग के लक्षणों के आधार पर इससे मिलती-जुलती बीमारियों के लिए पूर्वप्रयुक्त विभिन्न एलोपैथिक, होम्योपैथिक और आयुर्वेदिक दवाओं का उपयोग अस्थायी उपचार के तौर पर किया जा रहा है। विश्व स्तर पर इस तरह की दवाओं में मलेरिया और कुछ अन्य बीमारियों के इलाज में इस्तेमाल होनेवाली हाइड्रॉक्सीक्लोरोक्वीन, एंटी वायरल दवाएँ, जैसे—फेविपिरावीर, रेमडिसविर और बोलैक्सेविर, एंटी-इंफ्लेमेटरी दवा पैरासिटामोल, एच.आई.वी. दवा लोपिनेविर और रिटोनेविर आदि शामिल हैं। भारत के पतंजलि समूह ने भी कोरोनिल और श्वासरि नामक दो दवाओं के निर्माण के दावे किए, जिन्हें बाद में मात्र प्रतिरक्षा तंत्र को सशक्त करनेवाली दवाएँ माना गया। भारत की ही नहीं, विश्व की अनगिनत दवा निर्माण कंपनियाँ कोरोना की दवा निर्माण को लेकर अपने अपने ढंग से दावे करती आ रही हैं। लेकिन यह बिल्कुल सुनिश्चित है कि इन सभी दवाओं से कोरोना का स्थायी उपचार नहीं किया जा सकता है। अत: अन्य विषाणु-जनित वैश्विक महामारियों, जैसे चेचक, पोलियो आदि की टीकों द्वारा रोकथाम की तरह ही कोरोना महामारी का एकमात्र स्थायी इलाज भी वैक्सीन यानी टीका विकसित करना ही हो सकता है।

विज्ञान के विविध विषयों पर हिंदी और अंग्रेजी में २५ से अधिक पुस्तकें प्रकाशित। विज्ञान तथा सामयिक विषयों पर ३५० से अधिक लेख विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। शोध एवं पुस्तक लेखन हेतु अनेक पुरस्कारों से सम्मानित तथा आकाशवाणी और दूरदर्शन पर अनेक कार्यक्रम प्रसारित हुए।

हालाँकि वैक्सीन या टीका भी एक प्रकार की दवा ही होती है, जो शरीर के रोग प्रतिरक्षा तंत्र की क्षमता में वृद्धि करती है और रोग विशेष से लड़ने में सहायता करती है। वास्तव में, वैक्सीन को किसी भी बीमारी से बचने के सबसे प्रभावी एवं सुरक्षित विकल्प की संज्ञा दी जा सकती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार सभी आयु वर्गों में प्रतिवर्ष बीस से तीस लाख मौतें सिर्फ टीकाकरण के दम पर टाली जाती हैं। वर्तमान में पूरा विश्व टीकाकरण द्वारा ही खसरा, पोलियो, टेटनस, डिप्थीरिया, मेनिनजाइटिस, इंफ्लूएंजा, टाइफाइड जैसी पच्चीस से अधिक प्राणघातक बीमारियों से बचाव कर रहा है। वैक्सीन से ही शरीर का प्रतिरक्षा तंत्र बैक्टीरिया या वायरस सहित कई दूसरे रोगजनकों को पहचानने तथा उनके लिए टी-लिंफोसाइट्स और एंटीबॉडी का उत्पादन करने के लिए उत्तेजित है। अधिकांश वैक्सीन या टीके इंजेक्शन के माध्यम से दिए जाते हैं, लेकिन कुछ मौखिक या नाक के माध्यम से भी दिए जाते हैं।

हिंदी में एक मुहावरा है, जितने मुँह उतनी बातें। वर्तमान कोरोना महामारी के संकटकाल में इसके वैक्सीन को बनाने की चर्चाओं में यह मुहावरा शत-प्रतिशत सही बैठ रहा है। भारत से लेकर रूस, अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, जापान आदि तक दुनिया के विभिन्न देश कोरोना वैक्सीन तैयार कर लेने के अपने दावों में जुटे हुए हैं। इसी बीच ११ अगस्त, २०२० को रूस के राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन की घोषणा ने दुनिया को अचंभित

कर दिया कि रुसी वैज्ञानिकों ने कोरोना वायरस के विरुद्ध काम करनेवाला स्पूतनिक वी नामक सफल और प्रभावी वैक्सीन तैयार कर लिया है। रूस के गेमली इंस्टीट्यूट ऑफ एपिडेमियोलॉजी एंड माइक्रोबायोलॉजी और रूसी रक्षा मंत्रालय ने मिलकर स्पूतनिक वी वैक्सीन को विकसित किया है। रूस का दावा है कि सितंबर में यह वैक्सीन आम लोगों को मिलना शुरू भी हो जाएगा और अक्तूबर में पूरे देश में टीकाकरण अभियान चलाया जाएगा।

हालाँकि रूस ने कोरोना वैक्सीन विकसित करने का जो त्वरित दावा किया है, उसको लेकर दुनिया भर में सवाल उठ रहे हैं। वैज्ञानिक जगत् में चिंता भी है, क्योंकि विश्व स्वास्थ्य संगठन का कहना है कि उसके पास अभी तक रूस के द्वारा विकसित किए गए कोरोना वैक्सीन के बारे में कोई जानकारी नहीं है, जिसका वह मूल्यांकन कर सके। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अंतर्गत जिन छह वैक्सीन का तीसरे चरण का परीक्षण चल रहा है, उनमें रूस का वैक्सीन शामिल नहीं है। इस कारण विश्व के दूसरे कई देश रूस के घोषित वैक्सीन को लेकर किंचित् आशंकित भी नजर आ रहे हैं।

वहीं दूसरी ओर भारत के ७४वें स्वतंत्रता दिवस पर लाल किले से अपने संबोधन में तीन भारतीय कोरोना वैक्सीनों पर चल रहे कामों का जिक्र करके प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने भी देशवासियों सहित दुनियावालों को भी सोचने पर मजबूर कर दिया है। हालाँकि यह पूरी तरह से सोच और मानसिकता के अंतर पर निर्भर करता है कि कौन इस प्राचीर कोरोना घोषणा को किस दृष्टि से देखता और सोचता है। जिन तीन कोविड टीकों का संकेत प्रधानमंत्री ने दिया है, वास्तव में वे तीन टीके 'कोवैक्सीन', 'जीकोव-डी' और 'कोविशील्ड' नामक कोरोना वैक्सीन हैं।

भारत में कोरोना वायरस वैक्सीन को लेकर दो उच्चस्तरीय समितियाँ बनाई गई हैं। प्रधानमंत्री के प्रमुख वैज्ञानिक सलाहकार डॉ. के. विजयराघवन की अध्यक्षता वाली पहली समिति को भारतीय कोविड-वैक्सीन के विकास पर नजर रखने और साथ ही भारतीय निर्माताओं को दी गईं विदेशी वैक्सीन की प्रगति पर निगरानी रखने का उत्तरदायित्व सौंपा गया है। नीति आयोग के सदस्य डॉ. वी.के. पॉल के नेतृत्व वाली दूसरी समिति का काम होगा कि जैसे ही कोई कोरोना वैक्सीन बनकर तैयार होती है, तो उसका स्टॉक और कोल्ड-चेन तैयार करे और वैक्सीन को लोगों तक पहुँचाए।

भारत की हैदराबाद की कंपनी भारत बायोटेक ने भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद् (आई.सी.एम.आर.) और राष्ट्रीय विषाणु विज्ञान संस्थान (एन.आई.वी.) के साथ मिलकर पहला स्वदेशी 'कोवैक्सीन' नामक कोविड-१९ टीका विकसित करने में सफलता पाई है। इसी तरह दूसरी कंपनी जाइडस कैडिला ने भी अपने अहमदाबाद स्थित वैक्सीन टेक्नोलॉजी सेंटर में 'जीकोव-डी' नामक कोविड टीके का प्रमुख चरण स्वदेशी स्तर पर विकसित किया है। इन दोनों स्वदेशी कोरोना टीकों को भारतीय औषधि महानियंत्रक (डी.सी.जी.आई.) तथा केंद्रीय औषधि मानक नियंत्रण संगठन (सी.एस.सी.ओ.) द्वारा मानव पर परीक्षण करने की अनुमति मिल गई है और मनुष्यों पर इनके परीक्षण चल रहे हैं। इसके अलावा, विश्व में वैक्सीन का सबसे बड़ा निर्माता माना जानेवाला भारत के पुणे में स्थित सीरम इंस्टीट्यूट ऑफ इंडिया ने ब्रिटेन की यूनिवर्सिटी ऑफ ऑक्सफोर्ड और स्वीडिश-ब्रिटिश फार्मा एस्ट्राजेनेका कंपनी के साथ निम्न और मध्यम आयवाले देशों के लिए 'कोविशील्ड' नामक कोविड-१९ वैक्सीन के उत्पादन करने हेतु साझेदारी की है। सीरम इंस्टीट्यूट ऑफ इंडिया एस्ट्राजेनेका कंपनी के साथ मिलकर देशभर के दस केंद्रों पर वैक्सीन के दूसरे और तीसरे चरणों के नैदानिक परीक्षण करेगा। हाल ही में भारतीय औषधि महानियंत्रक (डी.सी.जी.आई.) द्वारा इस संस्थान को भी भारत में कोविशील्ड के द्वितीय और तृतीय चरण के नैदानिक परीक्षण करने के लिए स्वीकृति दी गई है। 'कोविशील्ड' नामक कोविड-१९ वैक्सीन, जिसे तकनीकी रूप से ए.जेड.डी.-१२२२ या सी.एच.ए.डी.ओ.एक्स.१एन.कोव-१९ भी कहा जाता है, का निर्माण यूनिवर्सिटी ऑफ ऑक्सफोर्ड और एस्ट्राजेनेका कंपनी ने मिलकर किया है। इस वैक्सीन को कोरोना वायरस के स्पाइक प्रोटीन की पहचान करने में सक्षम माना जा रहा है।

भारत में कोरोना वायरस वैक्सीन को लेकर दो उच्चस्तरीय समितियाँ बनाई गई हैं। प्रधानमंत्री के प्रमुख वैज्ञानिक सलाहकार डॉ. के. विजयराघवन की अध्यक्षता वाली पहली समिति को भारतीय कोविड-वैक्सीन के विकास पर नजर रखने और साथ ही भारतीय निर्माताओं को दी गईं विदेशी वैक्सीन की प्रगति पर निगरानी रखने का उत्तरदायित्व सौंपा गया है। नीति आयोग के सदस्य डॉ. वी.के. पॉल के नेतृत्व वाली दूसरी समिति का काम होगा कि जैसे ही कोई कोरोना वैक्सीन बनकर तैयार होती है, तो उसका स्टॉक और कोल्ड-चेन तैयार करे और वैक्सीन को लोगों तक पहुँचाए। साथ ही दूसरी समिति यह भी तय करेगी कि वैक्सीन को कहाँ लगाया जाएगा।

देश और विश्व स्तर पर टीका संबंधी इन आधारभूत सभी तैयारियों के बावजूद भी इस समय सबसे बड़ा सच कोरोना वैक्सीन को लेकर सिर्फ और सिर्फ यह है कि कोरोना महामारी के वायरस पर काबू पाने के लिए वैक्सीन बनाने की विश्वस्तरीय प्रक्रियाएँ और इसके लिए अपनाए जा रहे विभिन्न रास्तों को लेकर पूरी दुनिया के लोग भ्रमित हैं कि कौन कितने गहरे पानी में है, अलबत्ता उनके सच बोलने पर किसी को संदेह तनिक भी नहीं है। क्योंकि पिछली शताब्दियों में हुईं महामारियों के टीकों के इतिहास से लोग इस बात से आश्वस्त हैं कि चेचक, पोलियो, टिटनेस, रेबिज और हैपिटाइटिस जैसी बीमारियों के नियंत्रण के लिए टीकों को विकसित करने में वैज्ञानिक सफल हुए हैं, तो कोरोना का टीका बनना भी सुनिश्चित ही है। संशय की स्थिति केवल इसलिए बनी हुई है, क्योंकि दुनिया के देशों के इतने कम समय में कोरोना वैक्सीन तैयार कर लेने के प्रस्तुत दावों के विश्वास और अविश्वास के बीच हम झूल रहे हैं। पुराने टीकों की विकास प्रक्रियाओं ने यही दरशाया है कि किसी भी बीमारी का वैक्सीन विकसित करने में

सालोसाल लग जाते हैं, यहाँ तक कि कई बार दशकों में टीके तैयार हो पाते हैं। इन सभी को दृष्टिगत रखते हुए महज कुछ महीनों में कोरोना महामारी का टीका बनकर तैयार होने की बात आसानी से स्वीकार कर पाने में सभी को हिचक हो रही है।

लेकिन हैरान होने की बात इसलिए नहीं है, क्योंकि वैज्ञानिक तकनीकियों ने वैक्सीन निर्माण तकनीकियों को भी परिष्कृत किया है। एक समय था, जब पारंपरिक रुप से टीका बनाने के लिए स्वयं मूल बैक्टीरिया अथवा वायरस का उपयोग किया जाता था, परंतु कोरोना महामारी के वैक्सीन के लिए शोधकर्ता विषाणु सार्स-कोव-२ के आनुवंशिक अनुक्रमण की जानकारी के आधार पर उसके आनुवंशिक कोड के टुकड़ों का उपयोग शरीर में इंजेक्ट करने के लिए कर रहे हैं, जो अंदर प्रवेश के बाद वायरल प्रोटीन के बिट्स का उत्पादन शुरू कर देते हैं और इस तरह प्रतिरक्षा तंत्र रोग से लड़ना सीख सकता है। यह बिल्कुल सही बात है कि समय के साथ साथ टीके की पीढ़ियाँ भी स्मार्ट होती आई हैं। इस समय टीके की तीसरी पीढ़ी का युग चल रहा है और कोरोना महामारी के लिए जो वैक्सीन तैयार किया जा रहा है, उसमें उसके आर.एन.ए. को लिपिड नैनोकणों से पैक करके उपयोग किए जाने की बात सामने आ रही है। वैक्सीन की पहली पीढ़ी में रोगकारक विषाणु या जीवाणु को जीवित या मृत अवस्था में पूरा-का-पूरा उपयोग किया जाता था, जैसे पोलियो, हेपेटाइटस ए, रेबीज, इंफ्लुएंजा, रेबुला, टायफाइड, मीजल्स आदि। दूसरी पीढ़ी में रोगाणु के उस भाग विशेष का उपयोग किया जाता रहा है, जो प्रतिरक्षा तंत्र को रोग के प्रति सक्रिय करने के लिए प्रेरित करता है, जैसे टिटनेस, डिप्थीरिया, हेपेटाइटस बी। तीसरी पीढ़ी में रोगाणु के आनुवंशिक पदार्थ का उपयोग किया जाता है, जैसे इबोला आर.वी. एस.वी.-जेड.ई.बी.ओ.वी. (वैक्सीन) रिकंबिनेंट वेक्टर से बना है। इस तरह टीका निर्माण की तीसरी पीढ़ी को आनुवंशिक इंजीनियरिंग से बनाए जाने वले टीके की श्रेणी में रख सकते हैं। यद्यपि इस तरह आनुवंशिक इंजीनियरिंग से तैयार किए गए टीकों पर प्रयोगशालाओं में तो कार्य किए जा रहे हैं, तथापि यह भी सत्य है कि अब तक ऐसे किसी भी टीके को मानव उपयोग के लिए लाइसेंस नहीं दिया गया है।

सामान्यत: वैक्सीन विकसित करने की प्रक्रिया में एक मानक प्रक्रिया का अनुसरण किया जाता है। इसमें सबसे पहले अनुसंधान प्रक्रिया होती है, जिसके बाद नियमन और निगरानी आती हैं। अनुसंधान चरण में प्रयोगशाला में वैक्सीन विकास पर शोध किया जाता है, जिसमें सामान्य रूप से दो से चार साल तक लग जाते हैं। इस दौरान शोधरत वैज्ञानिक वैक्सीन के निर्माण के इस प्रथम चरण में प्राकृतिक और कृत्रिम एंटीजन की पहचान करके उनका निर्माण करते हैं, जिसका उपयोग किसी प्रतिरक्षी प्रतिक्रिया को प्रेरित करने के लिए किया जाता है। इसी चरण में रोगाणुओं की वृद्धि और उनका संग्रह या उस रोगाणु से किसी रिकंबिनेंट प्रोटीन अर्थात् ऐसी प्रोटीन, जिसे डी.एन.ए. तकनीक से बनाया जाता है, का निर्माण करना भी शामिल होता है। कई विषाणु जनित टीकों के लिए इस प्रक्रिया का आरंभ एक विशिष्ट प्रकार के विषाणु की अल्प मात्रा के साथ किया जाता है, जिसकी कोशिकाओं में वृद्धि कराई जा सकती है। इसके बाद चिकित्सकीय पूर्व चरण आता है, जिसमें कोशिका संवर्धन विधि द्वारा जंतु परीक्षण करके वैक्सीन की सुरक्षा सुनिश्चित की जाती है। टीका निर्माण के विकास के क्रम में पहले दूसरे जंतुओं, जैसे चूहों, खरगोशों, बंदरों, चिंपांजी इत्यादि पर टीकों के प्रयोग किए जाते हैं। इसके अतिरिक्त भी कई प्रक्रियाएँ अपनाई जाती हैं, जिसकी जटिलता उतनी ही होती है, जितना इसमें समय लगता है। इस तरह किसी भी वैक्सीन के निर्माण की प्रक्रिया में वैज्ञानिकों को अनेक असफलताओं का सामना भी करना पड़ता है, फिर भी यह कार्य अनवरत रूप से चलता रहता है।

हालाँकि उन रोगों के वैक्सीन को विकसित करना अपेक्षाकृत आसान माना जाता है, जिनके रोगाणुओं के स्ट्रेन के बारे में वैज्ञानिकों के पास पहले से ही विस्तृत जानकारी उपलब्ध होती है। कोविड-१९ के कोरोना वायरस का स्ट्रेन विश्व के सभी देशों के शोधकर्ताओं के लिए बिल्कुल अनजाना विषय था, इसलिए इसका टीका विकसित करना इतना आसान काम नहीं है। फलत: सार्स-कोव-२ कोरोना वायरस के स्ट्रेन के बारे में शोधरत वैज्ञानिकों की अनिभज्ञता एंटी कोरोना वैक्सीन के निर्माण की सबसे बड़ी बाधा मानी जा रही थी। हालाँकि विश्व स्तर पर कोरोना के वैक्सीन को तैयार कर लेने के दावों की ऑनलाइन अद्यतन हो रही सूचनाओं तथा प्रतिपल के कोरोना संबंधी समाचारों और शोध-पत्रों को संदर्भित करने पर यह स्पष्ट हो गया है कि अब तक पूरी दुनिया में लगभग डेढ़ सौ दावेदार सामने आए हैं, जिनका मानना है कि उन्होंने कोरोना महामारी के वैक्सीन को बनाने के विभिन्न नैदानिक चरणों में सफलता पा ली है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार दुनिया भर में कोविड-१९ वैक्सीन को लेकर २०० से अधिक परियोजनाएँ चल रही हैं, जिनमें २१ से अधिक कोरोना वैक्सीन नैदानिक परीक्षणों के चरण में हैं।

सबसे पहले कोरोना महामारी के जन्मदाता देश चीन पर नजर डालें तो उसके एडी५-एनकोव नामक पहले कोरोना वायरस वैक्सीन को पेटेंट मिल गया है। इस पेटेंट के लिए १८ मार्च, २०२० को अनुरोध किया गया था और ११ अगस्त, २०२० को इसकी मंजूरी मिल गई है। चीन के एडी५-एनकोव वैक्सीन को उसकी सेना की मेजर जनरल चेन वेई और केनसिनो बायलॉजिक्स कंपनी के सहयोग से विकसित किया गया है। वहीं चीन की एक और बीजिंग स्थित बायोफार्मास्युटिकल कंपनी सिनोवैक बायोटेक ने कोरोनावैक नामक टीका विकसित किया है। उसका दावा है कि इस टीके के मानव परीक्षण परिणाम सुरक्षित और सकारात्मक आए हैं। सिनोवैक बायोटेक के अनुसार कोरोनावैक टीके का परीक्षण १८ से लेकर ५९ वर्ष तक के लगभग साढ़े सात सौ स्वस्थ लोगों पर दो चरणों में किया गया है। अब यह दवा कंपनी ब्राजील के साथ अपने तीसरे चरण के परीक्षण कर रही है। चीन के विशेषज्ञों का दावा है कि चीन सुरक्षित और प्रभावी तरीके से बहुत तेजी से कोरोना वायरस वैक्सीन बनाने की दिशा में आगे बढ़ रहा है।

कोरोना महामारी से सर्वाधिक प्रभावित अमेरिका भी टीका बनाने में सबसे आगे है। अमेरिकी दवा कंपनी इनोवियो ने अपने नए

आई.एन.ओ.-४८०० नामक टीके का मनुष्यों पर सफल चिकित्सकीय परीक्षण कर लिया है। लगभग ४० लोगों पर किए गए इस टीके का प्रभाव ९४ प्रतिशत तक सफल रहा है। मैसाचुसेट्स स्थित एक और अमेरिकी जैव प्रौद्योगिकी कंपनी 'मॉडर्ना' ने नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एलर्जी एंड इंफेक्शियस डिजीज के साथ मिलकर मैसेंजर आर.एन.ए. आधारित एम.आर.एन.ए.-१२७३ नामक वैक्सीन विकसित किया है, लोगों में उसके प्रारंभिक परीक्षण के परिणाम बेहद आशाजनक रहे हैं। 'मॉडर्ना' का दावा है कि जिन लोगों को यह वैक्सीन दी गई, उसके बाद उनके शरीर में बनी एंटीबॉडीज के प्रयोगशाला में किए गए परीक्षणों से यह पता चला कि वे कोरोना विषाणु की प्रतिकृति बनाने से रोकने में सक्षम हैं। इसी तरह का मैसेंजर आर.एन.ए. आधारित बी.एन.टी.-१६२ नामक कोरोना वैक्सीन अमेरिकी फाइजर फार्मास्युटिकल कंपनी और उसकी जर्मन सहयोगी कंपनी बायोएनटेक ने भी तैयार किया है। इस टीके के भी नैदानिक परीक्षण अमेरिका और यूरोप में शुरू हो गए हैं। जॉनसन एंड जॉनसन कंपनी अपने वैक्सीन को विकसित करने के लिए अमेरिका के बायोमेडिकल एडवांस्ड रिसर्च एंड डवलपमेंट अथॉरिटी के साथ सहयोग कर रही है।

इस तरह देखा जाए तो इस समय दुनिया की अलग-अलग दवा कंपनियाँ अपने-अपने साझेदारों के साथ मिलकर कोरोना से बचाव के लिए वैक्सीन विकसित कर रही हैं। आशा है कि वर्ष २०२० के अंत तक दुनिया के प्रमुख देश सुनिश्चित तौर पर को कोरोना का टीका तैयार कर लेंगे। इस तरह तैयार हुए कोरोना टीके के बड़े पैमाने पर उत्पादन की भी चुनौती विश्व के समक्ष आएगी। हालाँकि यह भी सत्य है कि भारत पहले से ही विश्व का सबसे बड़ा टीका उत्पादक देश है। अत: कोरोना के टीके के उत्पादन में भी भारत की भूमिका अग्रणी और महत्त्वपूर्ण होगी।

विश्व स्वास्थ्य संगठन का कहना है कि जितना संभव हो, उतने टीकों का मूल्यांकन करना महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह अनुमान नहीं लगा सकते हैं कि यह कितने व्यावहारिक साबित होंगे। इन सभी वैक्सीन आशाओं की सफलता की संभावना बढ़ाने के लिए सभी दावेदार देशों के टीकों का परीक्षण तब तक करना आवश्यक है, जब तक वे सभी चरणों में अच्छी तरह खरे नहीं उतर पाते। फिलहाल यही कह सकते हैं कि कोरोना से जीतने की हर आशा सिर्फ और सिर्फ इन्हीं टीकों की सफलता पर टिकी हुई है।

वास्को-द-गामा, गोवा
दूरभाष : ८९७५२४५०४२
shubhrataravi@gmail.com

कविता

चिंता करो मत

● आर.सी. शुक्ला

कुछ नहीं होगा
तुम्हारे सुयश को
चिंता करो मत
लौटकर अब
फिर न आऊँगा
तुम्हारे द्वार पर,
चिंता करो मत।

आजतक मैंने
छिपाया है बहुत कुछ
जो हुआ था कल
मध्य में मेरे तुम्हारे।

मैं अभी
परिचित नहीं हूँ
स्वाद से
छोटे अधर के।
छू नहीं पाया
तुम्हारी उँगलियाँ
एक डर से।
तुम कहीं मुझको
विलासी न समझ लो।
गीत जो
मैंने लिखे हैं,
याद में स्वर्णिम क्षण की
जो बिताए हैं
तुम्हारे साथ,
पढ़ न पाए व्यक्ति कोई
उस कथा को
जो लिखी थी
समय ने
मेरी तुम्हारी
सौंप दूँगा अग्नि को,
चिंता करो मत।

लौट जाऊँगा
उसी अंधी गली में
जिस जगह
हम तुम मिले थे,
शरद ऋतु के बाद
हृदय देने, शपथ लेने
तुम मेरा
विस्तार ही करती रहोगी
मैल मेरी वासना का
दृष्टि से धोती रहोगी।
मैं नहीं दोहराऊँगा
वह बात
जो तुमने कही थी
रेत की दीवार पर
बैठकर कल,
चिंता करो मत।

एम.आई.जी.-३३, रामगंगा बिहार, फेज-२,
मुरादाबाद-२४४१०५ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४११६८२७७७

देशभक्तों का तीर्थ : अंडमान-निकोबार

• नंदिनी कौशिक

हम सभी की जिंदगी में कुछ ऐसे पल या दिन अवश्य आते हैं, जो कभी भुलाए नहीं भूलते। वे हमारी सबसे खूबसूरत यादें बनकर ताउम्र हमारे साथ रहते हैं। मेरे जीवन में यादगार दिन तब आया, जब मैं अपने ताऊजी-ताईजी के साथ दिल्ली से २४७१ किलोमीटर दूर देशाभिमानियों के पावन तीर्थ अंडमान-निकोबार द्वीपसमूह की यात्रा पर गई।

मेरे ताऊजी श्री आनंद शर्मा अकसर धार्मिक स्थलों एवं देशभक्तों के तीर्थों के दर्शन के लिए जाते रहते हैं। मैं उस समय खुशी से उछल पड़ी, जब ताऊजी ने बताया कि इस बार वे और ताईजी हमारी आजादी के रणबाँकुरों के तीर्थ अंडमान-निकोबार की यात्रा पर जा रहे हैं और मैं भी उनके साथ जा रही हूँ। मैं बेहद खुश और अपने आपको खुशनसीब मान रही थी कि मैं पहली बार इतनी दूर वह तीर्थ देखने जा रही हूँ, जिसके बारे में अभी तक मैंने किताबों में पढ़ा था कि यहाँ अंग्रेज स्वतंत्रता सैनानियों को कठोर पाशविक यातनाएँ देते थे। यह स्थान उन दिनों कालापानी के नाम से कुख्यात था। मैं इसलिए भी अत्यधिक रोमांचित थी कि अंडमान-निकोबार समुद्र में स्थित है और मैं पहली बार हवाई यात्रा के साथ-साथ समुद्र यात्रा भी करूँगी। हवाई जहाज से दुनिया कैसी दिखती है, समुद्र कितना बड़ा होता है, इसकी कल्पना मात्र से मैं रोमांचित हो रही थी!

मैंने तुरंत बिना कोई देर किए पैकिंग शुरू कर दी। दिल्ली में नवंबर के महीने में ठंड होती है, पर मुझे पता चला कि इस समय अंडमान में गरमी का मौसम होता है, इसलिए मैंने सर्दी के साथ-साथ गरमी के कपड़े भी रख लिए। इस तरह पूरी तैयारी के साथ १८ नवंबर, २०१९ को हम रात को एक बजे इंदिरा गांधी अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे के लिए घर से निकले। हवाई जहाज में पहली बार बैठने के उत्साह की गरमाहट दिल्ली की ठिठुरन भरी रात पर भारी पड़ रही थी।

हमारे हवाई जहाज को भोर में ३-५० बजे उड़ान भरनी थी। हम टर्मिनल तीन पर थे। लगेज जमा करने के बाद चैकिंग हुई। जिसके बाद हम जहाज पर चढ़े। जब मैं प्लेन में चढ़ी तो बहुत उत्साहित थी, क्योंकि इससे पहले यह सब फिल्मों में ही देखा था। एयर होस्टेस ने हमारा

नवोदित रचनाकार। बाल्यकाल से लिखने का शौक। कई पत्र-पत्रिकाओं में कविता-आलेख आदि प्रकाशित। संप्रति दिल्ली विश्वविद्यालय के लक्ष्मीबाई कॉलेज में द्वितीय वर्ष की छात्रा। क्रिकेट खेल के प्रति विशेष रुझान।

अभिवादन किया। मैं अपनी सीट पर जा बैठी। मेरी सीट खिड़की के पासवाली थी। मुझे थोड़ा सा डर भी लग रहा था, इसलिए मैंने भगवान् का नाम लिया और टेकऑफ के समय तो आँखें बंद करके बैठ गई। अब हम हवा में थे। मैं लगातार खिड़की से बाहर झाँक रही थी। ऊपर से अपनी दिल्ली बहुत खूबसूरत दिख रही थी। मैंने इस यादगार पल को हमेशा के लिए यादगार बनाने के लिए फटाफट अपने मोबाइल के कैमरे में कैद कर लिया। ताऊजी ने बताया कि हमारी टिकट में रिफ्रेशमेंट भी शामिल है। थोड़ी देर बाद एयर हॉस्टेस ट्रॉली लेकर आई, हमने अपनी पसंद का कुछ-न-कुछ लिया।

मैं जब खिड़की से बाहर देख रही थी तो ऐसा लगा जैसे किसी ने प्लेन को उठाकर बादलों के ऊपर रख दिया हो। मेरे कानों में दर्द भी महसूस हुआ, जो कि टेक ऑफ करते समय हवा के दबाव के कारण होता है। वैसे भी मैं तो पहली बार प्लेन में बैठी थी। खैर, इतनी बड़ी खुशी के आगे यह दर्द कुछ भी नहीं था। अब हम कोलकाता पहुँच चुके थे। हमने अपना प्लेन बदला और पोर्ट ब्लेयर वाले प्लेन में बैठ गए। अब सिर्फ दो घंटे की बात थी। मैं कौतूहल से खिड़की से बाहर देखती रही। मैंने उगते हुए सूरज को देखा, जैसे बादलों के पीछे से झाँककर हमारा स्वागत कर रहा हो। यह बहुत ही अविस्मरणीय पल था। अब हमारा हवाई जहाज समंदर के ऊपर उड़ रहा था। नीचे सब ओर मैं पानी को देख रही थी। कुछ हरे-भरे द्वीप भी नजर आ रहे थे। नीचे का नजारा इतना सुंदर था कि मैं आश्चर्यचकित थी।

आखिरकार अब हम अपनी मंजिल तक आ पहुँचे। एयरपोर्ट से बाहर निकले तो एक टूरिस्ट बस हमारा इंतजार कर रही थी। ताऊजी ने

बताया कि बस, होटल सबकुछ बुक है। हम होटल एम.के. इंटरनेशनल पहुँचे और अपने कमरे में सामान रखा, फिर स्नान करके खुद को तरोताजा किया, तत्पश्चात् सबने नाश्ता किया। मैं तो बाहर घूमने के लिए बड़ी बेचैन थी। होटल के सामने बाँस व नारियल के बहुत लंबे-लंबे पेड़ झूम रहे थे। मुझे पेड़-पौधों से बहुत लगाव है, इसलिए मैं जाकर उनके गले लग गई। थोड़ी देर बाद हम घूमने निकले। होटल से थोड़ा ही आगे समुंदर है। अब हम लोग फुटपाथ पर टहल रहे थे। समंदर के तट पर बड़े-बड़े जहाज भी खड़े थे। मैंने देखा कि यहाँ पर बड़े पैमाने पर मछली उत्पादन होता है, जिसकी वजह से दुर्गंध भी बहुत थी। मैंने वहाँ पर मछली पकड़ने के जाल को बनते हुए भी देखा। कुछ देर बाद हम होटल लौट आए। खाना खाकर थोड़ी देर विश्राम किया। अच्छा, हमारे इस यात्री दल में कुल चौदह लोग थे।

सायं चार बजे हम सेल्यूलर जेल देखने गए। मैंने सबसे पहले जेल को नमन किया और नमन किया उन महान् देशभक्तों को, जिन्हें अंग्रेजों ने अमानुषिक यातनाएँ दीं और आजादी के उन परवानों ने इन यातनाओं को हँसते-हँसते झेलकर हमें आजादी दिलाई। अब हम आगे बढ़े, भीतर बने एक संग्रहालय में प्रवेश किया, वहाँ से हमें बहुत सी विशेष जानकारियाँ मिलीं। वहाँ पर हमारे महान् स्वतंत्रता सेनानियों की याद में एक अखंड ज्योति प्रज्वलित है। प्रतीत हो रहा था, मानो ज्योति की लाल ज्वाला में हमारे शहीदों का रक्त प्रवाहित हो रहा हो। हमने पूरी जेल का दौरा किया। जेल में जो कोठरियाँ बनी थीं, वे बहुत ही छोटी थीं और इस प्रकार निर्मित थीं कि कैदी को हरदम यातना ही महसूस हो, इसीलिए तो इन्हें काल कोठरी कहा जाता था। अब हम उस काल कोठरी के सामने थे, जिसको देखने की मुझे सबसे अधिक जिज्ञासा थी। जिसमें महान् क्रांतिकारी स्वातंत्र्यवीर विनायक दामोदर सावरकर को बंदी बनाकर रखा गया था। हम सबने उनकी पावन स्मृति को नमन किया। यह कोठरी सबसे अलग-थलग एक कोने में है। इसके ठीक सामने फाँसीघर तथा साथ में है यातनाघर, ऐसे दर्दनाक और खौफवाले माहौल में मजबूत से मजबूत कैदी भी कितने दिन टिका रह सकता था। कैदियों को खाना भी एक छोटी सी खिड़की से खिसकाया जाता था।

जेल का निर्माण एक बड़े से टावर के चारों ओर किया गया था, जिससे अंग्रेज अधिकारी सभी बंदियों पर नजर रखते थे। इस सेल्यूलर जेल का निर्माण भी कैदियों से करवाया गया था। पहले यहाँ पर खूँखार कैदी लाए जाते थे, पर १८५७ के बाद यहाँ क्रांतिकारियों को रखा जाने लगा। सावरकरजी जैसे राजनीतिक बंदियों एवं क्रांतिकारियों को खाने के बरतनों के रूप में जंग लगे कटोरे व छोटी थाली दी जाती थी। भोजन के नाम पर बहुत ही खराब खाना दिया जाता था, जिसमें थोड़ा-सा उबला चावल, रोटी और सब्जी परोसी जाती थी। रसोईघर के पास ही फाँसीघर था। जिसमें एक साथ तीन कैदियों को फाँसी दी जाती थी। इसके बाद हमने लाइट ऐंड साउंड शो देखा, जिसमें उन घटनाओं का सजीव चित्रण इस प्रकार किया गया है, जैसे सब हमारी आँखों के सामने घटित हो रहा हो। अंग्रेज जेलर की बर्बरता देख मुझे सिहरन हो रही थी।

इस जेल में स्वतंत्रता सैनानियों से कठोर-से-कठोर काम कराए जाते थे, जैसे—नारियल की गिरी निकालना, उसकी जटा से रस्सी बनाना तथा कोल्हू से नारियल व सरसों का तेल निकालने का काम दिया जाता था। जो आमतौर पर किसी आम मनुष्य की शारीरिक क्षमता से परे था। तेल निकालने के लिए देशभक्तों को बैल की तरह कोल्हू खींचना पड़ता था और जब तक दस पाउंड तेल न निकले, तब तक बैठने की इजाजत नहीं थी। बंदी निश्चित समय-सीमा के भीतर यह कार्य पूरा नहीं कर पाता था, तो उसे सजा के रूप में कोड़े मारना या लोहे के तिकोने फ्रेम पर लटकाकर बेंत लगाए जाते। इतना ही नहीं, एक सप्ताह की हथकड़ी से लेकर छह महीनों तक की कालकोठरी की सजा दी जाती थी। मैं यह सब देख-सुनकर स्तब्ध थी, अंग्रेजों के प्रति क्रोधित थी, लेकिन गौरवान्वित भी महसूस कर रही थी कि हम उन महान् पूर्वजों की संतति हैं, जिन्होंने घोर अमानवीय यातनाओं को हँसते-हँसते झेलकर हमें आजाद देश में साँस लेने का सुअवसर प्रदान किया। मैं कल्पना कर पा रही थी कि भारत माता की गुलामी की बेड़ियों को काटने के लिए किस प्रकार उन वीरों ने कालकोठरी में असहनीय कष्टों को झेलते हुए, अंग्रेजों के अत्याचारों का सामना करते हुए अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया।

अंडमान की सेल्यूलर जेल को कालापानी भी कहा जाता था। क्योंकि यह जेल पानी यानी चारों ओर समुद्र से घिरी है और काला इसलिए, क्योंकि यहाँ इतनी यातनाएँ दी जाती थीं कि बंदियों को हर समय काल नजर आए और इससे टूटकर वे आजादी के आंदोलन में भाग न लेकर अंग्रेजों की गुलामी स्वीकार कर लें। जेल में क्रूर जेलर का ऐसा आतंक और खौफ था, जो किसी भी साहसी व्यक्ति का मनोबल तोड़ देने के लिए काफी था। हम कितने अभागे हैं, जो नहीं जानते हैं कि आजादी हमें कितने बलिदानों के बाद मिली है। कितने देशवीरों ने हमारे भविष्य के लिए अपना वर्तमान देश पर न्योछावर कर दिया।

भीगे मन से हम जेल से बाहर आ गए। जेल के ही सामने एक सुंदर सा पार्क था, जिसके पास खाने-पीने के ठेले लगे थे। हमने वहाँ नारियल पानी पिया। थोड़ी देर बाद ही ठीक उसी प्रकार सूर्य अस्त हो

गया, जिस प्रकार हमारे स्वतंत्रता सैनानियों ने अंग्रेजी राज का सूर्य अस्त किया था। हमने जेल के ऊपर रोशनी देखी, जो तिरंगे के प्रेरणादायक रंगों से जगमगा रही थी। यह नजारा बेहद खूबसूरत व मन को प्रफुल्लित करनेवाला था।

इसके बाद हम लोग वापस होटल पहुँचे और भोजन के बाद रात्रि विश्राम किया। अगली सुबह सात बजे ही हम स्वराज द्वीप के लिए निकले। होटल स्टाफ ने हमारा नाश्ता पैक कर दिया था, हम सभी होटल स्टाफ का धन्यवाद कर बस में बैठ स्वराज द्वीप की यात्रा पर निकल पड़े। यहाँ हम पानी के जहाज में पहुँचे, जोकि बहुत बड़ा व सुंदर था। जहाज पर हमने पूरे ग्रुप की फोटो खींची। यह जहाज ऊपर व नीचे दो भागों में बँटा हुआ था। हमारी सीट ऊपरवाले भाग में थी। हम सीटों पर बैठे ही थे कि जहाज अपने गंतव्य की ओर बहने लगा। जहाज में एक बड़ी-सी टीवी स्क्रीन लगी थी, जिस पर हिंदी व तमिल भाषा के गाने बज रहे थे। थोड़ी ही देर में हम स्वराज द्वीप पहुँच गए। ताऊजी ने सबसे पूछा कि स्कूबा डाइविंग किस-किसको करनी है? मुझे समंदर के अंदर जाने से डर लग रहा था, इसलिए मैंने मना किया, पर ताऊजी ने समझाया कि हमें कुछ नया करने से कभी घबराना नहीं चाहिए। ऐसा मौका बार-बार नहीं मिलता। तब मैं मान गई।

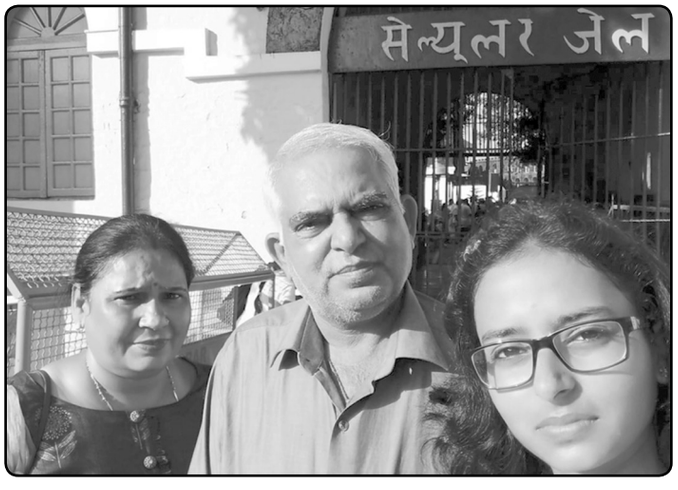

हमारे ग्रुप में से मैं, इंद्रजीत भैया, नेहा दीदी और ताऊ-ताईजी स्कूबा डाइविंग के लिए गए। बाकी सदस्य रिसोर्ट में चले गए। हम स्कूबा डाइविंग सेंटर आ पहुँचे, उन्होंने हमारे स्वास्थ्य के बारे में पूछाताछ की कि किसी को कोई गंभीर समस्या तो नहीं या ऑपरेशन तो नहीं हुआ। हमसे एक फॉर्म भरवाया गया। इसके बाद उन्होंने मुझे और इंद्रजीत भैया को सलेक्ट कर लिया। नेहा दीदी को कुछ समस्या होने के कारण ट्रेनर ने मना कर दिया और ताईजी का हाल ही में ऑपरेशन हुआ था, इसलिए वे भी अनफिट हो गईं। नेहा दीदी तो बहुत निराश हो गई। हमें पहनने के लिए विशेष पोशाक, ऑक्सीजन सिलेंडर और चश्मे दिए गए। ट्रेनर ने कुछ साइन (चिह्न) दिखाकर हमें समझाया, ताकि हम पानी के अंदर बात कर सकें। ट्रेनर ने हमें इस प्रकार पकड़ा, जैसे बचपन में बच्चे को चलना सिखाने के लिए बड़े लोग पकड़ते हैं। पलभर में हम समुद्र की गहराई में उतरते चले गए। पता ही नहीं चला कि कब हम समंदर के ६५ फीट नीचे पहुँच गए। पानी के नीचे की दुनिया अद्‌भुत थी। हमें कुछ भी छूने को मना किया गया था। हमने बहुत सारी मछलियाँ देखीं, जिनमें 'नीमो' नामक मछली भी थी, जिसके ऊपर एक फिल्म भी बनी है।

वे अद्‌भुत दृश्य मेरे दिमाग में छप से गए। थोड़ी देर बाद हम पानी से ऊपर आ गए। यह सब एक सपने जैसा था। अब पानी को लेकर मेरा डर भी लगभग समाप्त हो चुका था। मैंने समुद्री दुनिया को करीब से जाना और अनुभव किया। हमने कपड़े बदले और रिसोर्ट की ओर चल दिए। रास्ते में मैं सभी को अपने अनुभव बताती रही। हम लोगों ने खाना खाया और थोड़ी देर बाद ही एलीफेंट आइलैंड के लिए निकल गए। हमने बीच पर खूब मस्ती की और वहाँ विभिन्न प्रकार के व्यंजनों का जायका लिया। उसके बाद मैंने जेट स्की भी की, जिसका अनुभव भी बहुत शानदार रहा। ग्रुप के बाकी सदस्यों ने शीशे वाली नाव से समुद्री जीवन के दर्शन किए। इसके बाद हम सभी 'राधा द्वीप' पहुँचे। यहाँ पर सैलानियों की काफी भीड़ थी, जिसमें काफी विदेशी भी थे। हमने काफी देर तक समुद्र-स्नान किया और शाम के समय ऊँची उठती लहरों के साथ खूब कबड्डी खेली। समंदर में ढलते सूरज को देखना मन को बड़ा ही सुकून देनेवाला था। इस अद्‌भुत नजारे से एक अलग ही शांति का अनुभव हुआ। थोड़ी देर बाद हम रिसोर्ट की ओर लौट पड़े। आज का दिन काफी व्यस्त व थका देनेवाला था, सो सभी ने भोजन किया और नींद के आगोश में चले गए।

अगली सुबह हमें पोर्टब्लेयर के लिए निकलना था। हम सभी बस में बैठ शिप पोर्ट के लिए निकल गए। हम सभी जाकर पंक्ति में लगे ही थे कि अचानक हमारे ग्रुप की निशा आंटी को याद आया कि उनके कान्हाजी तो रिसोर्ट में ही रह गए। सभी चिंतित हो गए और आंटी तो जोर-जोर से रोने लगीं। उस समय मैंने देखा कि भक्त अपने भगवान के वियोग में किस प्रकार तड़पता है। उनके आँसू थम ही नहीं रहे थे। निशा आंटी की हालत देखकर सभी की आँखें सजल हो गईं। इंद्रजीत भैया तुरंत गाड़ी पकड़कर रिसोर्ट गए और कान्हाजी को लेकर आए। अपने कान्हाजी को पाकर निशा आंटी की खुशी बेहिसाब थी। आंटी कान्हाजी को अपनी गोद में लेकर जी-भरकर प्यार-दुलार कर रही थीं और अपनी भूल के लिए प्रभु से बारंबार माफी भी माँग रही थीं।

हम जहाज में बैठे और थोड़ी देर में पोर्टब्लेयर पहुँच गए। हम सभी होटल पहुँचे और रिसेप्शन पर से अपनी चाबी लेकर अपने कमरे की तरफ चल पड़े। हम सभी के कमरे दूसरी मंजिल पर थे। इसी दौरान एक दिलचस्प घटना हुई। हम सभी अपने-अपने कमरे में पहुँचे ही थे कि हल्ला मचने लगा हमारे ग्रुप की एक सदस्या विमला आंटी

अपने कमरे में नहीं पहुँचीं थी। हम सभी उनको होटल के कमरों में ढूँढ़ने लगे। दूसरी मंजिल के सभी कमरे चैक कर लिये, पर आंटी नहीं मिलीं, तब हमने पहली मंजिल के कमरों को चैक करना शुरू किया तो पाया, एक कमरे में विमला आंटी तो घोड़े बेचकर सोई हुई थीं। हमने उन्हें उठाया और बताया कि यह उनका कमरा नहीं है। इस घटना पर हम सभी खूब हँसे। उनके इस भोलेपन ने सबका खूब मनोरंजन किया। यकीन नहीं होता कि आज भी दुनिया में इतने भोले व सीधे लोग हैं। हमने दोपहर का खाना खाया और एशिया की सबसे बड़ी आरा मिल देखने के लिए चल पड़े।

मैंने वहाँ देखा कि लकड़ियों को किस प्रकार काटा जाता है और कैसे उन्हें स्टोर करते हैं। पूरी मिल लकड़ी से ही बनी है और एक बड़े क्षेत्र में फैली है। अब हम उस स्थान पर पहुँचे, जहाँ विगत वर्ष ही प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदीजी द्वारा १५० फुट ऊँचा तिरंगा फहराया गया था। नेताजी सुभाष चंद्र बोस की स्मृति में डाक टिकट जारी करके एक स्मारक भी बनवाया गया है। तिरंगे को ऊँचा लहराता देख हमेशा ही सुखद लगता है और देश की आन-बान-शान के गौरव का अनुभव होता है। अब हम वहाँ बने एक सुंदर से पार्क में पहुँचे।

शाम को हम सभी बाजार में खरीददारी करने एक हैंडलूम दुकान पर पहुँचे। सभी ने कुछ-न-कुछ खरीदा। अब कुछ खाने का मन हो रहा था। वहाँ के विशेष व्यंजनों में इडली-साँभर, डोसा, वड़ा के अलावा अनेक तरह के मांसाहारी व्यंजन थे। हम सब ठहरे शाकाहारी, सो सभी ने अपनी-अपनी रुचिनुसार खाया। वहाँ पर गोलगप्पे का ठेला देखते ही हम दिल्लीवालों के मुँह में पानी आ गया। गोलगप्पे हम सभी के पसंदीदा हैं तो भला हम उन्हें खाने से कैसे चूक जाते; हालाँकि हम सब भोजन कर चुके थे, फिर भी सभी ने गोलगप्पों का स्वाद लिया। तदुपरांत हम सभी होटल पहुँचे, भोजन के बाद रात्रि विश्राम किया। यहीं से अगली सुबह हमें कोलकाता के लिए निकलना था। हमारी फ्लाइट सुबह नौ बजे की थी। प्रात: हम एयरपोर्ट पहुँचे, जहाँ से कोलकाता के लिए उड़ान भरी। रास्ते भर मैं अंडमान-निकोबार की सुखद यादों में खोई रही। सच में तो मेरा वहाँ से आने का मन ही नहीं था। वहाँ की जलवायु, वहाँ का वातावरण और सबसे बढ़कर स्वतंत्रता सैनानियों की गौरवान्वित करनेवाली स्मृतियाँ, काफी कुछ ऐसा है, जो किसी का भी मन मोह ले।

हम डेढ़ घंटे में कोलकाता आ पहुँचे। यहाँ से दिल्ली के लिए चार घंटे के बाद की फ्लाइट थी, इसलिए मैंने ताऊजी से कहा कि जितना हो सके, हमें कोलकाता ही घुमा दें। मुझे पता था कि ताऊजी अकसर कोलकाता आते रहते हैं और उनका यहाँ अच्छा संपर्क है। ताऊजी अपनी लाड़ली बिटिया की बात कहाँ टालनेवाले थे, सो उन्होंने तुरंत कोलकाता में अपने मित्र डॉ. समरजीत जैनाजी से संपर्क किया। उन्होंने भी आनन-फानन में हमारे लिए हवाई अड्डे पर ही दो गाड़ियाँ भिजवा दीं, जिनमें बैठकर हम कोलकाता की सैर करने निकल पड़े। सबसे पहले विश्वविख्यात काली मंदिर (दक्षिणेश्वर) पहुँचे, परंतु दुर्भाग्यवश मंदिर बंद हो चुका था। हमने हुगली नदी के दर्शन किए और ताऊजी ने एक कुशल गाइड की भूमिका निभाते हुए हमें मंदिर के इतिहास एवं महत्त्व के बारे में बताया। स्वामी विवेकानंद की तपस्थली बेलूर मठ के दर्शन कराए, जो कि नदी के दूसरे छोर पर स्थित है।

अब हम कोलकाता की एक प्रसिद्ध मिठाई की दुकान पर आ पहुँचे। जहाँ हमने बंगाल के मशहूर रसगुल्ला, जिसे बंगालवाले 'रसोगुल्ला' कहते हैं और संदेस जैसी मिठाइयाँ खाईं तथा रसगुल्ले घर के लिए पैक करा लिए। अब हमारा एयरपोर्ट जाने का समय भी हो गया तो हम एयरपोर्ट की ओर चल दिए। दिल्ली पहुँचने से पहले यह हमारी यात्रा का अंतिम पड़ाव था, सो मैंने बंगाल की वीरभूमि को नमन कर हवाई जहाज में प्रवेश किया। हम रात बारह बजे दिल्ली एयरपोर्ट पर उतर गए। यहाँ से सभी अपने-अपने घर के लिए निकले। मैं पहले सभी से अनजान थी, पर अब यह भी एक परिवार सा बन गया था, तो बिछुड़ने पर दु:ख हो रहा था। कहते हैं न कि मिलना और बिछुड़ना संसार का नियम है, सो सभी अपने-अपने घरों की ओर चल दिए। हमने भी टैक्सी ली और अपने घर आ गए। यह यात्रा मेरे लिए इस कारण भी अनोखी थी, क्योंकि इसमें मैंने एक साथ जल-थल और नभ, तीनों यात्राओं का लुत्फ उठाया।

इस यात्रा के दौरान मैंने महसूस किया कि यदि हम प्रकृति को माँ मानकर उसके करीब जाएँ तो वह न सिर्फ हमें अपनाती है, अपितु एक माँ की तरह बहुत स्नेह देती है। वैसे तो मैं पहले से ही स्वयं को प्रकृति के निकट महसूस करती थी, पर यात्रा से लौटकर मेरा और प्रकृति माँ का रिश्ता और भी गहरा हो गया है। मेरा मानना है कि जैसे हम अपनी जननी और जन्मभूमि का कर्ज नहीं चुका सकते, वैसे ही प्रकृति माँ का कर्ज भी नहीं चुका सकते। क्योंकि उनकी हम पर कृपा अनमोल और अनंत है। प्रकृति पूजा हम भारतीयों की संस्कृति और संस्कारों में है।

मैं निवेदन करना चाहती हूँ, समय और सुविधा हो तो जीवन में एक बार अंडमान-निकोबार जरूर जाएँ और प्रकृति के अद्‌भुत चमत्कारों का आनंद लें एवं उन क्रांतिकारियों की स्मृतियों का साक्षात् अनुभव करें, जिनके बलिदानों के कारण हम सब हिंदुस्तानी आज आजादी की खुली हवा में श्वास ले रहे हैं।

२७९, पॉकेट-९, सेक्टर-२१, रोहिणी
दिल्ली-११००८६
दूरभाष : ९६२५६४५२४९

माहिया छंद

● नरेश शांडिल्य

जैसा कि हमने सूचित किया था कि हम कविता की एक विधा से पाठकों को परिचित करवाएँ। इस अंक में 'माहिया' पर यह सामग्री प्रकाशित कर रहे हैं। अधिकतम पाँच 'माहिया' हमें विचारार्थ भेज सकते हैं।

समकालीन हिंदी दोहा लेखन में 'दोहों के आधुनिक कबीर' के रूप में विख्यात और लोकप्रिय नरेश शांडिल्य एक प्रतिष्ठित कवि, दोहाकार, शायर, नुक्कड़ नाट्य कर्मी और संपादक के रूप जाने जाते हैं। पहले ही कविता संग्रह पर हिंदी अकादमी , दिल्ली सरकार का साहित्यिक कृति सम्मान प्राप्त। वातायन (लंदन) का अंतरराष्ट्रीय कविता सम्मान कविता का प्रतिष्ठित 'परंपरा ऋतुराज सम्मान' प्राप्त। त्रैमासिक पत्रिका 'अक्षरम संगोष्ठी' का १२ वर्षों तक कुशल संपादन।

माहिया मूलत: पंजाब का अति मनभावन छंद है। इसमें तीन चरण या तीन पंक्तियाँ होती हैं। पंजाबी लोकगीतों में इसका बखूबी प्रयोग हुआ है। बहुत से हिंदी फिल्मी गीत भी इस विशेष छंद में लिखे और गाए गए हैं, हालाँकि इनमें छंदों की शास्त्रीयता कई जगह भंग हुई है, फिर भी फिल्म फागुन और नया दौर के महिया-गीत खूब लोकप्रिय हुए। माहिया की गेयता देखते ही बनती है। इसकी गेयता अगर बाधित होती है तो समझिए छंद में कोई न कोई दोष रह गया है। इसके प्रत्येक चरण का प्रारंभ और अंत उच्चारण के अनुसार गुरु (२) से ही होता है और पहली और तीसरी पंक्ति तुकांत होती हैं।

इसे दो तरह से लिखा जा सकता है—

१. मात्रिक (हिंदी छंदशास्त्र के अनुसार)

२. बह्र आधारित (उर्दू छंदशास्त्र के अनुसार)

मात्रिक माहिया लिखेंगे तो १२-१०-१२, यानी लघु (१) और गुरु (२) मिलाकर, पहली पंक्ति में १२ मात्राएँ, दूसरी में १० और तीसरी में पहली के अनुसार ही १२ मात्राएँ। इसमें एक शर्त यह भी है कि मात्रा को गिरा कर नहीं पढ़ सकते, जैसा कि गजल छंदशास्त्र के हिसाब से लिखते वक्त किया जा सकता है।

उदाहरण—

२२	२२	२२	(१२)
पैसा	पैसा	पैसा	
२१	१२	२२	(१०)
खेल	दिखाए	रे	
२२	२२	२२	(१२)
कैसा	कैसा	कैसा	

उर्दू छंदशास्त्र पर आधारित माहिया लिखेंगे तो इसकी बह्र उच्चारण के हिसाब से इस प्रकार होगी—

२२	११२	२२
२	११२	२२
२२	११२	२२

लेकिन हर लिहाज से पहली पंक्ति का मात्राभार १२ दूसरी पंक्ति का मात्राभार १० और तीसरी पंक्ति का मात्राभार १२ ही रहेगा।

विशेष शर्त यह है कि इसमें हर पंक्ति में विशेष स्थान पर दो स्वतंत्र उच्चारण वाले लघु (१,१) आने अनिवार्य हैं। गजल शास्त्र के अनुसार यहाँ शब्दों को गिराकर पढ़ने का भी प्रावधान है, अत: उसी प्रकार से इन्हें लिखा जा सकता है। इसमें काफिए और रदीफ का इस्तेमाल भी गजल शास्त्र के अनुसार ही किया जाएगा।

उदाहरण—

२	२	१	१ २	२२
क्या	क्या	न	कहो	कहती
२ १	१ २ २	२		
पीर	पहाड़ों	की		
२	२	१ १ २	२	२
जब	हो	के	नदी	बहती

*यहाँ 'के' को गिराकर पढ़ा जाएगा, इस प्रकार ये गुरु (२) की जगह लघु (१) गिना जाएगा।

उदाहरण स्वरूप मेरे कुछ अन्य माहिये बानगी के रूप में देखें—

मात्रिक महिये

मैं हारा या जीता
मैंने ख़ुद लिक्खी
अपनी जीवन गीता

खुल जा सिमसिम सिमसिम
कब तक बरसेगा
रिमझिम रिमझिम रिमझिम

बह्र आधारित महिये

हर हाथ में कासा है
औरों की छोड़ो जी
सागर भी तो प्यासा है

ये आँख का पानी है
कौन कहो इसका
इस दुनिया में सानी है

मुझको भी कबीरा कर
अदना सा पत्थर हूँ
ले मुझको भी हीरा कर

ये प्यार है इक अजगर
बचना है नामुमकिन
जब जकड़े है ये कसकर

दूरभाष : ९८६८४०३५६५
nareshshandilya007@gmail.com

गांधीजी का चश्मा

• विजय कुमार

चश्मा शब्द मूलत: किस भाषा का है, इस पर विद्वानों की अलग-अलग राय हैं। कुछ इसे उर्दू का कहते हैं, तो कुछ संस्कृत मार्ग पर चलते हुए चक्षु और चक्षमा से चश्मा तक पहुँचते हैं; पर आज तो गांधीजी के सौ साल पुराने चश्मे की चर्चा सब ओर हो रही है, जिसके बारे में सुना है कि वह ढाई करोड़ रुपए में बिक गया। ब्रिस्टल की एक नीलामी एजेंसी ने उसे एक अमरीकी नागरिक को बेचा। एजेंसी ने बताया कि चश्मा जिसके पास था, वह उसे बिक्री वाले डिब्बे में डाल गया था। इसके बिकने से उसकी किस्मत का छप्पर तो फटा, साथ में पूरा मकान भी ढह गया। यह उलटबासी समझाने के लिए शायद कबीरदासजी को ही आना होगा। क्योंकि उन्होंने ही 'नाव में नदिया डूबी जाए' वाली बात कही थी।

जहाँ तक चश्मे की बात है, उसका हर किसी के लिए महत्त्व है। डॉक्टर लोग कहते हैं कि चालीस साल का होने पर व्यक्ति को अपनी आँखें जरूर दिखा देनी चाहिए। आप मुझे गलत न समझें। इसका अर्थ डॉक्टर के पास जाकर आँखों की जाँच कराना है। हर चीज के काम करने की एक समय सीमा होती है। साइकिल से लेकर मोटर साइकिल तक और मोबाइल से लेकर कंप्यूटर तक, सबको जाँच और मरम्मत चाहिए। ऐसे ही चालीस साल तक काम करने के बाद आँखों को भी सर्विस की जरूरत हो जाती है। इसलिए पहले जाँच और फिर डॉक्टर की सलाह के अनुसार दवा और चश्मा। अब तो सुना है लोग अपने पालतू पशुओं के लिए भी चश्मे बनवाने लगे हैं। क्या कहें, कलियुग है साहब। न जाने अभी क्या-क्या देखना पड़ेगा।

मैं भी पिछले २०-२२ साल से चश्मा लगा रहा हूँ। साल में दो बार जाँच भी कराता हूँ। अपने काम के सिलसिले में मैं कई जगह रहा। वहाँ आँखों के डॉक्टर के पास भी जाना ही पड़ता था। मेरा पाला अच्छे और कम अच्छे, दोनों तरह के डॉक्टरों से पड़ा है। अच्छे डॉक्टर मरीज का अधिक ध्यान रखते हैं, जबकि कम अच्छे डॉक्टरों की निगाह मरीज की आँख के साथ उनकी जेब पर भी रहती है।

छात्र जीवन से ही लेखन-संपादन एवं सामाजिक कार्यों में रुचि। सहायक संपादक राष्ट्रधर्म (मासिक) लखनऊ। छोटी-बड़ी ९५ पुस्तकें प्रकाशित। ६०० से अधिक लेख, व्यंग्य, निबंध, कहानी आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओं तथा अंतरजाल पर प्रकाशित। साहित्य की अनेक विधाओं में नियमित लेखन।

चश्मे से मुझे अपने बाबाजी के चश्मे की याद आती है। उन्हें स्वर्गवासी हुए लंबा समय हो गया। वे अपने चश्मे को चालीस साल पुराना बताते थे। यद्यपि कई बार उसका फ्रेम बदला और कई बार शीशे; पर चश्मा चालीस साल पुराना ही रहा। प्राय: उसकी मरम्मत के लिए उनके साथ मैं ही जाता था। यह बड़ा दुर्भाग्य है कि उनके निधन के बाद उनका सामान फेंक दिया गया। वरना वह चश्मा आज कम से कम ८० साल का तो होता ही। यदि गांधीजी का सौ साल पुराना चश्मा ढाई करोड़ में बिक सकता है, तो बाबाजी के प्राचीन चश्मे के भी ढाई हजार रुपए तो मिल ही जाते; पर हम नासमझ थे, जो उसे फेंक दिया।

पर अब मैं सावधान हो गया हूँ। मैंने अपनी वसीयत में लिख दिया है कि मेरे जाने के बाद मेरा चश्मा बिल्कुल न फेंकें। कई बार इनसान की कीमत उसके जाने के बाद ही पता लगती है। गांधीजी खुद इसके प्रमाण हैं। ऐसे ही मेरे आज के साहित्य पर भले ही लोग ध्यान न दें; पर मुझे विश्वास है कि मेरे जाने के बाद उसे नोबेल या बुकर पुरस्कार के योग्य अवश्य समझा जाएगा। तब लोग मेरा सामान अपने घर में रखना गर्व की बात समझेंगे। हो सकता है, तब मेरे चश्मे के दिन भी बहुर जाएँ।

जो पाठक और साहित्य-प्रेमी मेरा चश्मा खरीदने के इच्छुक हों, वे अभी से नाम लिखा दें। फिर न कहना कि हमें खबर नहीं मिली।

सुदर्शन कुंज, सुमन नगर,
धर्मपुर, देहरादून-२४८००१
vj.kumar.1956@gmail.com

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का 'रजत जयंती विशेषांक' मिला। पच्चीस वर्ष के जीवन पर इतना बड़ा तथा इतना भव्य तथा इतनी विपुल सामग्रीवाला विशेषांक निकालकर साहितय अमृत ने तो एक इतिहास रच दिया है। संपादकीय आपने हिंदी के प्रति गहरी चिंता व्यक्त करके अपनी हिंदी निष्ठा का परिचय ही नहीं दिया है, बल्कि उसकी शक्ति और संभावनाओं को भी स्पष्ट कर दिया है। हिंदी का विस्तार हो रहा है परंतु उसे ज्ञान-विज्ञान तथा उच्च शिक्षा का माध्यम बनाकर ही वह अंग्रेजी की विकल्प हो सकती है। इस पठनीय तथा विपुल सामग्रीवाले अंक का सर्वत्र स्वागत होना चाहिए।

—कमल किशोर गोयनका, दिल्ली

नियमित रूप से नियत समय पर प्रकाशित होनेवाली प्रभात प्रकाशन की पत्रिका 'साहित्य अमृत' ने इस वर्ष २५ वर्ष की यात्रा पूरी की है। इसी उपलक्ष्य में इसका रजत जयंती विशेषांक प्रकाशित हुआ है। जो बाहर-भीतर दोनों रूपों में अत्यंत आकर्षक है। २५ वर्षीय यात्रा में 'साहित्य अमृत' के अनेक प्रभावशाली विशेषांक प्रकाशित हुए हैं। रजत जयंती विशेषांक इसी शृंखला की नवीनतम कड़ी है। इस प्रभावशाली विशेषांक में विख्यात, ख्यात, कम ख्यात, यानी सभी श्रेणी के रचनाकारों की अच्छी रचनाएँ दीप्त हो रही हैं। सबकी अपनी-अपनी छवियाँ हैं। कई दिवंगत यशस्वी रचनाकारों की भी रचना आभा फैली हुई है। संपादकों ने कविताओं, कहानियों तथा अन्य विधाओं की रचनाओं का चयन बहुत विवेकपूर्वक किया है। उन्हें तथा प्रभात प्रकाशन को मेरी हार्दिक बधाई। निश्चय ही यह विशेषांक पाठकों को अनेक सुंदर रचनाओं के लोक में ले जाएगा।

—रामदरश मिश्र, दिल्ली

'साहित्य अमृत' का रजत जयंती विशेषांक एक साहित्यिक धरोहर है। आज जब हिंदी में साहित्यक पत्र-पत्रिकाओं का प्रचलन पठन, प्रकाशन लगभग समाप्त हो रहा है, 'साहित्य अमृत' ने नया कीर्तिमान स्थापित किया है। यह मेरा सौभाग्य है कि मैं प्रथम अंक से 'साहित्य अमृत' का पाठक हूँ। मुझे आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है, 'साहित्य अमृत' इसी तरह साहित्य की अग्रणी पत्रिका के रूप में समाज-साहित्य की सेवा करती रहेगी। हार्दिक शुभकामनाएँ।

—डॉ. अनिल चतुर्वेदी, दिल्ली

इंग्लिश के अनुरूप है
लिटरेचर विकलांग।
हितकारी साहित्य है
सक्षम सांगोपांग॥

अमृतमय साहित्य की
महिमा को पहचान।
सुधी सुजन करते रहें
'साहित्यामृत' पान॥

—आचार्य स्वामी श्रीधर्मेंद्र महाराज, जयपुर (राज.)

साहित्य सभ्य समाज की आवश्यकता तो है, लेकिन एक तरफ जहाँ साहित्य को आधुनिक काल के साहित्यकारों के एक बड़े वर्ग ने दूषित करने का प्रयास किया है वहीं आज का व्यवसायिक युग साहित्य को अप्रासंगिक करने में प्रयासरत है। ऐसे भ्रमित काल में भी साहित्य के अमृत को समाज में परोसते रहना सामान्य कार्य नहीं। इस कार्य का निर्वहन प्रभात प्रकाशन ने पूरी जिम्मेवारी के साथ किया है, वो भी पिछले पच्चीस वर्षों से, निरंतर। प्रताभ प्रकाशन की पत्रिका 'साहित्य अमृत' की अपनी पहचान है। यह उनके रजत जयंती विशेषांक में प्रमाणित भी हो रहा है। इस विशेषांक में अनेक महत्त्वपूर्ण साहित्यकारों की रचनाएँ हैं। फणीश्वरनाथ रेणु, विष्णु प्रभाकर, श्रीलाल शुक्ल, विद्यानिवास मिश्र से लेकर मनोहर श्याम जोशी, मृदुला सिन्हा, चित्रा मुद्गल आदि महान रचनाकारों के बीच 'मैं आर्यपुत्र हूँ' के मित्रों! ज्ञानवर्धन के लिए इस विशेषांक (पत्रिका) को आप भी अवश्य पढ़ें।

—मनोज सिंह, चंडीगढ़

कोरोना महामारी के चलते लंबे लॉकडाउन के बाद 'साहित्य अमृत' का भारी-भरकम 'रजत जयंती विशेषांक' देख मन गद्गद हो गया। अपनी उज्ज्वल परंपरा का निर्वहन करते हुए साहित्य अमृत ने फिर एक कमाल कर दिखाया है। जहाँ एक ओर कोरोना की मार से कई सारी पत्र-पत्रिकाएँ ढेर हो गई हैं; वहीं साहित्य अमृत अपने और भी तेजस्वी रूप में हम पाठकों के सामने आई है। 'साहित्य अमृत' ने शानदार उपलब्धियों के साथ पच्चीस वर्ष की आयु प्राप्त कर ली है। पत्रिका अपने जन्मकाल से हम साहित्य-रसिकों को साहित्य रूपी अमृत का पान कराती आ रही है। साहित्य अमृत के पूर्ववर्ती संपादकों ने समय-समय पर तथा विशेष अवसरों पर 'शानदार विशेषांकों' की शृंखला में कुछ-न-कुछ नया जरूर जोड़ा। कितने ही ऐसे लेखक, कवि हैं, जो साहित्य अमृत में एक बार प्रकाशित हुए तो उन्हें अन्य पत्रिकाएँ भी स्थान देने लगीं। उन्हें स्थापित साहित्यकार माना गया, जबकि पूर्व में अन्य कई जानी-मानी पत्रिकाएँ उन्हें छापने से परहेज करती रहीं। इस विशेषांक का मुखपृष्ठ ही बड़ा चित्ताकर्षक है और साहित्य अमृत की अबाध यात्रा का दिग्दर्शन करा रहा है। बहुत सारे पुराने और स्थापित लेखकों की रचनाएँ पढ़कर बहुत सुखद अहसास हुआ। सभी रचनाकारों को बड़ी शिद्दत से याद किया गया है। ऐसा काम साहित्य अमृत ही कर सकती है। इस अंक में प्रकाशित किस-किस रचना के बारे में लिखूँ, सभी रचनाएँ उत्कृष्ट, पठन-रस से भरपूर एवं ज्ञानवर्द्धक हैं। आद्योपांत एक से बढ़कर एक रचनाएँ पढ़कर मन आनंदित हो गया। लंबे लॉकडाउन की कसर पूरी हो गई। कुछ सामग्री तो ऐसी है, जिसे पुनः-पुनः पढ़ने का मन करता है। एक शानदार विशेषांक के लिए साहित्य अमृत परिवार एवं संपादक मंडल को बहुत-बहुत शभकामनाएँ।

—आनंद शर्मा, प्रेमनगर, दिल्ली

वर्ग पहेली (१७७)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३० सितंबर, २०२० तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते नवंबर २०२० अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१७५) का शुद्ध हल

१ र	२ का	३ ब	■	४ ना	मु	५ म	६ कि	७ न
८ ज	ल	द	■	बा	■	९ क	ता	र
१० त	र	स	■	११ लि	१२ ब	ड़ी	■	ना
■	■	१३ लू	१४ ल	ग	ना	■	१५ ला	ह
१६ त	१७ र	की	ब	■	१८ व	१९ न	च	र
२० द	स	■	२१ ल	पे	१७ ट	न		
नु	■	२३ स	बी	ल	■	२४ का	२५ मु	२६ क
२७ सा	२८ ज	न	■	वा	■	२९ र	ज	नी
३० र	ग	द	ब	ना	■	३१ ना	रा	ज

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री ब्रह्मानंद खिच्ची**
गाँव-डाक : बसई
जिला-महेंद्रगढ़-१२३०२८ (हरि.)
दूरभाष : ९४१६३७०२२४

२. **श्री मोहन जगदाले**
९७-ए, वृंदावन धाम
निकट महामृत्युंजय द्वार
उज्जैन-४५६००१ (म.प्र.)
दूरभाष : ७०२४५-२४०७५

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली १७४ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री दिनकर सहल (नई दिल्ली), विजयपाल सहेलंगिया (सेहलंग), नीरजा शर्मा (अहमदाबाद), रघुपति द्विवेदी (गोरखपुर), रमापति मिश्र (कानपुर), भूप सिंह (हरिद्वार), आनंद शर्मा (दिल्ली), भवानी सिंह (अलवर), सुखदेव राज (बरनाला), पवन शर्मा (रोहतक), दीपेश कुमार (कटनी), सुरेश उत्प्रेती (अल्मोड़ा), महावीर चौरसिया (जबलपुर), दुर्गेश दत्त (गुरुग्राम)।

बाएँ से दाएँ—

१. नर कबूतर (३)
३. समरूप, सदृश, जो एक सिरे से दूसरे सिरे तक बराबर समान अंतर पर रहें (५)
७. वह जिसे किसी निर्वाचन में अपना मत देने का अधिकार हो (४)
९. जिसकी स्तुति की गई हो (२)
१०. मार्ग पर चलनेवाला (४)
१२. एक जाति जो पानी भरने का काम करती है; कहार (३)
१४. आज से एक दिन पहलेवाला दिन (२)
१५. स्थान-स्थान पर (३,३)
१९. आश्रयदाता के प्रति किया जानेवाला छलपूर्ण कार्य; कृतघ्नता (३,३)
२३. एक ही माँ-बाप का पुत्र (२)
२४. छोटा कण (३)
२५. एक फल जो स्वाद में खट्टा होता है और इसकी चटनी, अचार आदि बनाया जाता है (४)
२७. पुआल, फूस, भूसा (२)
२८. बल बढ़ाने के उद्देश्य से किया जानेवाला शारीरिक श्रम (४)
३०. उसे उपरांत, उसके पीछे या बाद (५)
३१. नेता (३)

ऊपर से नीचे—

१. नाटक आदि के दौरान बोला जानेवाला संवाद; बातचीत, संवाद (६)
२. पदक, मेडल (३)
३. हमेशा (२)
४. माँ के पिता, नाना (४)
५. केसर, कस्तूरी, चंदन, कपूर आदि को मिलाकर बनाया हुआ उबटन (२,२)
६. मनोयोग से लगा हुआ, आसक्त (२)
८. अदब, शिष्टाचार (३)
११. जलरहित भूमि (२)
१३. पाचन क्रिया (३)
१६. जिसकी थाह बहुत नीचे हो, गंभीर (३)
१७. अफावाह (३, ३)
१८. चिह्न लगाया (३)
२०. प्रयोजन (४)
२१. सच्चाई (४)
२२. छल-कपट, मगर या घड़ियाल (३)
२३. बोझा (२)
२६. अबकाई, वमन (३)
२७. दाँवपेंच (२)
२९. बाण, तालाब (२)

वर्ग पहेली (१७७)

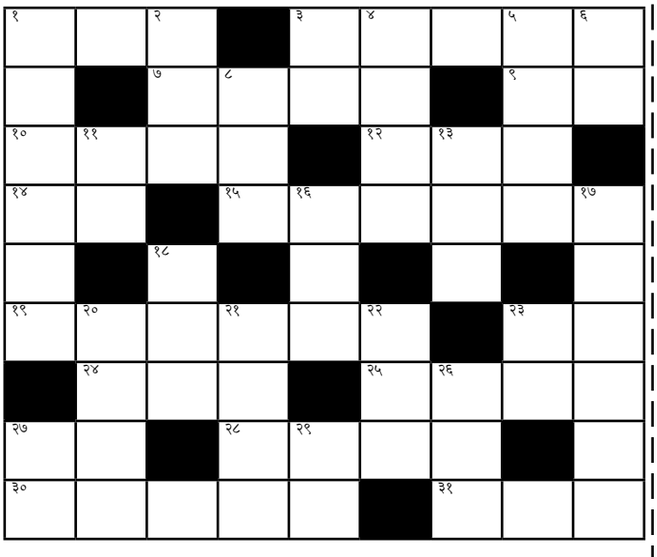

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

वर्ग पहेली (१७६) का हल अगले अंक में।

साहित्यिक गतिविधियाँ

हिंदी दिवस पर वेबिनार संपन्न

विगत दिनों दिल्ली के हिंदू कॉलेज में आयोजित साहित्य सभा में कवि श्री नरेश सक्सेना ने मुक्तिबोध की कविता 'कृष्ण विवर' की चर्चा की जो ब्लैक हॉल पर लिखी गई थी। इसमें उन्होंने नागार्जुन की कविता 'अकाल और उसके बाद', शमशेर बहादुर सिंह की कविता 'उषा', विनोद कुमार शुक्ल की कविता 'हताशा से एक व्यक्ति बैठ गया था' में गीति तत्त्व की उपस्थिति और महत्त्व की नवोन्मेषी व्याख्या की। व्याख्यान के बाद सक्सेना और विद्यार्थियों के बीच संवाद सत्र हुआ, जिसका संयोजन साहित्य सभा के संयोजक श्री हर्ष उरमलिया ने किया। डॉ. पल्लव ने शैक्षणिक सत्र २०२०-२१ के लिए गठित हिंदी साहित्य सभा की कार्यकारिणी की घोषणा की। आभार श्री प्रखर दीक्षित ने व्यक्त किया। वेबिनार की समाप्ति अध्यापकों और विद्यार्थियों के विशेष आग्रह पर श्री नरेश सक्सेना के माउथ ऑर्गन वादन के साथ हुई। ☐

सम्मान समारोह संपन्न

१४ सितंबर को नई दिल्ली साहित्य अकादेमी में हिंदी दिवस के अवसर पर 'हिंदी सप्ताह' के कार्यक्रमों का शुभारंभ वर्चुअल स्क्रीन के द्वारा हुआ, जिसमें मुख्य अतिथि श्रीमती मृदुला गर्ग ने अपना वक्तव्य दिया। आगंतुकों का स्वागत करते हुए अकादेमी के सचिव श्री के. श्रीनिवासराव ने अपने विचार रखे तथा भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय के सचिव श्री आनंद कुमार की अपील का पाठ भी किया। साहित्य अकादेमी के सभी क्षेत्रीय कार्यालयों में पूरे सप्ताह विभिन्न प्रतियोगिताएँ आयोजित की जाएँगी। ☐

हिंदी सेवी सम्मान समारोह आयोजित

१४ सितंबर को सागर के जे.जे. इंस्टीट्यूट सिविल लाइंस में हिंदी दिवस पर 'श्यामलम्' की व्याख्यानमाला और हिंदी सेवी सम्मान समारोह में कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री सुरेश आचार्य ने की। प्रमुख वक्ता श्री हरीसिंह गौर तथा श्री छबिल कुमार मेहेर ने अपने व्याख्यान दिए। श्री छबिल कुमार मेहर को 'श्यामलम् हिंदी सेवी सम्मान' के साथ अंगवस्त्र, श्रीफल, अभिनंदन-पत्र, स्मृति-चिह्न, पुष्पहार, पुस्तकें और सम्मान निधि भेंट की गई। श्री रमा कांत शास्त्री ने डॉ. मेहेर के जीवन परिचय और सम्मान पत्र का वाचन किया। संचालन श्री आशीष ज्योतिषी ने तथा आभार 'श्यामलम्' के कोषाध्यक्ष श्री हरी शुक्ला ने व्यक्त किया। ☐

कार्यक्रम संपन्न

विगत दिनों अपोलीबाग, प्रयागराज की बौद्धिक-वैचारिक संस्था 'सर्जनपीठ' द्वारा हिंदी-दिवस की पूर्व-संध्या पर 'हिंदी के मानकीकरण की समस्या' विषय पर एक आंतर्जालिक अंतरराष्ट्रीय बौद्धिक परिसंवाद का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री सोना झरिया मिंस, रहसबिहारी द्विवेदी, अंकिता जैन, रवींद्रनाथ महतो, पृथ्वीनाथ पांडेय, कृपाशंकर पांडेय, घनश्याम भारती, प्रदीप चित्रांशी, संगीता बलवंत, शिवप्रसाद शुक्ल, घनश्याम अवस्थी तथा आदित्य त्रिपाठी ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

काव्य संध्या आयोजित

१७ सितंबर को नई दिल्ली में राजभाषा हिंदी सप्ताह मनाए जाने के अवसर पर साहित्य अकादेमी में आभासी मंच पर एक हिंदी काव्य-संध्या का आयोजन हुआ, जिसमें सर्वश्री हरेराम समीप, विज्ञान व्रत, कमलेश भट्ट कमल एवं बी.एल. गौड़ ने अपने रचनाएँ प्रस्तुत कीं। मुख्य अतिथि श्री सुरेश ऋतुपर्ण थे; धन्यवाद श्री के. श्रीनिवासराव ने व्यक्त किया तथा संचालन श्री अनुपम तिवारी ने किया। ☐

'आँगन का शजर' लोकार्पित

विगत दिनों दिल्ली में 'जश्नेहिंद' के तत्त्वावधान में एक डिजिटल गोष्ठी में प्रसिद्ध गजलकार श्रीमती ममता किरण के गजल-संग्रह 'आँगन का शजर' का लोकार्पण हुआ, जिसमें लोकार्पण एवं चर्चा का संचालन करते हुए कवि आलोचक डॉ. ओम निश्चल ने श्रीमती ममता किरण की काव्ययात्रा पर प्रकाश डाला तथा गजलों के क्षेत्र में उनके योगदान की सराहना की। ममता किरण ने लोकार्पण के पूर्व 'आँगन का शजर' से कुछ चुनिंदा गजलें सुनाईं।

उर्दू के जाने-माने समालोचक एवं शायर प्रो. खालिद अल्वी ने कहा कि संग्रह में कुछ गजलें ममताजी ने गालिब की जमीन पर कही हैं तथा उनके यहाँ अपनेपन, संबंधों एवं यथार्थ से रूबरू गजलें हैं, जिससे हिंदी गजल में उन्होंने अपना स्थान और पुख्ता किया है। प्रो. खालिद अल्वी ने इन गजलों में हिंदुस्तानी जबान के बेहतरीन इस्तेमाल की सराहना की।

लंदन से बोलते हुए कथाकार श्री तेजेंद्र शर्मा ने कहा कि ममताजी अरसे से लिख रही हैं तथा गजलों में वे एक अरसे से काम कर रही हैं। उनकी शायरी में एक परिपक्वता नजर आती है। श्री माधव कौशिक ने कहा कि एक दौर था कि पत्र-पत्रिकाएँ गजलों के न छापने का ऐलान किया करती थीं किंतु आज सभी जगह गजलों की माँग है। डॉ. पुष्पा राही ने कहा कि ममता किरण की इन गजलों में ममता व आत्मीयता का निवास है। उन्होंने भारतीय जनजीवन में व्याप्त संबंधों, बेटे बेटियों व पारिवारिकता को गजलों में प्रश्रय दिया है। इन गजलों पर अपनी सम्मति व्यक्त करते हुए श्री बाल स्वरूप राही ने कहा कि ममता किरण ने अपने इस संग्रह से गजल की दुनिया में एक उम्मीद पैदा की है। लोकार्पण को संगीतमय बनाने के लिए ममता किरण की गजल को गायक एवं संगीतकार श्री आर.डी. कैले ने गाकर सुनाया। संचालन डॉ. ओम निश्चल ने किया व धन्यवाद ज्ञापन श्री मृदुला सतीश टंडन ने किया। ☐

साहित्यिक क्षति

श्रीमती कपिला वात्स्यायन नहीं रहीं

१६ सितंबर को कला-साहित्य-शिक्षा के क्षेत्रों में अप्रतिम योगदान देनेवाली विदुषी समाजधर्मी डॉ. कपिला वात्स्यायन का देहावसान हो गया।

साहित्य अमृत परिवार की ओर से
दिवंगत आत्माओं को भावभीनी श्रद्धांजलि।